फोनोग्राफ से स्टीरियो तक

वीरेन्द्र भटनागर

विभागीय सहयोग
राम दुलार शुक्ल

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

सितम्बर–1987
आश्विन-1909
P.D. 10T PM

प्रकाशन सहयोग

सी. एन. राव **अध्यक्ष, प्रकाशन विभाग**

सम्पादन	**उत्पादन**
: मुख्य संपादक ication.	डी० साई प्रसाद : **उत्पादन अधिकारी**
सहायक संपादक tion	चंद्र प्रकाश टंडन : **कला अधिकारी**
	रतीराम : **उत्पादन सहायक**

आवरण : शान्तो दत्त, करन कुमार चड्ढा
चित्रकार : बालकृष्ण

मूल्य : 10.35

प्रकाशन विभाग में, सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविन्द मार्ग, नई दिल्ली 110016 द्वारा प्रकाशित तथा कपूर आर्ट प्रेस, ए 38/3 मायापुरी इंडस्ट्रियल एरिया फेस I, नई दिल्ली 110064 द्वारा मुद्रित।

प्राक्कथन

विद्यालय शिक्षा के सभी स्तरों के लिए अच्छे शिक्षाक्रम, पाठ्यक्रमों और पाठ्यपुस्तकों के निर्माण की दिशा में हमारी परिषद् पिछले पच्चीस वर्षों से कार्य कर रही है। हमारे कार्य का प्रभाव भारत के सभी राज्यों और संघ-शासित प्रदेशों में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से पड़ा है और इस पर परिषद् के कार्यकर्ता संतोष का अनुभव कर सकते हैं।

किंतु हमने देखा है कि अच्छे पाठ्यक्रम और अच्छी पाठ्यपुस्तकों के बावजूद भी हमारे विद्यार्थियों की रुचि स्वतः पढ़ने की ओर अधिक नहीं बढ़ती। इसका एक मुख्य कारण अवश्य ही हमारी दूषित परीक्षा-प्रणाली है जिसमें पाठ्यपुस्तकों में दिए गए ज्ञान की ही परीक्षा ली जाती है। इस कारण बहुत ही कम विद्यालयों में कोर्स के बाहर की पुस्तकों को पढ़ने के लिए प्रोत्साहन दिया जाता है। लेकिन अतिरिक्त पठन में बच्चों की रुचि न होने का एक बड़ा कारण यह भी है कि विभिन्न आयुवर्ग के बालकों के लिए कम मूल्य की अच्छी पुस्तकें पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध भी नहीं हैं। यद्यपि पिछले कुछ वर्षों में इस कमी को पूरा करने के लिए कुछ काम प्रारंभ हुआ है पर वह बहुत ही नाकाफ़ी है।

इस दृष्टि से परिषद् ने बच्चों की पुस्तकों के लेखन की दिशा में एक महत्वाकांक्षी योजना प्रारंभ की है। इसके अंतर्गत "पढ़ें और सीखें" शीर्षक से एक पुस्तकमाला तैयार करने का विचार है जिसमें विभिन्न आयुवर्ग के बच्चों के लिए सरल भाषा और रोचक शैली में अनेक विषयों पर बड़ी संख्या में पुस्तकें तैयार की जाएंगी। हम आशा करते हैं

कि बहुत शीघ्र ही हिन्दी में हम निम्नलिखित विषयों पर 50 पुस्तकें प्रकाशित कर सकेंगे।

क. शिशुओं के लिए पुस्तकें
ख. कथा साहित्य
ग. जीवनियां
घ. देश-विदेश परिचय
ङ. सांस्कृतिक विषय
च. वैज्ञानिक विषय
छ. सामाजिक विज्ञान के विषय

इन पुस्तकों के निर्माण में हम प्रसिद्ध लेखकों, वैज्ञानिकों, अनुभवी अध्यापकों और योग्य कलाकारों का सहयोग ले रहे हैं। प्रत्येक पुस्तक के प्रारूप पर भाषा, शैली और विषय-विवेचन की दृष्टि से सामूहिक विचार करके उसे अंतिम रूप दिया जाता है।

परिषद् इस माला की पुस्तकों को लागत-मूल्य पर ही प्रकाशित कर रही है ताकि ये देश के हर कोने में पहुँच सकें। भविष्य में इन पुस्तकों को अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद कराने की भी योजना है।

हम आशा करते हैं कि शिक्षाक्रम, पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकों के क्षेत्र में किए गए कार्य की भांति ही परिषद् की इस योजना का भी व्यापक स्वागत होगा।

प्रस्तुत पुस्तक 'फोनोग्राफ से स्टीरियो तक' के लेखन के लिए प्रोफेसर वीरेन्द्र भटनागर ने हमारा निमंत्रण स्वीकार किया जिसके लिए हम उनके अत्यंत आभारी हैं। जिन-जिन विद्वानों, अध्यापकों और कलाकारों से इस पुस्तक को अंतिम रूप देने में हमें सहयोग मिला है उनके प्रति मैं कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ।

हिन्दी में "पढ़ें और सीखें" पुस्तक माला की यह योजना प्रो० अनिल विद्यालंकार के मार्ग-दर्शन में चल रही है। उनके सहयोगियों में श्रीमती संयुक्ता लूदरा, डा० रामजन्म शर्मा, डा० सुरेश पांडेय, डा० हीरालाल बाछोतिया और डा० अनिरूद्ध राय सक्रिय सहयोग दे रहे हैं। इस योजना के संचालन में डा० बाछोतिया विशेष रूप से सक्रिय हैं।

इस योजना में विज्ञान की पुस्तकों के लेखन का मार्ग-दर्शन दिल्ली विश्वविद्यालय के भूतपुर्व कुलपति और राजस्थान विश्वविद्यालय में वर्तमान प्रोफेसर--एमेरिटस डा० रामचरण मेहरोत्रा कर रहे हैं। विज्ञान की पुस्तकों के लेखन के संयोजन और अंतिम संपादन आदि का दायित्व हमारे विज्ञान एवं गणित शिक्षा विभाग के प्रो० रामदुलार शुक्ल वहन कर रहे हैं।

मैं डा० रामचरण मेहरोत्रा को और अपने सभी सहयोगियों को हार्दिक धन्यवाद और बधाई देता हूं।

इन पुस्तकों को इतने अच्छे ढंग से प्रकाशित करने के लिए मैं परिषद् के प्रकाशन विभाग के अध्यक्ष और कार्यकर्ताओं, विशेषकर मुख्य उत्पादन अधिकारी श्री सी० एन० राव और मुख्य संपादक श्री प्रभाकर द्विवेदी को हार्दिक धन्यवाद देता हूं।

इस माला की पुस्तकों पर बच्चों, अध्यापकों और बच्चों के माता-पिता की प्रतिक्रिया का हम स्वागत करेंगे ताकि इन पुस्तकों को और भी उपयोगी बनाने में हमें सहयोग मिल सके।

पी० एल० मल्होत्रा
निदेशक
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान
और प्रशिक्षण परिषद्

दो शब्द

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् (एन० सी० ई० आर० टी०) की "पढ़ें और सीखें" योजना के अन्तर्गत यह एक छोटा सा प्रयास है। जब परिषद् के प्रगतिशील निदेशक डा० पी० एल० मल्होत्रा ने मुझे इस दिशा में "विज्ञान" के विषयों का कार्यभार संभालने के लिए आमंत्रित किया तो अपने वैज्ञानिक मित्रों की अतिव्यस्तता के कारण यह उत्तरदायित्व स्वीकार करने में मुझे संकोच था।

इस दिशा में मेरा प्रयास रहा है कि विज्ञान के विभिन्न विषयों के जाने-माने विद्वानों को इस सराहनीय कार्य के लिए आकर्षित कर सकूं क्योंकि कारण है कि खोज और अनुसंधान की आनंदपूर्ण अनुभूतियों वाले वैज्ञानिक ही अपने "आनंद" की एक झलक बच्चों तक पहुंचा सकते हैं। मैं उनका हृदय से आभारी हूं कि उन्होंने अंकुरित होने वाली पीढ़ी के लिए अपने बहुमूल्य समय में से कुछ क्षण निकालने का प्रयास किया। कहते तो हम सब हैं कि "बालक" राष्ट्र की सब से बहुमूल्य और महत्वपूर्ण निधि है परंतु मेरे लिए यह किंचित आश्चर्य और अधिक संतोष का अनुभव रहा है कि हमारे इतने लब्धप्रतिष्ठ और अत्यंत व्यस्त वैज्ञानिक "बच्चों" के लिए ऐसा परिश्रम करने के लिए सहर्ष मान गए हैं। मैं सभी वैज्ञानिक मित्रों के लिए हृदय से आभारी हूँ।

इन पुस्तकों की तैयारी में हमारा मुख्य ध्येय रहा है कि विषय ऐसी शैली में प्रस्तुत किया जाए कि बच्चे स्वयं इसकी ओर आकर्षित हों, साथ

ही भाषा इतनी सरल हो कि बच्चों को इनके अध्ययन द्वारा विज्ञान के गूढ़तम रहस्यों को समझने में कोई कठिनाई न हो। इन पुस्तकों के पढ़ने से उनमें अधिक पढ़ने की रुचि पैदा हो, उनके नैसर्गिक कौतुहल में वृद्धि हो जिससे ऐसे कौतूहल और उसके समाधान के लिए स्वप्रयत्न उनके जीवन का एक अंग बन जाए।

यह योजना एन० सी० ई० आर० टी० के वर्तमान निदेशक डा० पी० एल० मल्होत्रा की प्रेरणा से प्रारंभ हुई है। मैं उन्हें इसके लिए बधाई और धन्यवाद देता हूँ।

प्रोफेसर वीरेन्द्र भटनागर ने इस पुस्तक के लिखने के लिए मेरा अनुरोध स्वीकार किया जिसके लिए मैं हृदय से आभारी हूँ। परिषद् के विज्ञान एवं गणित शिक्षा विभाग के प्रो० रामदुलार शुक्ल विज्ञान की पुस्तकों के लेखन से संबंधित योजना के संयोजक हैं और बहुत परिश्रम और कुशलता से आपना कार्य कर रहे हैं। प्रो० अनिल विद्यालंकार "पढ़े और सीखें" संपूर्ण योजना के संचालक हैं। मैं इन दोनों को हृदय से धन्यवाद देता हूँ।

आशा है कि ऐसी पुस्तकों से हमारी नई पीढ़ी के बाल्यकाल ही में वैज्ञानिक मानसिकता का शुभारंभ हो सकेगा और विज्ञान के नवीनतम ज्ञान के साथ ही साथ उन्हें अपने देश की प्रगतियों एवं वैज्ञानिकों के कार्य की झलक मिल सकेगी जिससे उनमें अपने राष्ट्र के प्रति गौरव की भावना का भी सृजन होगा।

रामचरण मेहरोत्रा
अध्यक्ष
"पढ़ें और सीखें योजना" (विज्ञान)

प्रस्तावना

प्रत्येक बालक के मन में यह जिज्ञासा रहती है कि वह नये-नये आविष्कारों के बारे में सब कुछ समझ ले, परन्तु उसकी इस कामना की पूर्ति इतनी सरल नहीं। विज्ञान का प्रत्येक विषय गणित तथा गूढ़ विचारों के कारण जटिल होता है। इसलिए बालकों की जिज्ञासा की पूर्ति के लिए आवश्यक है कि उनके लिए विशेषरूप से पुस्तकें तैयार की जायें। ये पुस्तकें रोचक एवं सरल भाषा में तो होनी ही चाहिए, साथ ही यदि इन्हें पढ़कर पाठक अनजाने में ही विज्ञान संबंधी कुछ महत्वपूर्ण बातें जान सकें और वैज्ञानिक पद्धति के बारे में कुछ सीख सकें तो अच्छा होगा। प्रस्तुत पुस्तक इसी उद्देश्य से लिखी गई है।

इस पुस्तक में एडीसन के फोनोग्राफ से लेकर आधुनिक स्टीरियो के विकास की कहानी कही गई है। इस कहानी के माध्यम से बालकों को विद्युत धारा के चुंबकीय प्रभाव, विद्युत चुंबकीय प्रेरण, दाब विद्युत, प्रकाश विद्युत सेल, डेसीबेल आदि अनेक विषयों के बारे में अनौपचारिक तौर पर प्रारंभिक व संक्षिप्त जानकारी भी दी गई है। आशा है इसे पढ़ कर बालकों के मन में इन विषयों के बारे में अधिक जानने की लालसा पैदा होगी।

इस पुस्तक में जन साधारण में प्रचलित कुछ शब्दों को छोड़कर बाकी सभी शब्द पारिभाषिक शब्द भारत सरकार द्वारा प्रकाशित विज्ञान शब्दावली से लिए गए हैं। अंग्रेजी शब्दों से पाठक पूर्णतः

अनभिज्ञ न रहें, इस हेतु हिन्दी शब्दों के अंग्रेजी पर्याय पुस्तक के अन्त में परिशिष्ट के रूप में दिए गए हैं।

पुस्तक तैयार करने में लेखक ध्वनि विशेषज्ञ डा० एस० एस० अग्रवाल तथा आकाशवाणी के इंजीनियर श्री अशोक भटनागर से प्राप्त सहायता के लिए आभारी हैं। कुछ समय पहले फिलिप्स कंपनी ने लेसर प्रकाश की मदद से डिजिटल रूप में ध्वनि अंकित करने में जो सफलता प्राप्त की, उसके बारे में अधिकृत जानकारी देने के लिए फिलिप्स इंडिया, पीको इलेक्ट्रोनिक्स व इलेक्ट्रीकल के प्रति हम आभारी हैं। प्रस्तुत पुस्तक प्रो० आर० सी० मेहरोत्रा के निर्देशन में तैयार की गई है—उन्होंने वैज्ञानिक बातों को सदा ऐसे रूप में प्रस्तुत करने पर जोर दिया है जिससे पाठक के मन में वैज्ञानिक पद्धति के बारे में आस्था उत्पन्न हो। उनके सुझावों के लिए लेखक उनका आभारी है। लेखक प्रो० आर० डी० शुक्ला के प्रति भी आभारी है जिन्होंने पुस्तक तैयार करने में सभी संभव सहायता की।

वीरेन्द्र भटनागर

लेखक परिचय

इस पुस्तक के लेखक डा० वीरेन्द्र भटनागर पिछले कई वर्षों से देहली कॉलेज ऑफ इंजीनियरिंग के भौतिकी विभाग में प्रोफेसर व अध्यक्ष हैं। आपने वैज्ञानिक विषयों पर लगभग डेढ़ दर्जन पुस्तकें लिखी हैं। सर्वसाधारण के लिए विज्ञान सम्बन्धी अनेक कार्यक्रम आपने दूरदर्शन से प्रसारित किए हैं तथा वीडियो, टी वी व सिनेमा की कुछ फिल्मों से भी आप जुड़े रहे हैं।

अनुक्रम

1. ध्वनि को बन्दी कैसे बनायें

कहा जाता है कि किसी राजा के राज्य में कोई व्यक्ति बेरोजगार न था। जिसे जो काम आता उसे उसके अनुसार रोजगार मिल जाता। लेकिन एक दिन उस राजा के दरबार में एक ऐसा व्यक्ति आया जिसे कुछ भी न आता था। राजा को उसके लिए कोई काम न सूझा तो सलाह के लिए मंत्री को बुलाया गया। मंत्री ने सुझाव दिया, "महाराज, इस व्यक्ति को समुद्र के किनारे बैठा दिया जाये और इससे कहा जाये कि वह लहरें गिने।" उस व्यक्ति को काम मिल गया लहरें गिनने का। एक मिनट या एक सेकंड में किसी स्थान से कितनी लहरें गुजरती हैं, बस उसे यही गिनना था। वह व्यक्ति भी खुश और राजा भी खुश।

यद्यपि उस राजा को पता न था पर वास्तव में किसी स्थान से एक सेकंड में गुजरने वाली लहरों या तरंगों की संख्या मालूम करना बड़े महत्व की बात है। ध्वनि के सभी साधनों में कोई न कोई ऐसा भाग अवश्य होता है जो कंपन करता है। इन कंपनों की वजह से हवा में तरंगें पैदा हो जाती हैं। कान के परदे से टकरा कर ये तरंगें ध्वनि संवेदना देती हैं। प्रति सेकंड अधिक संख्या में तरंगें आने पर ध्वनि तीखी लगती है लेकिन कम संख्या में पैदा होने पर भारी। इसलिए ध्वनि के बारे में सही जानकारी देने के लिए वैज्ञानिक एक सेकंड में गुजरने वाली तरंगों की संख्या अवश्य बतलाते हैं और वे इस संख्या को आवृत्ति कहते हैं। यदि कहीं एक सेकंड में 1000 कंपन हो रहे हों तो कहा यह जाता है कि ध्वनि की आवृत्ति 1000 कंपन प्रति सेकंड है। कंपन प्रति सेकंड के स्थान पर

अब हर्ट्ज लिखा जाने लगा है। इसलिए 1000 कंपन प्रति सेकंड उत्पन्न करने वाली ध्वनि की आवृत्ति हुई 1000 हर्ट्ज। तबले द्वारा उत्पन्न ध्वनि अथवा शेर की दहाड़ की आवृत्ति बहुत कम होती है जबकि सितार अथवा पायल की झंकार द्वारा बहुत ऊँची आवृत्ति की ध्वनि निकलती है।

निम्न आवृत्ति की ध्वनि भारी लगती है और उच्च आवृत्ति की तीखी। लेकिन यदि हम तरंगों की आवृत्ति लगातार घटाते या बढ़ाते चले जाएं तो फिर क्या होगा? लगातार आवृत्ति घटाने पर ध्वनि भारी पड़ती जाती है, फिर थप-थप जैसी आवाज सुनाई देती है और अंत में एक सीमा के बाद तो तरंगों द्वारा कंपन इतने धीरे रफ्तार से होते हैं कि वे हमारे मस्तिष्क पर ध्वनि संवेदना उत्पन्न ही नहीं कर पाते। हमें कुछ भी सुनाई नहीं देता। उदाहरणार्थ, जब हम अपना हाथ कान के पास लाकर इधर-उधर हिलाते हैं तो हम हवा में तरंगें तो उत्पन्न करते हैं लेकिन फिर भी हमें कुछ भी सुनाई नहीं देता। प्रयोगों द्वारा पाया गया है कि तरंगों की आवृत्ति यदि 20 हर्ट्ज से कम है तो साधारणतया वे हमें सुनाई नहीं पड़तीं। कान के पास हाथ इधर-उधर करने से 4-5 हर्ट्ज की तरंगें उत्पन्न होती हैं, इसलिए ऐसा करने पर हमें कुछ भी सुनाई नहीं देता।

चित्र 1 हाथ हिलाने पर उत्पन्न ध्वनि तरंगों का सुनाई न देना

बहुत ऊँची आवृत्ति की तरंगें भी हमारे दिमाग पर ध्वनि का असर पैदा नहीं कर पातीं। मनुष्य 20 000 हर्ट्ज से अधिक ऊँची आवाजें सुन

नहीं पाता। इसलिए साधारण मनुष्य के लिए श्रवण की सीमा 20-20 000 हर्ट्ज कही जा सकती है। लेकिन सच्चाई तो यह है कि बहुत से लोग 20-20 000 हर्ट्ज के बीच की ध्वनि भी सुन नहीं पाते। उम्र बढ़ने के साथ उच्च आवृत्ति की ध्वनि सुनना मुश्किल होता जाता है। बालक और कम उम्र के लोग 20 000 हर्ट्ज तक ध्वनि सुन सकते हैं। नवजात शिशु तो इससे भी ऊँची आवृत्तियों की ध्वनियां सुनकर कभी-कभी सोते में चौक पड़ते हैं, पर ये ध्वनियां हमें तो सुनाई नहीं पड़तीं। इस दृष्टि से कुछ पशु और पक्षी हमसे अधिक भाग्यशाली हैं। कुत्ते काफी उच्च आवृत्ति की ध्वनि सुन सकते हैं, तभी तो जंगल में शिकारी अपने कुत्तों को बुलाने के लिए खास तरह की सीटी बजाते हैं—इस सीटी की आवाज उनके कुत्ते तो सुन लेते हैं पर अन्य सभी जानवर नहीं। चिमगादड़ अपना मार्ग खोजने के लिए जोर-जोर से चीखती है, और इन चीखों की प्रतिध्वनियां सुनकर इस बात का पता लगाती है कि उसके मार्ग में कोई बाधा तो नहीं है—लेकिन ये चीखें उच्च आवृत्ति की होती हैं, इसलिए हमें सुनाई नहीं देतीं।
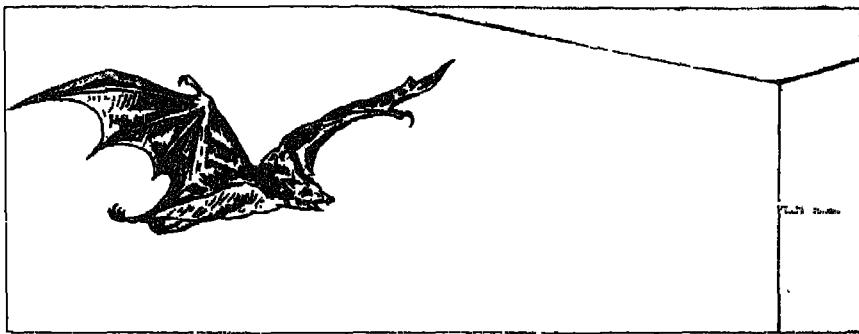
चित्र 2 चिमगादड़ बार-बार चीखती है और प्रतिध्वनि सुन कर अपना मार्ग तय करती है, लेकिन ये आवाजे हमे सुनाई नहीं देतीं।

ध्वनि अंकित करने वाली सभी युक्तियों में ध्वनि तरंगों के अनुरूप कुछ चिह्न बना लिए जाते हैं। फिर जब मन चाहे तब उन्हीं चिह्नों के आधार पर ध्वनि तरंगों को फिर से प्राप्त किया जा सकता है। ग्रामोफोन और टेप रिकार्डर आदि ऐसी ही युक्तियां हैं। ये सभी युक्तियां मनुष्य ने अपने उपयोग के लिए बनाई हैं, इसलिए इनमें 20 हर्ट्ज से नीचे और 20 000 हर्ट्ज से ऊपर की ध्वनियां अंकित करने से कोई फायदा नहीं। अवश्य ही बहुत उच्चस्तर का संगीत पाने के लिए कुछ मंहगी युक्तियों में 20 हर्ट्ज के नीचे व 20 000 हर्ट्ज से ऊपर की ध्वनियों को अंकित करने का भी प्रबंध रहता है।

ध्वनि तरंगों का अंकन किसप्रकार किया जाता है, इस बारे में कुछ भी कहने से पहले तरंगों के बारे में थोड़ा बहुत जानना आवश्यक है। हवा में चलती ध्वनि तरंगें तो हमें दिखलाई देती नहीं, लेकिन पानी पर उठती तरंगें भला किसने न देखी होंगी? हालांकि ध्वनि तरंगों और पानी पर उठने वाली तरंगों में फर्क होता है तो भी पानी पर उठने वाली तरंगों को देखकर बहुत कुछ जाना जा सकता है।

पानी की सतह पर फैलती तरंगों के बारे में एक अनोखी बात तब देखने को मिलती है जब पानी पर लकड़ी का कोई टुकड़ा तैर रहा हो। हम देखते हैं कि तरंग आने पर लकड़ी का टुकड़ा कंपन तो करता है पर तरंगों के साथ आगे नहीं बढ़ता। तरंगें आती हैं और चली जाती हैं, पर लकड़ी का वह टुकड़ा वहीं कंपन करता रह जाता है। सभी तरंगों के साथ यही होता है कि वे माध्यम में हलचल तो पैदा करती हैं लेकिन वे माध्यम के किसी कण को एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले नहीं जाती, माध्यम के कण तो जहां थे, वहीं कंपन करते रह जाते हैं।

तनी हुई किसी डोरी के एक सिरे को यदि ऊपर-नीचे हिलाया जाये तो डोरी पर भी तरंगें चलती दिखती हैं। इन तरंगों में कणों के कंपन

तरंग की दिशा के लम्बवत होते हैं। लेकिन हवा में चलती ध्वनि तरंगों में ये कंपन तरंग की दिशा में आगे-पीछे होते हैं। इस दृष्टि से तनी हुई डोरी में बनने वाली तरंगों में और ध्वनि तरंगों में बहुत फर्क होता है। ध्वनि तरंग में आगे-पीछे कंपनों की वजह से माध्यम के कण कभी पास-पास आ जाते हैं तो कभी दूर-दूर हो जाते हैं। इसप्रकार ध्वनि
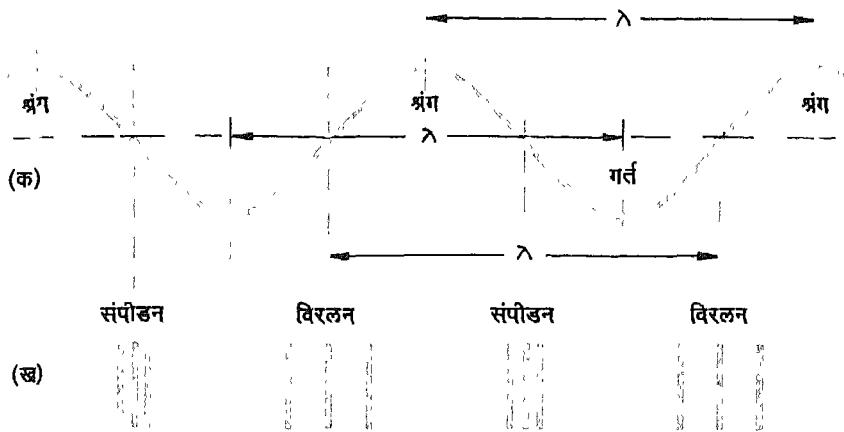
चित्र 3 तरग की लम्बाई λ संकेत से दर्शाई गई है। (क) तनी डोरी पर चलने वाली तरंग। (ख) हवा में चलती ध्वनि तरग।

तरंगों के मार्ग में कहीं सघन क्षेत्र बन जाते तो कहीं विरल। उधर तनी हुई डोरी पर चलती तरंगों की वजह से डोरी का कुछ भाग कहीं उठा दिखता है तो कहीं दबा। ध्वनि तरंगों के मार्ग में सघन क्षेत्र (संपीडन) और विरल क्षेत्र (विरलन) बनते हैं लेकिन डोरी पर चलती तरंगों में उठे क्षेत्र (श्रृंग) और दबे क्षेत्र (गर्त)। किसी ध्वनि तरंग का फैलाव एक सघन क्षेत्र से निकटवर्ती दूसरे सघन क्षेत्र तक समझा जाता है, इसलिए ध्वनि

की एक तरंग की लम्बाई एक संपीडन से निकटवर्ती दूसरे संपीडन तक की दूरी होती है। इसीप्रकार तनी डोरी में चलती तरंग की लम्बाई एक उठे क्षेत्र से निकटवर्ती दूसरे उठे क्षेत्र तक की दूरी समझी जाती है। वैज्ञानिक भाषा में तरंग की लंबाई को तरंग दैर्ध्य कहते हैं और इसे ग्रीक अक्षर λ (लेमडा) से लिखते हैं।

किसी तरंग की लंबाई उसकी आवृत्ति पर निर्भर करती है। निम्न आवृत्ति की तरंग की लम्बाई उच्च आवृत्ति की तरंग की तुलना में अधिक होती है। आवृत्ति बढ़ाने पर तरंग की लंबाई कम होती जाती है। यदि आवृत्ति दुगनी कर दें तो तरंग की लंबाई आधी रह जाती है और तिगुनी कर देने पर एक-तिहाई। पाया गया है कि हवा में 320 हर्ट्ज की ध्वनि तरंग की लम्बाई 1 मीटर होती है और 3200 हर्ट्ज की तरंग की लम्बाई केवल 10 सेमी। इस संबंध में वैज्ञानिक जिस सूत्र का उपयोग करते हैं, वह यह है—

प्रति सेकंड उठने वाली तरंगों की संख्या (आवृत्ति) × एक तरंग की लम्बाई (तरंग दैर्ध्य) = तरंग द्वारा एक सेकंड में चली दूरी (वेग)
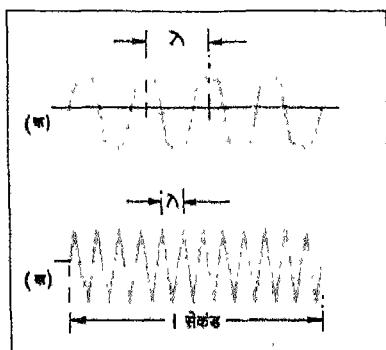
हवा में ध्वनि तरंगों का वेग लगभग 320 मीटर प्रति सेकंड होता है।

चित्र 4 निम्न आवृत्ति की तरंग (क) में दिखलाई गई है और उच्च आवृत्ति की (ख) में। निम्न आवृत्ति का तरंग दैर्ध्य अधिक है।

उच्च आवृत्ति की तरंग की लम्बाई कम होने की वजह से ये तरंगें अधिक बिखर नहीं पातीं। वास्तव में उच्च आवृत्ति की ध्वनि स्रोत के आगे ही सुनाई देती है, दायें-बायें अथवा पीछे प्रायः नहीं।
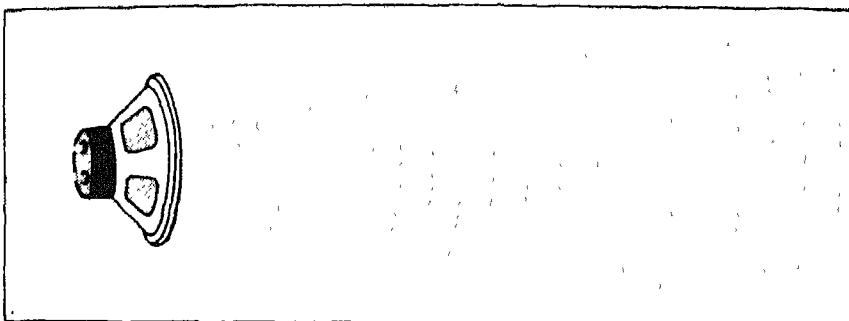
चित्र 5 उच्च आवृत्ति की ध्वनि टार्च के प्रकाश की तरह सामने सुनाई देती है, दायें-बायें या पीछे नही।

मर्मर और कर्ण-भेदी ध्वनि

ध्वनि एक प्रकार की ऊर्जा है। यह ऊर्जा कणों के कंपन की ऊर्जा के रूप में उपस्थित रहती है। जैसे-जैसे ध्वनि तरंगें आगे बढ़ती हैं, ऊर्जा भी उसी चाल से आगे बढ़ती जाती है। दूसरे शब्दों में ध्वनि ऊर्जा कोई ठहरी चीज नहीं होती। यह तो ध्वनि तरंगों के साथ निहित ऊर्जा है, जहां तरंगें जाएंगी वहीं यह ऊर्जा भी पहुंच जायेंगी।

कोई ध्वनि कितनी तीव्र है इसका हिसाब इस बात से लगाया जाता है कि ध्वनि तरंग के आगे एक वर्ग मीटर क्षेत्रफल में से होकर प्रति सेकंड कितनी ऊर्जा जा रही है। यह जानकारी यंत्रों की मदद से सरलता

से मिल जाती है। ध्वनि की तीव्रता बहुत-सी बातों पर निर्भर करती है। लेकिन यह तो स्पष्ट ही है कि जोर के कंपन होने पर ध्वनि की तीव्रता भी अधिक होगी। ध्वनि की तीव्रता एक भौतिक राशि है जिसे यंत्रों द्वारा ही मापा जा सकता है।

हमारे कान बड़े विचित्र हैं। वैज्ञानिकों ने देखा कि दुगनी तीव्रता की ध्वनि तरंगें सचमुच पहले वाली तरंगों की तुलना में दुगने जोर की नहीं लगतीं। यंत्रों की मदद से यह पाया गया कि जब तीव्रता को 100 गुना कर दिया जाता है तब कहीं जाकर हमें ऐसा लगता है कि ध्वनि अब पहले की तुलना में लगभग दुगने जोर की है। इसीप्रकार 1000 गुनी तीव्रता की ध्वनि केवल तिगुने जोर की लगती है। इन बातों को ध्यान में रखते हुए ध्वनि के स्तर को प्रगट करने के लिए यह तय किया गया कि कम से कम तीव्रता की उस ध्वनि को जो बस हमें सुनाई दे सके, आधार माना जाये और इस ध्वनि की तुलना में जिस ध्वनि की तीव्रता 10 गुनी (अर्थात् 10^1 गुनी) है उस ध्वनि के स्तर को 1 बेल कहा जाये, 100 गुनी (अर्थात् 10^2 गुनी) तीव्रता की ध्वनि के स्तर को 2 बेल, और 1000 गुनी (अर्थात् 10^3 गुनी) तीव्रता की ध्वनि के स्तर को 3 बेल कहा जाये। इस प्रकार ध्वनि के स्तर को प्रगट करने के लिए बेल नामक मात्रक प्रचलित हो गया। यह मात्रक टेलीफोन के आविष्कारक ग्राहम बेल के सम्मान में रखा गया है। कहा जाता है कि विज्ञान में प्रचलित अनेक मात्रकों में से केवल यही एक मात्रक है जो किसी अमेरिकन वैज्ञानिक के नाम पर है। बेल एक बड़ा मात्रक है। जिसप्रकार एक मीटर के दसवें भाग को डेसीमीटर कहते हैं, उसीप्रकार एक बेल के दसवें भाग को डेसीबेल कहा जाने लगा। अंग्रेजी में इसे dB (डी बी) से लिखते हैं। इसप्रकार ध्वनि के स्तर को प्रगट करने के लिए अब डेसीबेल का उपयोग होने लगा। ध्वनि से सम्बन्धित सभी बातों में डेसीबेल का खूब उपयोग किया जाता है।
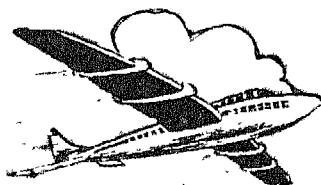
80-100 डेसीबेल
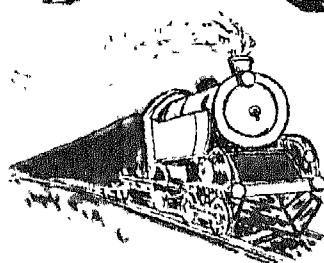
60-80 डेसीबेल

40-60 डेसीबेल

20-40 डेसीबेल

0-20 डेसीबेल

चित्र 6 कुछ जानी पहचानी ध्वनिया और उनका स्तर।

हिसाब लगाकर यह देखा जा सकता है कि तीव्रता अनुपात और डेसीबेल में संबंध वैसा है जैसाकि नीचे दिया गया है। स्पष्ट है कि तीव्रता को 10 गुना बढ़ाने पर ध्वनि के स्तर में बढ़ोत्तरी 10 डेसीबेल की होती है।

तीव्रता अनुपात	ध्वनि स्तर बेल में	ध्वनि स्तर डेसीबेल में
1000000	6	60
100000	5	50
10000	4	40
1000	3	30
100	2	20
10	1	10
2	0.3	3
1	0	0

दैनिक जीवन में काम में आने वाले ध्वनि स्तरों को नीचे दी गई सारणी में डेसीबेलों में दिया गया है और कुछ जानी पहचानी ध्वनियों के स्तरों के बारे में चित्र में दिखलाया गया है।

मर्मर	0 – 20 डेसीबेल
साधारण	20 - 40
प्रबल	40 - 60
बहुत प्रबल	60 – 80
बहरा करने वाली	80 – 100
दर्द दायक	100 – 120
कर्ण-भेदी	120 – 140

बांसुरी और हारमोनियम की ध्वनि में फर्क क्यों?

तरह-तरह के वाद्यों को बजाकर संगीत रचनायें बनाई जाती हैं। इन्हें सुनना बड़ा मधुर लगता है। वाद्य वृंद के ऐसे किसी रिकार्ड को सुनकर हम शीघ्र ही यह पहचान लेते हैं कि उसे रचने के लिए किन-किन वाद्यों को बजाया गया होगा। इसका कारण स्पष्ट है— प्रत्येक वाद्य की ध्वनि में उसकी अपनी विशेषता होती है जिसकी वजह से उसे पहचानना संभव होता है। बांसुरी और हारमोनियम यदि एक ही आवृत्ति की ध्वनि दें तब भी बिना वाद्य देखे हम पहचान सकते हैं कि कौन-सी ध्वनि किस वाद्य की है। इसीप्रकार यदि कोई दो व्यक्ति एक ही आवृत्ति की आवाज में बोलते हैं तो भी उनकी आवाजों में कुछ फर्क रह जाता है जिसकी वजह से हम यह पता लगा पाते हैं कि हम किसकी आवाज सुन रहे थे।
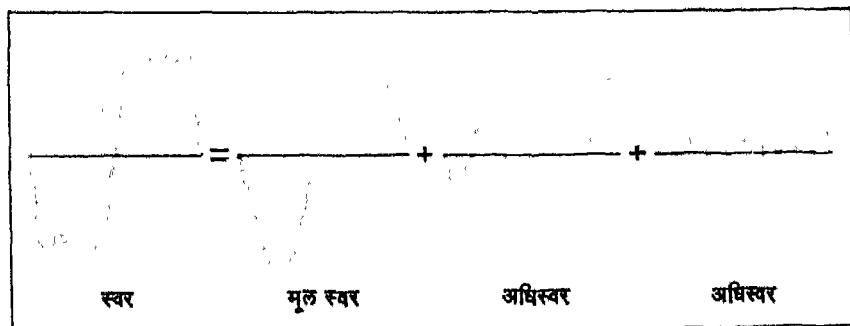
चित्र 7 बायीं ओर दर्शाई तरंग एक मूल स्वर व अनेक अधिस्वरों से मिलकर बनी समझी जा सकती है। मूल स्वर व कुछ अधिस्वर दायीं ओर दिखलाये गए हैं।

ध्वनि देने वाले प्रत्येक स्रोत में यह गुण होता है कि जब वह किसी निश्चित आवृत्ति का सुर देता है तो उसके साथ-साथ वह अन्य आवृत्तियों के अधिस्वर भी पैदा करता है। इन अधिस्वरों की आवृत्तियां मुख्य आवृत्ति से दुगनी, तिगुनी आदि होती हैं। किसी वाद्य के लिए न तो यह आवश्यक है कि वह सभी तरह के अधिस्वर पैदा करे और न ही यह जरूरी है कि सभी अधिस्वर एक ही प्रबलता के हों। वास्तव में कोई वाद्य किसी सुर के साथ कौन-कौन से और कितनी प्रबलता के अधिस्वर निकालता है यह बात उस वाद्य की अपनी विशेषता होती है। इन अधिस्वरों की वजह से प्रत्येक वाद्य द्वारा दी गई ध्वनि में उसकी अपनी विशेषता समा जाती है। इसलिए जब दो वाद्य एक ही मुख्य आवृत्ति की ध्वनि उत्पन्न करते हैं तो भी उनके अधिस्वरों के बीच अन्तर होने के कारण उन्हें पहचाना जा सकता है। समान आवृत्ति की दो ध्वनियों में भेद करने के लिए अधिस्वरों के अतिरिक्त दूसरी महत्वपूर्ण बात है साज छेड़ते समय प्रारंभ के कुछ क्षणों में उत्पन्न पेचीदा ध्वनि जिसे क्षणिकायें कहते हैं।

कुछ वाद्य बहुत ऊंचे अधिस्वर भी देते हैं। जैसे यदि मूल स्वर 1,500 हर्ट्ज का है तो यह वाद्य 3000, 4500, 6000, ... 15000 हर्ट्ज आदि आवृत्तियों वाले अधिस्वर भी दे सकता है। स्पष्ट है ध्वनि अंकन करने वाली और ध्वनि का पुनरुत्पादन करने वाली सभी युक्तियों में इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि उच्च आवृत्ति के ये अधिस्वर कहीं खो न जायें। अधिस्वरों की वजह से किसी भी ध्वनि स्रोत का आवृत्ति फैलाव काफी लम्बा हो जाता है। कुछ जानी पहचानी ध्वनियों का ऐसा आवृत्ति-फैलाव नीचे दिया गया है—
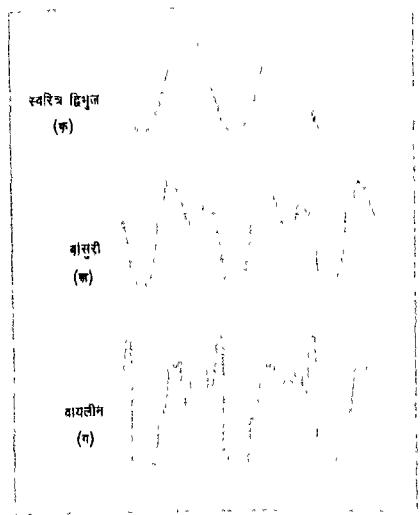
चित्र 8 एक ही मूल आवृत्ति की ध्वनियाँ
(क) द्विभुज स्वरित्र।
(ख) बांसुरी।
(ग) वायलिन।
यद्यपि सभी ध्वनियों की मूल आवृत्तिया वही हैं लेकिन उनके अधिस्वर भिन्न हैं।

	हर्ट्ज
पुरुष (बातचीत)	100 – 8000
स्त्री (बातचीत)	180 – 10000
ताली	100 – 12000
चाबी का गुच्छा	1200 – 13000
वायलिन	180 – 12000
बाँसुरी	270 – 12000
तबला	50 – 5000

ध्वनि अंकन व पुनरुत्पादन में ध्वनि की स्वाभाविकता की समस्या : हाई-फाई

हाई-फाई अंग्रेजी के शब्द हाई फाइडलिटी का लघु रूप है। इसका शाब्दिक अर्थ है उच्च स्वाभाविकता या तदरूपता से ध्वनि को दोहराना। दूसरे शब्दों में ध्वनि का इसप्रकार पुनरुत्पादन करना कि उसमें और असली ध्वनि में फर्क कम से कम हो। हाई-फाई कहलाने वाली युक्तियों द्वारा पुनरुत्पादक ध्वनि प्रायः असली ध्वनि जैसी सुनाई पड़ती है।

हाई-फाई कहलाने वाली युक्तियों के लिये यह आवश्यक है कि वे उच्च, निम्न या अन्य किसी आवृत्ति की ध्वनि के साथ भेदभाव न करें। उदाहरणार्थ, यदि दोहराने वाली कोई युक्ति उच्च आवृत्ति की ध्वनि को सौ-गुना बढ़ाकर पेश करती है तो उसे निम्न आवृत्ति की ध्वनि को भी इतना ही बढ़ाना चाहिए। लेकिन बाजार में मिलने वाली साधारण युक्तियों में ऐसा नहीं होता। यदि कोई साधारण युक्ति उच्च आवृत्ति की ध्वनि को तो 100 गुना बढ़ा रही है लेकिन निम्न आवृत्ति को केवल 10 गुना तब स्पष्ट है कि ऐसी युक्ति से आने वाली ध्वनि असली ध्वनि जैसी नहीं होगी। उसमें सितार की झंकार तो अधिक जोर की सुनाई देगी लेकिन तबले की थपथपाहट कमजोर सी लगेगी। ऐसी युक्ति को हाई-फाई नहीं कहा जा सकता।

कोई युक्ति हाई-फाई कहलाने लायक है या नहीं इसकी जांच करने के लिए यंत्र मिलते हैं। इन यंत्रों की मदद से हमें यह जानकारी मिल जाती है कि हमारे रिकार्ड प्लेयर या टेप रिकार्डर में एक आदर्श युक्ति की तुलना में कितनी कमी रह गई है। ये यंत्र इस कमी या त्रुटि को डेसीबेल में दर्शाते हैं। चित्र में ऐसे ही यंत्र से दो युक्तियों A और B के जाँच के परिणाम दिखलाए गये हैं। चित्र से स्पष्ट है केवल बहुत उच्च व
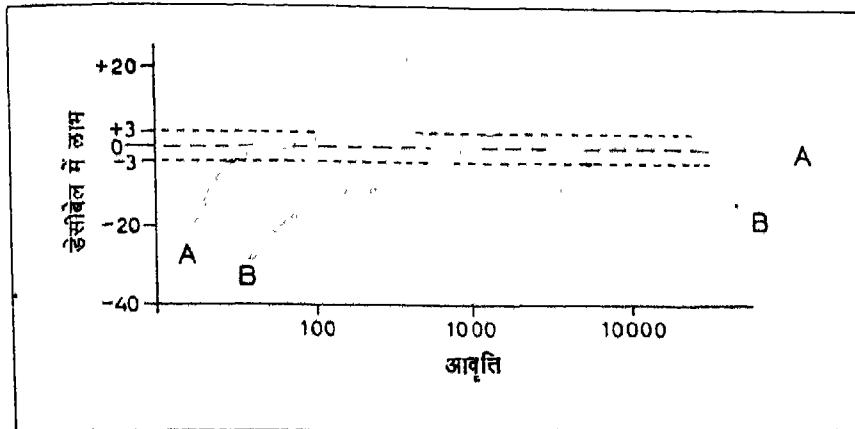
चित्र 9 तद्रूपता की जांच

बहुत निम्न आवृत्तियों को छोड़ कर बाकी सभी आवृत्तियों के लिए ग्राफ A वाली युक्ति बहुत सही है जबकि ग्राफ B युक्ति में यह बात नहीं। यदि हम ±3 डेसीबेल की त्रुटि को सह लें तो 60 से 10000 हर्ट्ज तक ग्राफ-A वाली युक्ति ठीक ठाक कामकर रही है। हमारे कानों को ±3 डेसीबेल का फर्क आसानी से पता नहीं लग पाता और हमारे कान 60 हर्ट्ज से नीचे व 10000 हर्ट्ज से ऊपर की आवृत्तियों के लिए बहुत संवेदी नहीं हैं, इसलिए एक अच्छी युक्ति में 60 से 10000 हर्ट्ज ±3 डेसीबेल होना आवश्यक है। हाई-फाई कहलाने वाली किसी भी युक्ति से हर हालत में कम से कम इस सीमा के भीतर सही ध्वनि मिलनी ही चाहिए। लेकिन यहां पर बतलाना उचित होगा कि आधुनिक हाई-फाई युक्तियाँ इस सीमा से कहीं अधिक बेहतर कार्य करती हैं, लेकिन यदि कोई युक्ति इस सीमा के भीतर ठीक कार्य नहीं करती तो उसे हाई-फाई नहीं कहा जा सकता।

ध्वनि अंकन की विधियाँ

ध्वनि अंकन का इतिहास लगभग सौ-वर्ष पुराना है। तब से अब तक ध्वनि अंकन के लिए अनेक तरह के तरीके अपनाये गए। इलेक्ट्रोनिक्स की प्रगति के साथ-साथ ध्वनि अंकन व पुनरुत्पादन के क्षेत्र में भी बहुत उन्नति हुई है। इलेक्ट्रोनिक युक्तियों के प्रचलन से अब मंद ध्वनि संकेतों को प्रबल करना एक मामूली बात हो गई है।

ध्वनि अंकन के लिए समय-समय पर जो तरीके अपनाये गये उन्हें हम निम्नलिखित चार वर्गों में रख सकते हैं–

(1) यांत्रिक विधि–ध्वनि अंकन व पुनरुत्पादन का यह सबसे पुराना तरीका है। इस विधि में यांत्रिक युक्तियों की मदद से किसी ड्रम या डिस्क पर ध्वनि के अनुरूप खाँचे काटे जाते हैं। फिर इन खाँचों में डायाफ्राम से जुड़ी सुई चलाने पर डायाफ्राम कंपन करने लगता है और ध्वनि मिलने लगती है। इस विधि में ध्वनि सीधे ही मिलती है, इसलिए यह मंद होती है। ध्वनि में बहुत अधिक स्वाभाविकता भी नहीं होती। फिर भी इलेक्ट्रोनिक युक्तियों के प्रचलन से पहले एडीसन के फोनोग्राफ पर आधारित ग्रामोफोन का बहुत बोलबाला था। इस शताब्दी के प्रारंभ के कुछ दशकों में चाबी से चलने वाले ये ग्रामोफोन ही आम जनता के मनोरंजन के मुख्य साधन थे।

(2) विद्युत चुम्बकीय विधि–सन् 1924 तक रिकार्ड बनाने के लिए विद्युत चुम्बकीय सिद्धांतों का उपयोग किया जाने लगा था। इसप्रकार अच्छी किस्म के सस्ते रिकार्ड बाजार में मिलने लगे। लेकिन इन्हें बजाने के लिए चाबी के साधारण ग्रामोफोन का ही उपयोग किया जाता था। सन् 1927 तक ग्रामोफोन के साउंड बक्स के स्थान पर पिक-अप नामक

युक्ति प्रचलित हो गई। पिक-अप से प्राप्त संकेतों को एम्प्लीफायर द्वारा बढ़ाकर, उन्हें लाउडस्पीकर से सुना जाता था। इसप्रकार बिजली चालित रिकार्ड प्लेयरों का आरंभ हुआ। बिजली चालित रिकार्ड प्लेयर आज भी बहुत प्रचलित हैं।

(3) **चुंबकीय विधि**—चुंबकीय विधि से ध्वनि अंकन का इतिहास भी लगभग सौ-वर्ष पुराना है, किन्तु इस विधि का प्रचलन पिछले तीन दशकों में अधिक हुआ। चुंबकीय टेप पर ध्वनि संकेतों को सरलता से अंकित किया जा सकता है और सुना जा सकता है। आवश्यकता पड़ने पर टेप पर अंकित ध्वनि संकेतों को मिटाया भी जा सकता है। घर के भीतर ध्वनि अंकन के लिए टेप रिकार्डर से अच्छी कोई विधि नहीं। इस कारण पिछले कुछ वर्षों में टेप रिकार्डर की लोकप्रियता बहुत बढ़ी है।

(4) **प्रकाश की सहायता से ध्वनि अंकन**—सिनेमा की फिल्मों में एक किनारे पर ध्वनि का अंकन रहता है। फिल्म पर ध्वनि का अंकन साधारणतया प्रकाश की मदद से किया जाता है। ध्वनि को दोहराने के लिए ध्वनि पट्टी पर प्रकाश डाला जाता है और प्रकाशकीय सेल नामक विशेष युक्ति की मदद से विद्युत संकेत प्राप्त किये जाते हैं। इन संकेतों को एम्प्लीफायर द्वारा प्रबल बनाकर अंत में लाउडस्पीकर द्वारा ध्वनि प्राप्त की जाती है।

ध्वनि अंकन की इन विधियों का विस्तार से वर्णन आप आगे पढ़ेंगे। पिछले कुछ वर्षों में ध्वनि अंकन व पुनरुत्पादन के क्षेत्र में बहुत प्रगति हुई है। रिकार्ड प्लेयर और टेप रिकार्डर आज हमारे मनोरंजन के मुख्य साधन हैं। इन्हें बजाकर हम बड़े-बड़े कलाकारों की संगीत रचनाओं का आनन्द तो उठाते ही हैं, इसके अतिरिक्त हम प्रसिद्ध नेताओं के ऐतिहासिक भाषण, मनोरंजक वार्तालाप और उपदेश आदि भी सुन सकते हैं। उच्च अधिकारी फुरसत मिलने पर महत्वपूर्ण पत्रों के उत्तर

टेप रिकार्डर जैसी युक्तियों में रिकार्ड करा देते हैं, जिन्हें दफ्तर खुलने पर टाइपिस्ट उन्हें सुनकर टाइप कर देते हैं। नई भाषा व संगीत सीखने के लिए ऐसी युक्तियां तो वरदान सिद्ध हुई हैं। रेडियो और टेलिविजन केन्द्रों में इन युक्तियों का बहुत उपयोग किया जाता है। अब स्टीरियो ध्वनि देने वाली युक्तियां मिलने लगी हैं जो इतनी अधिक वास्तविकता के साथ ध्वनि उत्पन्न करती हैं कि लगता है कि मानों हम सचमुच मंच पर बैठे अनेक कलाकारों के वाद्य यन्त्रों को एक साथ सुन रहे हों। स्टीरियो ध्वनि क्या होती है और इसका कैसे अंकन व पुनरुत्पादन किया जाता है इसके बारे में आप अध्याय 6 में पढ़ेंगे।

2. एडीसन का फोनोग्राफ

ध्वनि अंकन की कहानी सौ वर्ष से अधिक पुरानी कहानी है। इस संबंध में कदाचित सबसे पहला प्रयास किया था सन् 1857 में लिअन स्कोट ने। उन्होंने एक कीप ली। कीप का एक मुंह चौड़ा होता व दूसरा संकरा। उन्होंने कीप के संकरे मुंह के आगे एक डायाफ्राम लगाया और इस डायाफ्राम के साथ एक ब्रुश बांध दिया। अब जब कीप के चौड़े मुंह में बोला जाता था तो डायाफ्राम के कंपन के साथ-साथ ब्रुश की नोक भी कंपन करती थी। ध्वनि अंकन के लिए स्कोट ने इस ब्रुश की नोक को एक घूमते ड्रम पर टिका दिया। इस ड्रम पर एक कागज पहले ही लिपटा हुआ था। कागज पर काजल की परत चढ़ी हुई थी। अब कीप के चौड़े मुंह में बोलने पर काजल चढ़े कागज पर ब्रुश की नोक के कंपन की वजह से चिह्न खिंचने लगे। ध्वनि अंकन का यह पहला सफल प्रयोग था। लेकिन इसप्रकार खिंचे चिन्हों के आधारपर ध्वनि को फिर दोहराने के लिए स्कोट ने कोई प्रयत्न नहीं किए।

टीन की पतरी पर ध्वनि

सर्व प्रथम बोलती मशीन बनाने का श्रेय जाता है अमेरिका के प्रसिद्ध आविष्कारक थामस अलवा एडीसन को। बात सन् 1877 की है। तब तक वे तरह-तरह के आविष्कारों के लिए काफी प्रसिद्ध हो चुके थे। उन्होंने तार संबंधी अनेक आविष्कार किये थे जिनसे उन्हें बहुत धन

मिला था। इस धन से उन्होंने एक वर्ष पहले ही न्यूयार्क से लगभग 40 किलोमीटर दूर मैनलो पार्क में एक नई प्रयोगशाला बनाई थी। यह प्रयोगशाला बिल्कुल आधुनिक ढंग से बनाई गई थी। इसमें सभी तरह की सुविधाएं मौजूद थीं। इस प्रयोगशाला में एडीसन दिन रात नए-नए आविष्कारों में जुटे रहते। उन्हें न तो अपनी वेशभूषा का ध्यान रहता और न ही अपनी शक्ल सूरत का। तब तक वे केवल तीस वर्ष के युवक थे। एक दिन वे रोज की तरह अपनी प्रयोगशाला में बैठे थे। उनके सामने टीन की चमकीली पतरियां पड़ी थीं। वे कागज के एक फीते को बार-बार देख रहे थे। कागज के इस फीते पर मोर्स पद्धति के अनुसार तार भेजने के संकेत खुदे हुए थे। ये संकेत ''बिन्दु और छोटी-छोटी लकीरों'' के रूप में थे। जब इस फीते को तार भेजने वाली मशीन के नीचे से तेजी से चलाया जाता था तो उसमें से एक विशेष प्रकार की भनभनाहट की आवाज आती थी। एडीसन ने इस आवाज को बार-बार सुना। तभी उनके मस्तिष्क में एक नई बात कौंधी। वे सोचने लगे कि क्या कागज के फीते पर कुछ विशेष प्रकार के गड्ढे बनाकर उससे शब्द और वाक्यों को बोलाया जा सकता है? क्या बोलने वाली मशीन बनाई जा सकती है?

एडीसन सोच में डूब गए। उन्हें तार के अतिरिक्त टेलीफोन का भी कुछ अनुभव था। अभी एक वर्ष पहले ही ग्राहम बैल ने टेलीफोन बनाया था। एडीसन ने देख रखा था कि जब टेलीफोन में बात की जाती है तो धातु का एक डायाफ्राम कंपन करने लगता है और उससे शब्द तरंगें उत्पन्न होने लगती हैं। एडीसन के मन में विचार आया कि क्यों न शब्द तरंगें उत्पन्न करने वाले डायाफ्राम में सुई लगाकर किसी घूमते ड्रम की सतह पर उनके अनुरूप गड्ढेदार लकीरें खोद ली जायें। अब यदि इस लकीर के गड्ढे में सुई फंसाकर, उसका संबंध धातु के डायाफ्राम से कर दें

तो ड्रम घुमाने पर धातु के डायाफ्राम को शब्द तरंगों द्वारा बनाये गए मार्ग के अनुसार कंपन करना होगा। तब यह संभव है कि वह डायाफ्राम उन्हीं शब्दों को बोलकर सुना दे जिनके अनुरूप ड्रम पर चिह्न बनाये गए हैं।

एडीसन ने थोड़ी देर तक अपनी सारी योजना पर विचार किया। फिर कागज उठाकर अपने सधे हाथों से एक नई मशीन के लिए अजब सी आकृति खींच दी। नौकर भेज कर उन्होंने शीघ्र ही अपनी प्रयोगशाला के मशीन विभाग के अध्यक्ष जौन क्रियूसी को बुलाया। जितनी देर में वह एडीसन तक पहुंचे उतनी देर में उन्होंने अपनी नई मशीन की लागत भी आंक ली। नई मशीन के रेखाचित्र के एक कोने पर उन्होंने लिख दिया, "अनुमानित लागत 18 डालर"।

जैसे ही एडीसन के पास जोन क्रियूसी पहुंचे, वैसे ही एडीसन ने उनके हाथों में अपनी नई मशीन का रेखाचित्र थमा दिया और कहा, "मैं चाहता हूं कि इस मशीन को जल्दी-जल्दी तैयार किया जाये। जैसे ही यह मशीन तैयार हो जाये, वैसे ही इसे लेकर मेरे पास आओ, और ध्यान रहे कि इसपर लागत 18 डालर से अधिक नहीं आनी चाहिए।"

कुछ घंटों बाद जौन क्रियूसी, एडीसन के पास एक अजब-सी दीख पड़ने वाली मशीन लेकर उपस्थित हुए। यह मशीन एक बड़े से लकड़ी के आधार पर जड़ी थी। मशीन में दो पाये थे जिनके बीच धातु की एक लम्बी छड़ की मदद से एक सिलिंडर लगा हुआ था। सिलिंडर के बीचों बीच गुजरने वाली धातु की इस लम्बी छड़ के एक सिरे पर एक पहिया था और दूसरे सिरे पर उस छड़ को घुमाने के लिए एक हत्था लगा हुआ था और जब हत्थे को घुमाया जाता था तो सिलिंडर घूमता भी था ओर साथ ही साथ एक ओर सरकता भी जाता था। सिलिंडर की सतह पर एक हल्की सी लकीर बनी हुई थी। यह लकीर सिलिंडर के एक सिरे से

आरंभ होकर दूसरे सिरे तक इसप्रकार बनी हुई थी जैसे उसपर कोई धागा लिपटा हो। इस लकीरदार सिलिंडर के ऊपर एक भोंपू या हार्न लगा था जिसके पिछले भाग में डायाफ्राम था। डायाफ्राम का अंतिम भाग एक तेज व नुकीले पिन के रूप में था जो बहुत सावधानी से उस सिलिंडर की सतह पर टिका हुआ था। हत्था घुमाने पर जब सिलिंडर घूमता हुआ सरकता था तो यह पिन सिलिंडर में बनी लकीरों पर चलता था।
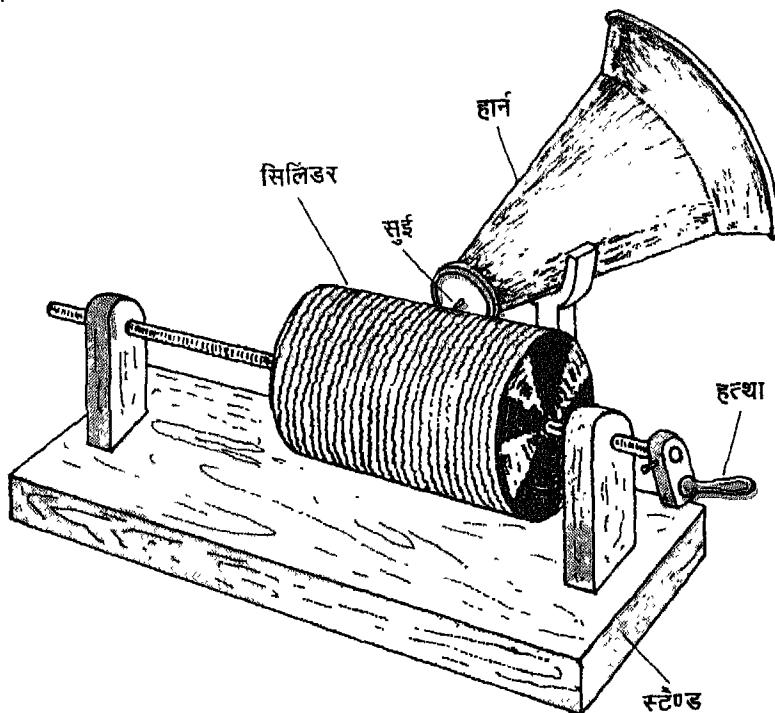
चित्र 10 एडीसन का फोनोग्राफ

जौन क्रियूसी ने एडीसन को उनकी नई मशीन थमाते हुए कहा, ''यह रही आपकी नई मशीन, पर यह किस लिए बनाई गई है।''

एडीसन ने उत्तर दिया, ''यह बात करने वाली मशीन है। ये बोलेगी।''

यह सुनकर जौन क्रियूसी हैरानी में पड़ गए। उन्हें लगा कि उनका मालिक मजाक कर रहे हैं। वह बोले, ''यदि आपकी मशीन सचमुच बोलकर दिखलाए तो मैं दो डालर दूंगा''। किसी ने उन्हें बढ़िया सिगारों का डिब्बा भेंट करने की बात की।

एडीसन और उनके सहयोगियों के बीच यह शर्त सुनकर कई कर्मचारी वहां आ गए और सभी नई मशीन के बारे में तरह-तरह की बातें करते रहे। एडीसन यह सब कुछ चुपचाप सुनते रहे। उन्होंने मशीन के लकीरदार सिलिंडर पर टीन की बहुत पतली पतरी लपेट दी। फिर डायाफ्राम की नोकदार पिन को टीन की पतरी पर धीमे से टिका दिया। अब उन्होंने हत्थे को धीरे-धीरे, लेकिन एक ही चाल से, घुमाना शुरू कर दिया। जब सिलिंडर घूमने लगा तो उन्होंने होर्न के भीतर अपना मुह डालकर अंग्रेजी की एक कविता बोलनी शुरू कर दी। ''मेरी हैड ए लिटिल लैम्ब....'', वे कविता बोलते गए और हत्था घुमाते गए। जब कविता पूरी हो गई तो उन्होंने हत्था घुमाना बन्द कर दिया।

अब एडीसन ने हत्था उल्टा घुमाना शुरू कर दिया और सिलिंडर को वापस उसी स्थान पर लौटा लाए जहां से उसे घुमाना आरंभ किया था। डायाफ्राम के पिन को टीन की पतरी पर खिंची लकीर पर टिकाया और हत्थे को फिर आगे की ओर घुमाना आरंभ किया। उन्हें आशा थी कि मशीन बोलेगी, परन्तु उसमें से कोई आवाज न आई। पास खड़े कर्मचारी एक दूसरे को इशारा करके एडीसन की मशीन का मजाक उड़ाने लगे। एक ने तो माथे पर उंगली घुमाकर इशारा किया कि

मालिक का दिमाग खराब हो गया है। एडीसन ने यह सब कुछ देख लिया पर वे अपने काम में लगे रहे और बोले, "लगता है मेरी मशीन में कोई खराबी आ गई, नहीं तो यह अवश्य बोलती।"

एडीसन ने सिलिंडर पर चढ़ी टीन की पतरी को ध्यान से देखा। उन्होंने पाया कि पिन की नोक ने टीन की पतरी को एक स्थान पर फाड़ दिया है। वे टीन की पतरी को उतारते हुए बोले, "मैं दुबारा कोशिश करता हूं।" उन्होंने टीन की एक नई पतरी को सिलिंडर पर बड़ी सावधानी से चढ़ाया और उसकी धारियों के बीच अच्छी तरह से दबाया। इसके बाद उन्होंने बहुत सावधानी से डायाफ्राम के पिन की नोक को टीन की पतरी पर टिका दिया और हत्थे को एकसमान चाल से घुमाना शुरू किया। जब सिलिंडर घूमने लगा तो उन्होंने अंग्रेजी की वही कविता, "मेरी हैड ए लिटिल लैम्ब..." बोलनी शुरू कर दी। जब कविता समाप्त हो गई तो उन्होंने पिन हटाकर सिलिंडर को वापस घुमाया और इसप्रकार उसे उसी स्थान पर ले आए जहां से उन्होंने उसे घुमाना शुरू किया था। एडीसन ने फिर पिन की नोक को टीन की पतरी पर सावधानी से टिकाया और हत्थे को घुमाकर सिलिंडर को चलाना शुरू किया। पिन की नोक उसी शब्द मार्ग पर चलने लगी जो अभी पिन की नोक ने बनाया था और आसपास खड़े सभी लोगों ने धड़कते दिलों से सुना कि मशीन अपनी आवाज में बोल रही है कि,

"मेरी हैड ए लिटिल लैम्ब
इट्स फ्लीज वाज व्हाइट एज् स्नो
एंड ऐवरी व्हेयर दैट मेरी वैन्ट
दी लैम्ब वाज श्योर टू गो"

मशीन को बोलता सुनकर सभी लोग खुशी से नाच उठे। बोलने वाली मशीन, जिसकी उन्होंने कभी कल्पना भी न की थी, उनके सामने

गीत गा रही थी। पर तब वह मशीन बड़ी नाजुक थी। आवाज भी बहुत जोर की न थी। दो-तीन बार बजाने पर टीन की पतरी पर खुदी लकीर मिट जाती थी। लेकिन फिर भी यह एक बडी सफलता थी। इतिहास में पहली बार मनुष्य ने आवाज को टीन की पतरी पर अंकित करके उसे दुबारा सुना था।

फोनोग्राफ का प्रदर्शन

सन् 1878 में एडीसन को अपनी बोलने वाली मशीन का पेटेंट मिल गया। पेटेंट मिल जाने के बाद एडीसन ने घोषणा कर दी कि उन्होंने बोलने वाली मशीन बना ली है। उन्होंने आवाज भरने व दोहराने वाली इस मशीन का नाम रखा, फोनोग्राफ।

हम सभी जानते हैं कि फोन का अर्थ होता है आवाज। इसप्रकार फोनोग्राफ का शाब्दिक अर्थ हुआ, वह युक्ति जिसमें आवाज के अनुरूप चिह्न अंकित हों। एडीसन ने अपने फोनोग्राफ के बारे में प्रचार किया कि आप इसके आगे जो कुछ बोलेंगे, यह मशीन वही सब कुछ अपने लहजे में दुहरा देगी। लेकिन लोगों ने इस बात पर विश्वास नहीं किया। वे सोचने लगे कि कहीं एडीसन ने कोई ऐसी विद्या तो नहीं सीख ली जिससे वे स्वयं किसी भी आवाज की नकल कर लेते हैं।

दुनिया को यह विश्वास दिलाने के लिए कि मनुष्य की आवाज को सचमुच अंकित किया जा सकता है और फिर उसे कभी भी सुना जा सकता है, एडीसन ने अपनी मशीन का अमेरिकन एकेडमी ऑफ साइन्सेस के आगे प्रदर्शन करना तय किया। वे इस हेतु वाशिंगटन पहुंचे और वैज्ञानिकों की इस सभा में अपनी आश्चर्यजनक मशीन का प्रदर्शन किया। उन्होंने टीन की पतरी से बनी अपनी मशीन का जैसे ही हत्था

घुमाया, वह बोल उठी, "यह बोलने वाली मशीन अमेरिकन एकेडमी ऑफ साइन्सेस के सामने अपने आपको प्रस्तुत करते हुए बड़ा सम्मान अनुभव करती है।" इसके बाद टीन की पतरी की मशीन ने मेमने वाली कविता सुनाई। कई गीत गाए। सीटी बजाई। छींककर और खांसकर दिखलाया। अब तो सबको विश्वास हो गया कि फोनोग्राफ मशीन सचमुच बोलती है।

फोनोग्राफ के इस प्रदर्शन ने अमेरिका में धूम मचा दी। आधी रात से कुछ समय पहले एडीसन को अमेरिका के प्रेसीडेंट रदरफोर्ड बी० हैस का संदेश मिला कि वे उनकी बोलने वाली मशीन देखना चाहते हैं। अपनी बोलने वाली मशीन लेकर एडीसन व्हाइट हाउस पहुंचे। व्हाइट हाउस अमेरिका के प्रेसीडेंट का सरकारी निवास है। तब तक रात के बारह बज चुके थे। व्हाइट हाउस में प्रेसीडेंट हैस व अन्य महत्वपूर्ण व्यक्ति एडीसन का इंतजार कर रहे थे। एडीसन के पहुंचने पर सबने उनका स्वागत किया और उनसे कहा कि वे अपनी आश्चर्यजनक मशीन दिखलायें। एडीसन ने अपने फोनोग्राफ को मेज पर रखा और उसे चलाया तो मेमने वाली कविता सुनकर सभी दंग रह गए। मशीन ने हंस कर व गीत गाकर सभी को अचंभे में डाल दिया। प्रेसीडेंट हैस ने अपनी पत्नी को जगाकर उन्हें भी इस आश्चर्यजनक मशीन को दिखलाया। यह सब कुछ रात के तीन बजे तक चलता रहा।

सिलिंडर के स्थान पर डिस्क

एडीसन की टीन की परत वाली मशीन बड़ी नाजुक थी। दो तीन बार बजाने पर टीन की पतरी पर खुदी लकीर मिट जाती थी। आवाज भी जोर की न आती थी। मशीन में कई तरह के सुधार करने आवश्यक

थे। लेकिन उन दिनों एडीसन को जरा भी फुरसत न थी। उन दिनों टेलीफोन और बिजली के बल्बों का विकास कार्य तेजी से चल रहा था। एडीसन अपना सारा समय बिजली के बल्बों को सुधारने में लगाना चाहते थे, इसलिए उन्होंने फोनोग्राफ में सुधार का काम कुछ समय के लिए रोक दिया। इस ओर उन्होंने दुबारा ध्यान दिया, ठीक दस वर्ष बाद।

इस बीच फोनोग्राफ को बेहतर बनाने के लिए कई अन्य व्यक्तियों ने भी काम किया। सी० एस० टेनटेर व सी० बेल ने टीन की पतरी की जगह मोम का उपयोग किया। वाशिंगटन में बसे एक जर्मन व्यक्ति इमिले बेरलीनर ने सन् 1887-88 में सिलिंडर के स्थान पर डिस्क का उपयोग किया। टीन की पतरी में तो आवाज का अंकन गड्ढे की गहराई के रूप में किया जाता था लेकिन इस जर्मन व्यक्ति ने आवाज को गोलाकार तश्तरियों या डिस्कों पर लहरियों के रूप में खाँचे काटकर अंकित किया। उन्होंने ध्वनि अंकन व पुनरुत्पादन के लिए घूमते मंच का उपयोग किया जिसपर गोलाकार डिस्क रखकर घुमाई जाती थी।

मंच घुमाने के लिए इमिले बेरलीनर ने फनर व चाबी का प्रबन्ध सुझाया जिससे हाथ के हत्थे से घुमाने की पुरानी विधि से छुटकारा मिल गया। उन दिनों जिस डिस्क पर ध्वनि का अंकन किया जाता था, उसी डिस्क को बजाने के काम भी लाया जाता था—अंकित डिस्क की प्रतिलिपि बनाने की तब कोई विधि मालूम न थी। कलाकारों को वही गीत बार-बार गाना पड़ता था। इस कमी को दूर करने के लिए इमिले बेरलीनर ने अंकित डिस्क की प्रतिलिपि प्राप्त करने के उपाय ढूंढ़ निकाले। अब बाजार में ध्वनि अंकित डिस्क, जिन्हें रिकार्ड कहा जाता है, अलग से मिलने लगे। इन्हें मंच पर चढ़ाकर घुमाया जाता था। इमिले बेरलीनर ने घूमते मंच पर चढ़े रिकार्ड बजाने की मशीन का नाम

ग्रामोफोन दिया। फोनोग्राफ शब्द फोन और ग्राफ शब्दों से मिलकर बना है, जबकि ग्रामोफोन शब्द ग्राम और फोन शब्दों से। हम सभी जानते हैं कि फोन एक अंग्रेजी शब्द है जिसका अर्थ होता है ध्वनि। इसके अतिरिक्त ग्राफ और ग्राम वे शब्द हैं जो रेखा चित्रों के लिए काम में लाये जाते हैं। यदि हम ध्यान से देखें तो पाते हैं कि ग्रामोफोन और फोनोग्राफ शब्दों में फोन शब्द की स्थिति बदली हुई है। इसप्रकार, जबकि फोनोग्राफ वह युक्ति है जिसका मुख्य काम ध्वनि के अनुरूप रेखा चित्र बनाना होता है, ग्रामोफोन वह चीज है जिसके द्वारा खिंचे हुए रेखाचित्र अथवा 'रिकार्ड' बजाने पर ध्वनि प्राप्त की जाती है।

पुराने किस्म के रिकार्ड और ग्रामोफोन

सन् 1910 तक डिस्क पर चक्राकार खाँचों के टेड़े-मेड़े चिह्नों के रूप में अंकित गानों के रिकार्ड और उन्हें बजाने के लिए चाबी वाले ग्रामोफोन का खूब प्रचलन हो गया था। यद्यपि कलाकारों को अपना कार्यक्रम अंकित कराने में काफी परेशानी झेलनी पड़ती थी, तो भी इस सदी के आरंभ में बड़े-बड़े कलाकारों के रिकार्ड बाजार में मिलने लगे थे। उन दिनों कलाकारों को इकट्ठा करके उन्हें एक भोंपू के आगे अपना कार्यक्रम देने को कहा जाता था। इस भोंपू का पिछला सिरा दीवार में छेद बनाकर उस कमरे में जाता था जिसमें ध्वनि अंकित करने वाली मशीन लगी हो। प्रारंभ में गीतों के रिकार्ड बनाए गए, फिर वायलिन जैसे वाद्यों के। लेकिन उन दिनों पियानों की पूरी झंकार देने वाले रिकार्ड बनाना संभव न था। सन् 1903 में पहले ओपरे का रिकार्ड बना और सन् 1909 में पूरे ओर्केस्ट्रा का। सन् 1905 तक दोनों ओर अंकित रिकार्ड बनने लगे थे। लेकिन उन दिनों के रिकार्ड बड़े नाजुक होते थे।

जरा सी चोट लगने पर चटक जाते थे। वे घिसते भी बहुत जल्दी थे।

पुराने जमाने के ग्रामोफोन में चार मुख्य भाग होते थे–

(1) घूमने वाला मंच

(2) साउंड बक्स से जाने वाली भुजा

(3) साउंड बक्स

(4) होर्न या भोंपू

ग्रामोफोन के मंच को चाबी भरकर चलाया जाता था। मंच पर रिकार्ड रखा जाता था और साउंड बक्स में नई सुई लगाकर उसे घुमाते हुई रिकार्ड के सिरे पर टिका दिया जाता था। साउंड बक्स ले जाने वाली भुजा एक स्तंभ के गिर्द इसप्रकार घूमती थी कि जिससे सुई रिकार्ड के खाँचों से सही कोण बनाए। साउंड बक्स के साथ एक बड़ा सा होर्न जुड़ा होता था जिससे आवाज आती थी।

पुराने जमाने के ग्रामोफोन पूर्णतः यांत्रिक थे। उनका सबसे महत्वपूर्ण भाग साउंड बक्स कहलाता था। साउंड बक्स द्वारा ही ध्वनि उत्पन्न होती थी, हार्न तो केवल ध्वनि के विस्तार के काम आता था। साउंड बक्स धातु का एक डायाफ्राम होता था जो रबर के दो छल्लों के बीच इसप्रकार तना होता था कि उसका केवल मध्य भाग ही स्वतंत्रतापूर्वक कंपन कर सके।
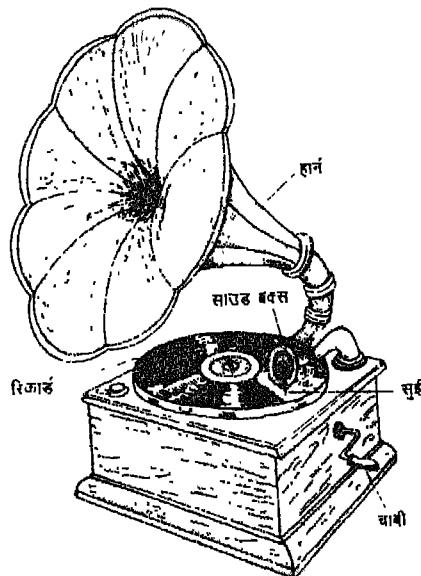
चित्र 11 पुराने किस्म का ग्रामोफोन

डायाफ्राम के मध्य भाग से एक धातु की पत्ती जुड़ी होती थी जिसके दूसरे सिरे पर एक कीलक में नुकीली सुई लगाने का प्रबन्ध होता था। चाबी की मदद से जब मंच को घुमाया जाता था तो सुई सर्पिल खाँचों में दायें-बायें कंपन करती हुई चलती थी। सुई के कंपनों की वजह से डायाफ्राम भी कंपन करने लगता और इस प्रकार वायु में ध्वनि तरंगें उत्पन्न हो जाती थीं।

रेडियो के आविष्कार से पहले ग्रामोफोन मनोरंजन का सबसे अधिक लोकप्रिय साधन था। उन दिनों ध्वनि प्रबल बनाने के कोई साधन न थे, इसकारण ग्रामोफोन की आवाज बहुत जोर की तो नहीं मिलती थी लेकिन फिर भी उसे एक बड़े कमरे में सुना जा सकता था।

3. रिकार्ड बनाने और बजाने में बिजली का उपयोग

पुराने जमाने में रिकार्ड बनाने और उसे बजाने का सारा काम बगैर बिजली के होता था। रिकार्ड बनाने के लिए कलाकारों को भोंपू में मुंह डालकर गीत गाने होते थे और रिकार्ड सुनने के लिए भी भोंपू के आगे बैठना होता था। लेकिन सन् 1924 के बाद से रिकार्ड बनाने के लिए बिजली का उपयोग होने लगा। सन् 1927 तक बाजार में ऐसे ग्रामोफोन मिलने लगे जिनमें साउंड बक्स के स्थान पर बिजली के पिक-अप होते थे। धीरे-धीरे इन्हीं ग्रामोफोनों ने वह रूप ले लिया जिन्हें आज रिकार्ड प्लेयर के नाम से जाना जाता है।

रिकार्ड बनाने और उसे बजाने में बिजली का उपयोग तब संभव हुआ जब माइक्रोफोन, स्पीकर और एम्प्लीफायर जैसी युक्तियां बाजार में मिलने लगीं। हम सभी जानते हैं कि माइक्रोफोन के आगे जब कुछ बोला जाता है उसके साथ जुड़े तारों में आवाज के अनुरूप विद्युत धारा का उतार-चढ़ाव होने लगता है। आवश्यकता पड़ने पर विद्युत धारा के इस उतार-चढ़ाव को एम्प्लीफायर की मदद से प्रबल बनाया जा सकता है। एम्प्लीफायर द्वारा प्रबल बनाई गई इस धारा को स्पीकर के भीतर भेजने पर जोरदार आवाज पैदा होती है। ट्रांजिस्टरों की खोज से पहले सन् 1960 तक रेडियो वाल्वों की मदद से बने एम्प्लीफायरों का उपयोग किया जाता था लेकिन आजकल तो सभी कामों में ट्रांजिस्टरों द्वारा बनाए गए एम्प्लीफायरों का प्रयोग होता है। ट्रांजिस्टरों युक्त एम्प्लीफायर

हल्के, सस्ते और शीघ्र चालू होने वाले होते हैं। वे बिजली की खपत भी कम करते हैं।

रिकार्ड बनाने की विद्युत-चुंबकीय विधि

बिजली की मदद से रिकार्ड काटने वाली युक्ति विद्युत धारा के एक मामूली सिद्धांत पर काम करती है। इस सिद्धांत के अनुसार जब किसी तार में विद्युत धारा बहती है तो वह तार चुंबक जैसा प्रभाव पैदा करता है। यह बात तो कोपनहेगन के एक वैज्ञानिक ओस्ट्रेड ने बहुत सालों पहले ही देख रखी थी। उन्होंने पाया था कि जब किसी तार में विद्युत धारा भेजी जाती है तो उसके पास रखी चुंबकीय सुई घूम जाती है। इससे प्रगट होता है कि विद्युत धारा ले जाने वाला तार का गुच्छा चुंबक की तरह काम करता है। विद्युत धारा ले जाने वाले तार के गुच्छे को कुंडली कहते हैं। पाया गया है कि कुंडली में जितनी अधिक धारा बहती है वह उतनी ही प्रबल चुंबक बन जाती है। धारा की दिशा बदलने पर चुंबकत्व की दिशा भी बदल जाती है अर्थात् यदि कुंडली का सामने वाला भाग उत्तरी ध्रुव की तरह काम कर रहा था तो धारा की दिशा बदलने पर वह दक्षिणी ध्रुव जैसा काम करने लगता है।
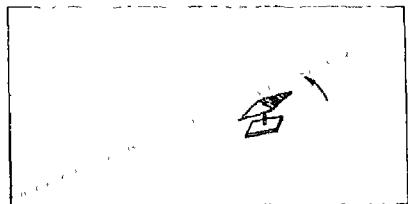
चित्र 12 तार के पास रखी चुंबकीय सुई तब विक्षेपित हो जाती हैं जब तार में विद्युत धारा भेजी जाती है। इससे स्पष्ट है कि धारावाही चालक चुंबक जैसे प्रभाव उत्पन्न करता है।

धारा से जा रही कुंडली को विद्युत चुंबक भी कह सकते हैं क्योंकि

यह ठीक वैसा ही व्यवहार करती है जैसे कोई चुंबक। धारावाही कुंडली को जब किसी चुंबक के पास लाया जाता है तो वे दोनों एक दूसरे को उसीप्रकार आकर्षित या प्रतिकर्षित करते हैं जैसे कोई दो चुंबक। अगर चुंबक किसी आधार पर कसा हो और कुंडली स्वतंत्रतापूर्वक लटकी हो तो ऐसी दशा में चुंबक तो चल नहीं पाता। तब कुंडली को ही चलना होता है। अब यदि कुंडली में किसी दिशा में धारा भेजने पर वह आकर्षित होती है तो स्पष्ट है कि धारा की दिशा बदल देने पर वह प्रतिकर्षित होगी। सवाल उठता है कि तब क्या होगा जब कुंडली में जा रही विद्युत धारा की दिशा बार-बार बदले? तब कुंडली कभी आकर्षित होगी और कभी प्रतिकर्षित। फलस्वरूप कुंडली अपनी मध्य स्थिति के दोनों तरफ कंपन करने लगेगी। जोरदार कंपन पाने के लिए कुंडली को नाल आकृति के शक्तिशाली चुंबक के ध्रुवों के बीच लटकाना अच्छा होता है।

रिकार्ड काटने की मशीन में इन्हीं बातों का उपयोग किया जाता है। इसका मुख्य भाग कटर होता है। कटर में एक विद्युत चुंबक होता है। इस चुंबक के ध्रुवों के बीच तार लिपटी लोहे की एक वस्तु लटकी होती है। इसे आर्मेचर कहते हैं। जब आर्मेचर की कुंडली में धारा भेजी जाती है तो चुंबकीय ध्रुवो के बीच लटका हुआ यह आर्मेचर घूम जाता है। आर्मेचर की कुंडली में वह धारा भेजी जाती है जो हमें एम्प्लीफायर से तब मिलती है जब उससे जुड़े माइक्रोफोन में बोला जाता है। यह धारा हमारी आवाज के अनुरूप बढ़ती घटती है। इस कारण ऐसी धारा को कुंडली में भेजने पर आर्मेचर हमारी आवाज के अनुरूप कंपन करने लगता है। आर्मेचर के नीचे एक सुई जुड़ी होती है। स्पष्ट है कि माइक्रोफोन के आगे बोलने पर सुई जोरदार कंपन करने लगती है।
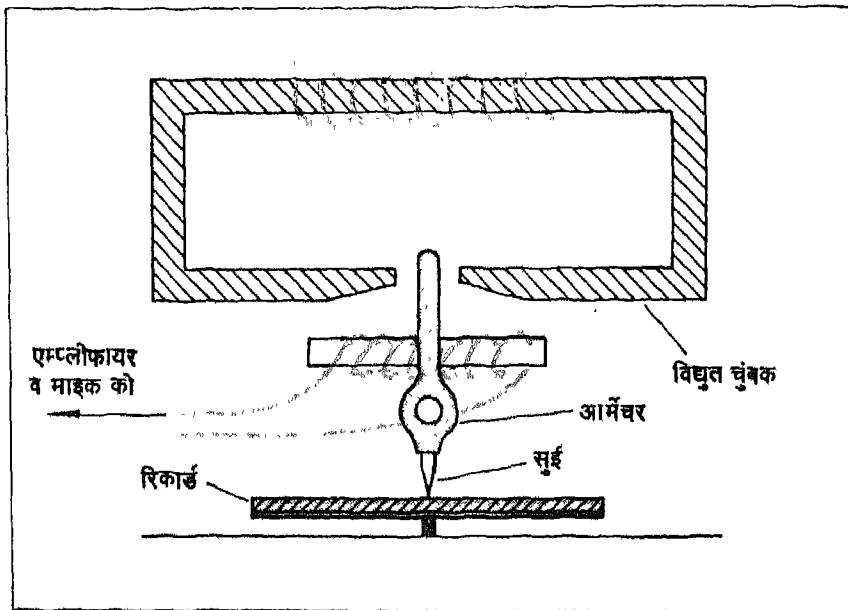
चित्र 13 कटर

पुराने जमाने की मशीनों में सुई के कंपन आवाज से सीधे ही उत्पन्न होते थे, इसलिए ये काफी मंद होते थे। सुई के इन हल्के कंपनों की वजह से बढ़िया रिकार्ड नहीं बनता था। लेकिन विद्युत चालित कटर में सुई के कंपन एम्प्लीफायर द्वारा दी गई शक्ति की वजह से इतने जोरदार होते हैं कि उससे बढ़िया किस्म का रिकार्ड काटा जा सकता है। काटने की क्रिया को तीखा करने के लिए सुई को गर्म रखा जाता है। इस हेतु सुई पर हीटर तार लपेट दिया जाता है। रिकार्ड काटने के लिए कटर को घूमते मंच पर रखी मोम की डिस्क पर टिका दिया जाता है। आजकल मोम की डिस्क के स्थान पर लेकर चढ़ी डिस्क का उपयोग

किया जाता है। लेकर एक प्रकार का वार्निश जैसा पदार्थ होता है। सुई के कंपन की वजह से लेकर डिस्क पर लहरिएदार खाँचा कटने लगता है। क्योंकि कटर स्वयं भीतर की ओर धीमी गति से चलता है, यह कटा खाँचा पूरी तौर पर गोलाकार न होकर सर्पिल आकृति का होता है। इसलिए यह कहना उचित होगा कि ग्रामाफोन रिकार्ड में खाँचों के रूप में केवल एक लकीर होती है जो रिकार्ड के बाहरी किनारे से सर्पिल के रूप में घूमती हुई भीतर की ओर आती है। कटर द्वारा काटा गया पदार्थ महीन डोरे के रूप में निकलता रहता है जिसे खींच कर अलग कर देते हैं।

रिकार्डों का व्यवसायिक उत्पादन

रिकार्ड बनाने वाली मशीन से एक रिकार्ड बनाने में कम से कम उतना समय तो लगता ही है जितने समय का कार्यक्रम उसमें अंकित किया गया है। यदि इसी चाल से एक के बाद एक रिकार्ड बनाई जाये तो एक दिन में दो-तीन-सौ से अधिक रिकार्ड बनाना संभव न होगा। ऐसी धीमी चाल से बनी रिकार्डें इतनी महंगी होंगी कि उन्हें बाजार में बेचना मुश्किल होगा। इसलिए आवश्यकता इस बात की है कि किताबों की तरह ग्रामाफोन रिकार्डों को भी छापा जाये। ग्रामोफोन की लोकप्रियता की वजह से अब ऐसी अनेक विधियां खोज ली गईं जिनके द्वारा एक दिन में किसी रिकार्ड की हजारों प्रतिलिपियां तैयार की जा सकती हैं।

ग्रामोफोन रिकार्डों के व्यवसायिक उत्पादन के लिए पहले धातु का एक ठप्पा तैयार कर लेते हैं। फिर प्लास्टिक की तश्तरियों पर इस ठप्पे को मारकर रिकार्ड तैयार किये जाते हैं। ठप्पा मारने का काम मशीनों से होता है, इसलिए एक दिन में एक रिकार्ड की हजारों प्रतिलिपियां बन

कर तैयार हो जाती है। ठप्पा मारने वाली धातु की प्लेट को स्टेपलर कहते हैं।

रिकार्ड बनाने वाली मशीन द्वारा काटी गई मोम या लेकर का रिकार्ड इतना नरम होता है कि उससे सीधे ही स्टेपलर नहीं बनाया जाता। मोम या लेकर के इस रिकार्ड को आरिजनल रिकार्ड कहते हैं। आरिजनल रिकार्ड को बजाया भी नहीं जाता है। उसे बड़ी सावधानी से रखा जाता है। आगे की क्रिया करने से पहले ओरिजनल रिकार्ड का बड़ी बारीकी से निरीक्षण किया जाता है। यदि इसमें कोई दोष न पाये जायें तो ओरिजनल रिकार्ड पर ग्रेफाइट पाउडर फैला दिया जाता है। फिर विद्युत लेपन की क्रिया से उसपर धातु की परत चढ़ा दी जाती है। अब धातु की परत को सावधानी से उतारकर उसके पीछे एक भारी प्लेट जड़ दी जाती है। इसप्रकार बनी रिकार्ड को मास्टर रिकार्ड कहते हैं। मास्टर रिकार्ड में जहां गड्ढे होने चाहिए वहां नोकें निकली होती हैं, इसलिए मास्टर रिकार्ड को निगेटिव भी कहते हैं। क्योंकि निगेटिव में खांचे उल्टे होते हैं इसलिए इसे बजाने का प्रश्न ही नहीं उठता। स्पष्ट है कि एक आरिजनल रिकार्ड से केवल एक मास्टर रिकार्ड ही बनाया जा सकता है।

कई घोलों में डुबाने के बाद मास्टर रिकार्ड पर भी विद्युत लेपन किया जाता है। विद्युत लेपन द्वारा बनी धातु की परत को सावधानी से उतारकर उसके पीछे भी एक भारी प्लेट जड़ देते हैं। इसप्रकार बने रिकार्ड को मदर रिकार्ड कहते हैं। एक मास्टर रिकार्ड से कई मदर रिकार्ड बना लिए जाते हैं। मदर रिकार्ड में खांचे उल्टे नहीं होते। आगे की क्रिया करने से पहले सभी मदर रिकार्डों को बजाकर देख लिया जाता है। जो मदर रिकार्ड दोषपूर्ण पाए जाते हैं उन्हें नष्ट कर दिया जाता है।
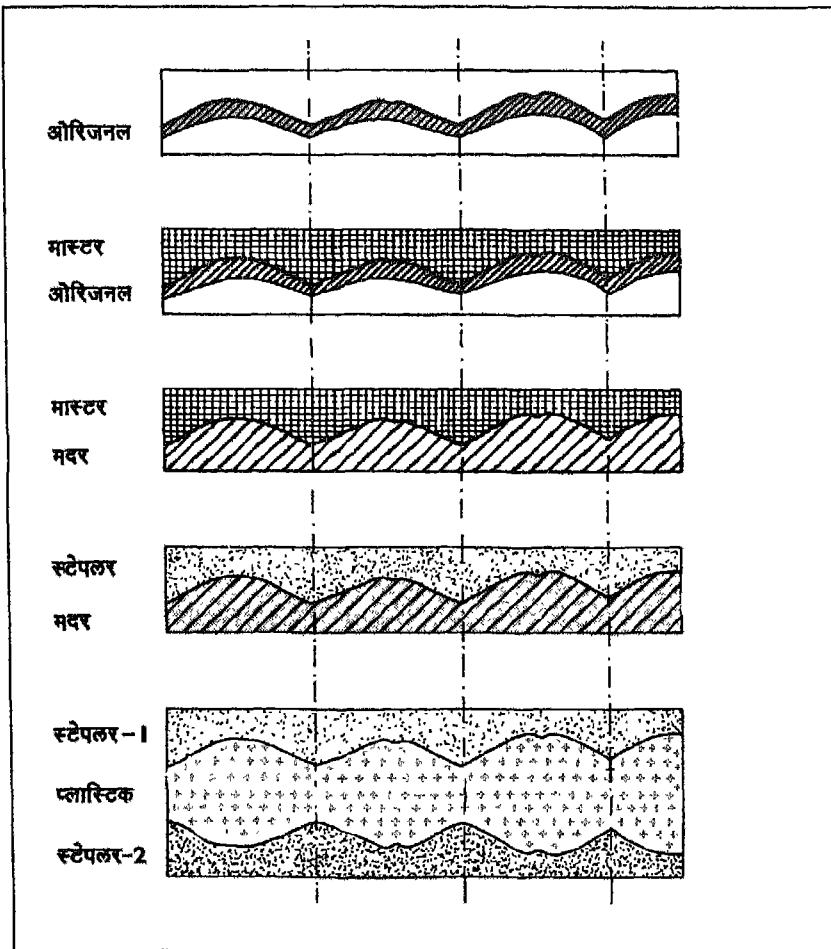
चित्र 14 व्यवसायिक तौर पर रिकार्ड बनाने की विधि

ठीक पाए गए मदर रिकार्ड को भी बाजार में बेचा नहीं जाता, वरन् सभी तरह से ठीक पाई गई मदर रिकार्ड पर फिर विद्युत लेपन क्रिया से

स्टेपलर बना लिए जाते हैं। एक मदर रिकार्ड से कई स्टेपलर बनाये जाते हैं। स्टेपलर में खांचे उल्टे होते हैं।

अन्त में प्लास्टिक की गोलाकार तश्तरियों के दोनों ओर स्टेपलरों के ठप्पे मारकर वैसे रिकार्ड तैयार कर लिये जाते हैं जैसे कि बाजार में मिलते हैं। ठप्पे मारने की क्रिया बहुत तेजी से की जाती है, इसप्रकार एक ही दिन में एक ही तरह की हजारों रिकार्ड तैयार हो जाती हैं।

किसी भी रिकार्ड के बीच की जगह में कोई खाँचा नहीं होता। इस खाली जगह में कागज चिपका देते हैं। इस कागज पर अंकित कार्यक्रम के बारे में संक्षिप्त जानकारी छपी होती है।

तरह-तरह के रिकार्ड

ग्रामोफोन रिकार्ड दो तरह के होते हैं—मोटे खाँचे वाले और महीन खाँचे वाले।

सन् 1950 तक बाजार में केवल मोटे खाँचे वाले रिकार्ड मिलते थे। इन्हें काफी तेज चाल से घुमाना पड़ता था। 78 चक्र प्रति मिनट की दर से घूमने पर 30 सेमी (12 इंच) व्यास वाले रिकार्ड में केवल 4-5 मिनट का कार्यक्रम रहता था और 25 सेमी (10 इंच) व्यास वाले रिकार्ड में केवल 3 मिनट का। इन रिकार्डों पर 100 हर्ट्ज से नीचे व 8000 हर्ट्ज के ऊपर की आवाजें ठीक तरह से अंकित नहीं हो पाती थीं। ये रिकार्ड किसी काले पदार्थ से बनाये जाते थे जो बहुत नाजुक होते थे और जरा सी चोट लगने पर चटक जाते थे। वे घिसते भी बहुत जल्दी थे। इसतरह के रिकार्ड बनना अब प्रायः बन्द हो चुका है।

सन् 1950 के बाद से धीमी चाल से चलने वाले रिकार्ड बनने

लगे। आजकल इन्हीं रिकार्डो का प्रचलन है। ये रिकार्ड विशेष रूप से तैयार किए गए प्लास्टिक से बनाए जाते हैं। इनमें बड़े महीन खाँचे कटे होते हैं। धीमी गति व महीन खाँचों की वजह से ये लम्बे समय तक बज सकते हैं। इनमें प्रति 18 सेमी (7 इंच) व्यास वाले रिकार्ड यदि 45 चक्र प्रति मिनट की चाल से चलाया जाये तो वह लगभग 5 मिनट तक बज सकता है। इन्हें बढ़े हुए समय वाला रिकार्ड कहा जाता है। 30 सेमी (12 इंच) के वे रिकार्ड जिसे $33\frac{1}{3}$ चक्र प्रति मिनट के हिसाब से चलाया जाता है, लगभग 30 मिनट तक बज सकते हैं, इसलिए इन्हें दीर्घ समय वाले रिकार्ड कहा जाता है। महीन खाँचे वाली ये रिकार्ड 20000 हर्ट्ज तक की आवाज अंकित कर सकते हैं। ये रिकार्ड आसानी से चटकते या टूटते भी नहीं। हल्के भार वाले पिक-अप से बजाने पर ये कम घिसते हैं और बरसों आपका मनोरंजन कर सकते हैं।

किसी रिकार्ड के बाहरी किनारे पर खाँचा कटा नहीं होता वरन् कुछ स्थान खाली होता है। रिकार्ड बजाने के लिए सुई को पहले इसी खाली किनारे पर टिकाया जाता है। फिर उसे धीरे से भीतर की तरफ धकेल दिया जाता है जिससे सुई की नोक खाँचे के बीच आ जाये। खाँचे के आरंभ की कुछ दूरी तक कार्यक्रम अंकित नहीं रहता, जिससे रिकार्ड बजाते समय सुई रखने या धकेलने में हुई लापरवाही से अंकित कार्यक्रम बिगड़ नहीं पाता।

कार्यक्रम के समाप्त हो जाने के तुरन्त बाद खाँचे में तेज घुमाव दिया जाता है, जिससे पिक-अप भुजा को एक झटका लगता है। इस झटके के कारण स्वयं चालित ब्रेक लग जाते हैं और साथ ही रिकार्ड घुमाने वाली विद्युत मोटर का कनेक्शन टूट जाता है।

किसी भी रिकार्ड में कार्यक्रम उसके केन्द्र तक अंकित नहीं किया जाता क्योंकि जैसे-जैसे केन्द्र के नजदीक पहुंचते जाते हैं, वैसे-वैसे ध्वनि

अंकन का स्तर गिरता जाता है। इसका कारण यह है कि रिकार्ड के केन्द्र से लगभग 15 सेमी दूरी वाले बाहरी किनारे पर खाँचे की लम्बाई जितनी होती है केन्द्र से लगभग 5 सेमी दूरी पर खाँचे की लम्बाई घट कर एक तिहाई रह जाती है। इसलिए उतनी ही ध्वनि तरंगों को कम लम्बाई में सुकड़ना होता है। तरंगों के पास-पास आ जाने की वजह से केन्द्र के पास ध्वनि अंकन का स्तर गिर जाता है।

बिजली का रिकार्ड प्लेयर

रिकार्ड प्लेयर के चार मुख्य भाग होते हैं :

(1) घूमता मंच
(2) पिक-अप भुजा
(3) पिक-अप
(4) एम्प्लीफायर और स्पीकर

रिकार्ड प्लेयर के मंच पर पहले रिकार्ड रखा जाता है। फिर पिक-अप भुजा को उसके स्टेंड से उठाया जाता है। ऐसा करने पर विद्युत मोटर का कनेक्शन पूरा हो जाता है। कनेक्शन पूरा होते ही वह चलने लगती है। मोटर के चलने पर मंच घूमने लगता है। अब भुजा के आगे लगे पिक-अप की सुई को रिकार्ड के किनारे पर टिकाते हैं और भुजा को भीतर की तरफ हल्का सा धक्का देते हैं। ऐसा करने पर सुई खाँचे में आ जाती है और कंपन करने लगती है। सुई के कपनों की वजह से पिक-अप में विद्युत संकेत उत्पन्न हो जाते हैं। पिक-अप का संबंध एम्प्लीफायर से होता है जो इन विद्युत संकेतों को प्रबल बनाता है। एम्प्लीफायर के साथ एक या एक से अधिक स्पीकर जुड़े होते हैं जो सुई के कंपनों के अनुरूप जोरदार आवाज पैदा करते हैं।

घूमने वाला मंच

रिकार्ड प्लेयर में घूमने वाला मंच वास्तव में धातु की एक भारी प्लेट होती है। इसके ठीक बीच में एक छोटा-सा स्तंभ होता है। धातु की इस प्लेट पर मखमल, चमड़ा, रेक्सीन आदि का टुकड़ा बिछा होता है। रिकार्ड बजाने के लिए उसे इसी मंच पर रखा जाता है। रिकार्ड में बना छेद मंच के स्तंभ में फंस जाता है, इसलिए रिकार्ड इधर-उधर नहीं हो पाता।

मंच को बिजली की मोटर द्वारा घुमाया जाता है। आधुनिक रिकार्ड प्लेयर के मंच 78, 45 या $33\frac{1}{3}$ चक्र प्रति मिनट के हिसाब से घूम सकते हैं। एक लीवर की मदद से मनचाही गति तय की जा सकती है। यह बहुत आवश्यक है कि रिकार्ड प्लेयर का मंच सही गति से घूमे।

यदि रिकार्ड तेज या धीमे घूमता है तो ठीक आवाज नहीं मिलती। किसी निश्चित चाल से घूमने पर जहां एक सेंकड में 200 तरंगें पैदा हो रही हों, तो दुगनी चाल से घुमाने पर आधे सेकंड में ही इतनी तरंगें मिल जाती हैं। फलस्वरूप आवाज की आवृत्ति बदल जाती है इसलिए बहुत तेज घुमाने पर आदमी की आवाज औरतों जैसी सुनाई देने लगती है। यह देखने के लिए कि रिकार्ड सही चाल से घूम रहा है या नहीं, बाजार में सफेद और काले चिन्हों वाले तरह-तरह के कार्ड मिलते हैं। ऐसे कार्ड को रिकार्ड के ऊपर रखकर घुमाया जाता है और उसे वैसे प्रकाश में देखा जाता है जैसा उस कार्ड पर लिखा हो।

अक्सर इस कार्ड को एक खास लैंप से देखा जाता है जिसे आमतौर पर डिस्को लैंप कहते हैं पर वैज्ञानिक भाषा में इसे स्ट्रोबोस्कोपिक लैंप कहा जाता है। यह लैंप लगातार प्रकाश नहीं देता वरन् रुक-रुक कर प्रकाश देता है। इसी वजह से इसका प्रकाश झिलमिलाता सा लगता है।
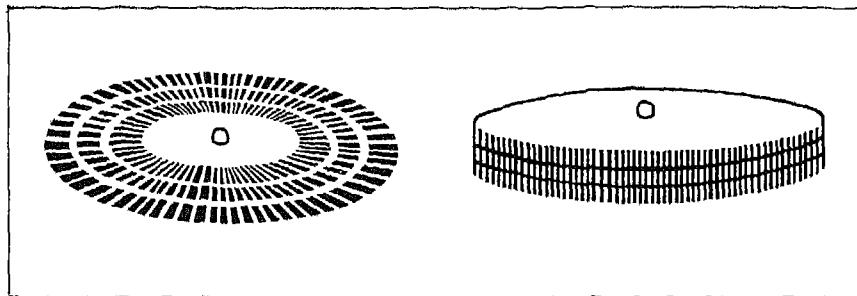
चित्र 15 (क) घूमने की चाल की जांच करने के लिए कार्ड (ख) घूमने वाले मंच पर लगे निशान जिन्हें झिलमिल प्रकाश से देखा जाता है। यह प्रकाश प्लेयर के साथ लगा लैम्प पैदा करता है।

अब अगर इस प्रकाश की झिलमिलाहट और एक काले चिह्न के बाद दूसरे काले चिह्न आने का समय मेल खा जाये तो काले सफेद चिह्नों वाला यह कार्ड रुका हुआ लगता है। यदि सचमुच ऐसा हो तो रिकार्ड को सही चाल से चलता समझना चाहिए। यदि रिकार्ड की चाल कम है तो काले चिह्न पिछड़ जाते हैं और ऐसा लगता है कि मानो कार्ड पीछे की तरफ घूम रहा है। रिकार्ड की चाल तेज होने पर कार्ड आगे की ओर घूमता हुआ लगता है। ऐसा प्रभाव कभी-कभी हमें सिनेमा में भी देखने को मिलता है— हम देखते हैं कि नायक गाना गाते हुए कार को भगा रहा है पर उसके पहिए पीछे की ओर घूम रहे हैं। इसप्रकार घूमते रिकार्ड की चाल जानी जा सकती है। प्लेयर में लगे खटकों को समंजित करके रिकार्ड घूमने की चाल ठीक की जा सकती है।

रिकार्ड को ठीक चाल से घुमाने के साथ-साथ यह भी आवश्यक है कि चाल में स्थिरता बनी रहे। घूमने की चाल में थोड़ी भी गड़बड़ होने की वजह से आवाज का स्वर उतरता चढ़ता लगता है। यह एक अनोखी

बात है कि आवाज की तीव्रता में हुए थोड़े परिवर्तन के लिए हमारे कान प्राय: संवेदी नहीं है। लेकिन आवाज की आवृत्ति में हुए ज़रा भी फर्क को वे भांप लेते हैं। इसलिए रिकार्ड को सही व स्थिर चाल से घुमाना पड़ता है। इस दृष्टि से रिकार्ड घुमाने और किसी चक्री को घुमाने में बहुत फर्क होता है।

किसी भी रिकार्ड प्लेयर में वो, फ्लटर और रम्बल नामक दोष नहीं होने चाहियें। वो, फ्लटर और रम्बल तीनों अंग्रेजी शब्द हैं, लेकिन अब इनका उपयोग सभी करते हैं अत: इनके बारे में जानना आवश्यक है। रिकार्ड घूमने की चाल में धीमी व चक्रीय गति से परिवर्तन होने पर आवाज में जो उतार-चढ़ाव होता है, उसे ध्वनि इंजीनियर वो कहते हैं। लेकिन अगर चाल में तेजी से चक्रीय परिवर्तन हो तो झंडे फरफराने जैसी आवाज आने लगती है जिसे फ्लटर कहा जाता है। वो और फ्लटर कई कारणों से उत्पन्न होते हैं जिनमें रिकार्ड का छेद ठीक केन्द्र पर न होना, रिकार्ड के छेद का साइज बढ़ जाना या स्तंभ की मोटाई कम होना, रिकार्ड की मोटाई एकसमान न होना आदि प्रमुख हैं। रिकार्ड घुमाने वाली मोटर अगर कंपन करे तो इन कंपनों की वजह से जो भनभनाहट आ जाती है उसे रम्बल कहते हैं। वो और फ्लटर दोषों को कम रखने के लिए घूमने वाले मंच को बड़ी बारीकी से बनाया जाता है।

पिक-अप भुजा

रिकार्ड प्लेयर के एक किनारे पर पिक-अप भुजा होती है। यह एक स्तंभ पर ठहरी होती है। जब पिक-अप भुजा को उठाया जाता है तो बिजली की मोटर का सर्किट पूरा हो जाता है और मोटर चलने लगती है।

पिक-अप भुजा हल्के धातु या प्लास्टिक की बनी होती है। इसके एक सिरे पर पिक-अप या कार्ट्रिज होता है। पिक-अप में सुई लगाने का प्रबन्ध भी रहता है।

रिकार्ड बजाते समय पिक-अप भुजा धीरे-धीरे घूमती जाती है। आवश्यकता इस बात की है कि पिक-अप भुजा रिकार्ड में बने खाँचों के साथ एक निश्चित कोण बनाये, लेकिन ऐसा हो नहीं पाता। फिर भी भुजा के स्तंभ के स्थान और भुजा की लम्बाई आदि इस प्रकार तय की जाती है जिससे यह कोण एक सीमा से अधिक न बदलें।
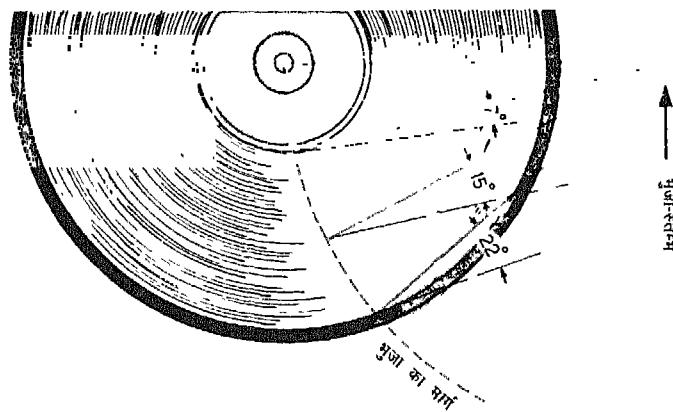
चित्र 16 पिकअप भुजा का खाँचों के साथ सही कोण न बनाना

पिक-अप की भुजा के एक सिरे पर पिक-अप होता है और दूसरे सिरे पर प्रतितोलक भार या स्प्रिंग। प्रतितोलक भार की स्थिति या स्प्रिंग के तनाव को समंजित करके रिकार्ड पर मनचाहा दाब डाला जा सकता है। रिकार्ड पर सुई कितना दाब डालती है, इसके बारे में कुछ भी कहने

से पहले दाब के बारे में जानना जरूरी है। दाब और बल में फर्क होता है। यदि आधे किलोग्राम की पुस्तक हथेली पर रखें तो पुस्तक के भार की वजह से हथेली पर कुछ बल लगता है और कुछ दाब पड़ता है। अब यदि इस पुस्तक को हथेली पर खड़ी कर दें तब क्या होगा? अब हथेली पर बल तो उतना ही लगेगा लेकिन दाब बढ़ जाएगा। इसका कारण यह है कि पुस्तक को खड़ी करने पर उतना ही बल हथेली के थोड़े से भाग पर पड़ता है। वास्तव में दाब प्रति इकाई क्षेत्रफल पर लगने वाला बल होता है।

उदाहरणार्थ यदि पिक-अप भुजा की वजह से सुई पर 10 ग्राम भार पड़ता है तो 0.005 वर्ग सेमी नोक वाली सुई द्वारा 10 ÷ 0.005 अर्थात् 2 किलोग्राम भार प्रति वर्ग सेंमी पड़ेगा। हम देखते हैं कि सुई के नुकीला होने के कारण वह रिकार्ड पर बहुत अधिक दाब डालती है। स्पष्ट है कि पिक-अप भुजा के प्रतितोलक भार की स्थिति बिगड़ जाने अथवा स्प्रिंग के तनाव में फर्क आ जाने के कारण यह दाब कभी बहुत कम हो सकता है और कभी बहुत अधिक। यह दाब कम है तो रिकार्ड ठीक ढंग से दबता नहीं और सुई कभी भी उछल सकती है और यदि दाब अधिक है तो रिकार्ड तेजी से घिसता है। इसलिए आवश्यकता इस बात की है कि रिकार्ड पर उतना दाब डालें जितना उस रिकार्ड के लिए
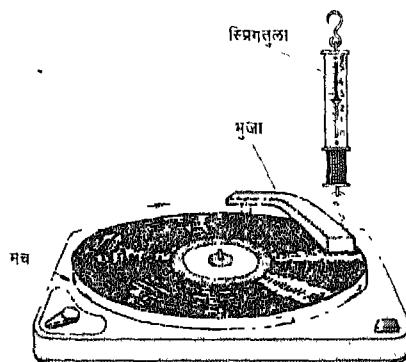
चित्र 17 पिकअप भुजा द्वारा डाले गए दाब की जाच करना

चाहिए। यदि महीन खाँचे वाला रिकार्ड बजाना है तो सही दाब डालने के लिए पिक-अप भुजा को एक दो ग्राम भार पर्याप्त होता है। यह देखने के लिए कि सही भार पड़ रहा है अथवा नहीं, एक कमानीदार तुला का उपयोग किया जा सकता है।

पिक-अप

जैसा कि बतलाया जा चुका है कि रिकार्ड प्लेयर की भुजा के एक सिरे पर पिक-अप होता है। इसमें सुई लगाने का प्रबन्ध होता है। पिक-अप का काम सुई के कंपनों के अनुरूप विद्युत संकेत उत्पन्न करना होता है।

पिक-अप अनेक प्रकार के होते हैं। विद्युत-चुंबकीय पिक-अप फेराडे के सिद्धांत पर काम करता है। ओस्ट्रेड ने जब प्रयोग द्वारा यह बतलाया कि विद्युत धारा के प्रभाव से चुंबकत्व पैदा किया जा सकता है तब से ही वैज्ञानिक इसका ठीक विपरीत प्रभाव ढूँढ़ने में लग गए। वे सोचने लगे कि किसी न किसी प्रकार चुंबक की मदद से विद्युत धारा भी उत्पन्न की जा सकती है। लेकिन इस दिशा में किए गए सभी प्रारंभिक प्रयोग सफल न हो सके। फिर भी फेराडे अत्यंत धैर्य के साथ अपने प्रयोग करते रहे और अंत में उन्हें सफलता मिली। उन्होंने देखा कि किसी कुंडली के भीतर जब चुंबक डाला जाता है तो क्षणिक देर के लिए धारा प्रवाहित होती है। चुंबक के ठहर जाने पर धारा समाप्त हो जाती है। चुंबक को बाहर निकलते समय फिर धारा उत्पन्न होती है, लेकिन अब विपरीत दिशा में। फेराडे ने बड़ी सावधानी से प्रयोग करके पाया कि वास्तव में कुंडली में विद्युत धारा तब ही प्रेरित होती है जब कुंडली के भीतर चुंबकीय बल रेखाओं की संख्या में परिवर्तन हो। इसलिए यह

आवश्यक नहीं कि इस विधि द्वारा विद्युत धारा उत्पन्न करने के लिए कुंडली के पास चुंबक लाया ही जाये। विद्युत धारा तो तब भी प्रेरित होती है जब स्थिर चुंबक के ध्रुवों के बीच कुंडली लाई या ले जाई अथवा घुमाई जाती है। बाद में इसी सिद्धांत पर डायनेमो बनाए गए।

चित्र 18 फैराडे का प्रयोग। चुंबक पास लाने या दूर ले जाने पर कुंडली में क्षणिक धारा प्रेरित होती है।

विद्युत चुंबक पिक-अप भी एक नन्हा-सा डायनेमो कहा जा सकता है। इसमें एक चुंबक होता है जिसके ध्रुवों के बीच तारों की एक कुंडली लटकी होती है। इस कुंडली के फ्रेम के साथ सुई लगी होती है। जब रिकार्ड बजाया जाता है तो सुई के कंपनों के साथ कुंडली भी कंपन करने लगती है। चुंबक के ध्रुवों के बीच कुंडली के कंपन की वजह से उसके आरपार जाने वाली चुंबकीय बल रेखाओं की संख्या में घट बढ़ होती है, फलस्वरूप कुंडली में विद्युत धारा उत्पन्न हो जाती है। यह तो स्पष्ट ही है कि कंपन होने पर कुंडली में जो विद्युत वोल्टता पैदा होती है वह सुई के कंपनों पर
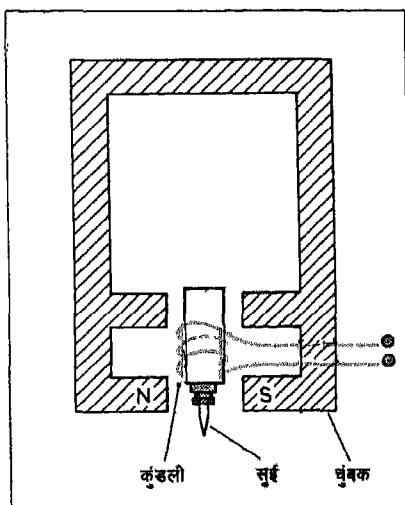
चित्र 19 विद्युत चुंबक पिक-अप
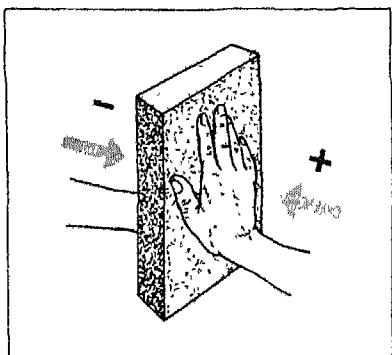
चित्र 20 कुछ पदार्थों की पट्टिका दाबने पर उसके दोनों तरफ आवेश पैदा हो जाते हैं

निर्भर करती है। इसप्रकार पिक-अप में अंकित ध्वनि के अनुरूप विद्युत वोल्टता प्रेरित हो जाती है।

विद्युत चुंबकीय पिक-अप के अलावा दाब विद्युत पिक-अप भी बहुत प्रचलित हैं। ये पिक-अप दाब-विद्युत सिद्धांत पर काम करते हैं। विद्युत पैदा करने की वैसे तो बहुत सी विधियां हैं, लेकिन दाब द्वारा विद्युत पाई जा सकती है—यह एक महत्वपूर्ण बात है। जैसे गीले स्पन्ज या रूएंदार मोटे तोलिए को दाबने पर उसके दोनों ओर पानी की बूंदें झलक आती हैं, वैसे ही कुछ पदार्थों को दाबने पर उसकी दोनों सतहों पर विद्युत आवेश आ जाता है। एक सतह पर यदि धनात्मक आवेश है तो दूसरी सतह पर ऋणात्मक। फलस्वरूप ऐसे पदार्थ की पट्टिका को दबाने पर दोनों सतहों के बीच विद्युत वोल्टता उत्पन्न हो जाती है। दाब द्वारा विद्युत वोल्टता उत्पन्न करने वाले पदार्थ दाब-विद्युत पदार्थ कहे जाते हैं। क्वार्ट्ज के अतिरिक्त ऐसे बहुत से पदार्थ हैं जो यह गुण दर्शाते हैं। दाब-विद्युत पिक-अप में अक्सर रोशेल लवण से बनी पट्टिका का उपयोग किया जाता था, लेकिन आजकल बेरियम टायटनेट या लेड जिरकोनेट टायटनेट आदि का।

जब दाब-विद्युत पदार्थ से बनी पट्टिका पर सुई के कंपनों की वजह से दाब पड़ता है तो पट्टिका की दोनों सतहों के बीच विद्युत वोल्टता पैदा

हो जाती है। दाब-विद्युत पदार्थ की पट्टिका को जितने जोर से दाबा जाता है, उतनी ही अधिक वोल्टता उत्पन्न होती है। इसप्रकार सुई के कंपनों के साथ-साथ पिक-अप में ध्वनि के अनुरूप विद्युत वोल्टता मिल जाती है।

रिकार्ड बजाने के लिए नीलम, रूबी या हीरे जैसे कठोर पदार्थों से बनाने पर सुई धीरे-धीरे घिसती है। नीलम के किरच से बनी सुई लगभग 50 घंटे तक ठीक चल सकती है पर हीरे की किरच से बनी सुई 2000 घंटे तक।

सुई की नोक पिन की तरह नुकीली नहीं होती। यह नोक गोलाकार होती है। इस गोलाकार नोक की त्रिज्या मोटे खाँचे वाली सुई के लिए लगभग 0.0075 सेमी होती है और महीन खाँचे वाली के लिए 0.001 से 0.002 सेमी के बीच। मोटे खाँचे वाले रिकार्ड की सुई से महीन खाँचे वाले रिकार्ड को नहीं बजाना चाहिए, नहीं तो महीन खाँचे वाली

चित्र 21 रिकार्ड बजाने की सुई : (क) मोटे खाँचे वाली (ख) महीन खाँचे वाली रिकार्ड के लिए; (ग) घिसी हुई सुई
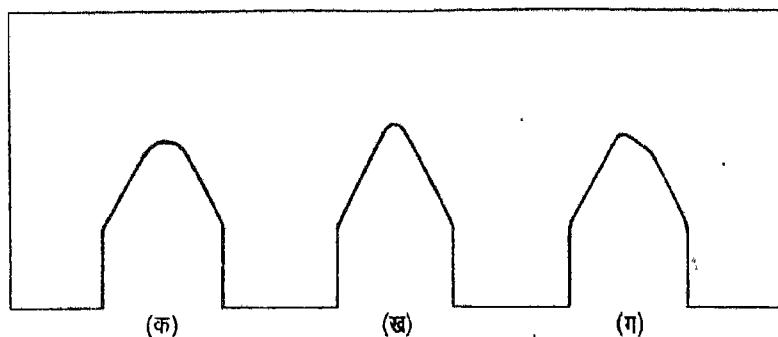
रिकार्ड पूरी तरह खराब हो जायेगा। महीन खाँचे वाले रिकार्ड की सुई से यदि मोटे खाँचे वाले रिकार्ड बजाए तो खाँचे के भीतर सुई के इधर-उधर होने से भनभनाहट की आवाज आने लगती है।

कुछ पिक-अप ऐसे भी मिलते हैं जिनमें दोनों ओर सुइयां लगी होती हैं। एक सुई मोटे खाँचे वाले रिकार्ड के लिए होती है तो दूसरी महीन खाँचे वाले के लिए। एक खटके की मदद से मनचाही सुई काम में लाई जा सकती है। लेकिन इस तरह का दोहरा प्रबन्ध उचित नहीं क्योंकि महीन खाँचे वाले रिकार्ड को बजाने के लिए कम भार की आवश्यकता है और मोटे खाँचे वाले रिकार्ड के लिए अधिक। दोनों ओर सुइयों वाले पिक-अप न तो मोटे खाँचे वाले रिकार्ड साथ न्याय करते हैं, न ही महीन खाँचे वाले के लिए। फिर भी ऐसे पिक-अप बाजार में खूब बिकते हैं।

बार बार रिकार्ड बजाने पर सुई घिस जाती है। आँखों से देखकर यह पता लगाना मुश्किल है कि कोई सुई सचमुच घिस गई या नहीं। घिस जाने से पहले ही सुई बदल देने में ही समझदारी है, नहीं तो रिकार्ड खराब होने की संभावना रहती है। दुकानदार तो माइक्रोस्कोप की मदद से यह सरलता से देख लेता है कि सुई घिस गई या नहीं, पर हम लोग क्या करें? इसके लिए सबसे अच्छा तरीका यह है कि किसी सुई से रिकार्ड कितनी बार बजाई जा चुकी है, इसका मोटा हिसाब रखा जाए। जब सुई उतनी बार रिकार्ड बजा चुके जितनी बार के लिए वह बनाई गई थी तो उसे बदल देना चाहिए।

रिकार्ड चेन्जर

दीर्घ कालीन रिकार्ड बनने से पहले रिकार्ड चेन्जर का बहुत

प्रचलन था। रिकार्ड चेन्जर के मंच के ठीक बीचोंबीच जो स्तंभ होता है, उसकी ऊंचाई साधारण स्तंभ की तुलना में कई गुना अधिक होती है। इस ऊंचे स्तंभ के ऊपरी भाग में कुछ रिकार्ड अटके रहते हैं। ये रिकार्ड अपने आप एक के बाद एक मंच पर गिरते रहते हैं।

रिकार्ड गिराने का काम पिक-अप भुजा करती है। जब तक सुई रिकार्ड के प्रारंभिक या बीच के भाग में है, तब तक कुछ नहीं होता। लेकिन जैसे ही वह रिकार्ड के अंतिम भाग में पहुंचती है, खाँचे में तेज घुमाव के कारण सुई व पिक-अप भुजा को एक झटका लगता है। इस झटके से लीवर चल पड़ते हैं। फलस्वरूप पहले तो पिक-अप भुजा उठकर पीछे आ जाती है और फिर अटकी हुई रिकार्डों के ढ़ेर में से नीचे का एक रिकार्ड मंच पर गिर पड़ता है। इसके तुरंत बाद पिक-अप भुजा भीतर की ओर जाती है और अपने आप नीचे झुक जाती है जिससे सुई रिकार्ड के प्रारंभिक खाँचे में आ जाती है।

रिकार्ड चेन्जर को क्रियाशील करने की सारी जिम्मेदारी पिक-अप भुजा की है, इस कारण इसे कुछ भारी बनाना पड़ता है। लेकिन भारी पिक-अप की वजह से रिकार्ड जल्दी घिसता है और ध्वनि भी बहुत अच्छी नहीं निकलती। यदि उत्कृष्टता की तुलना में सुविधा को आप अधिक महत्व देते हैं तो आप रिकार्ड चेन्जर लेंगे, अन्यथा नहीं।

एम्प्लीफायर एवं स्पीकर

पिक-अप से मिले विद्युत संकेत बहुत मंद होते हैं। उन्हें कम से कम हजार गुना प्रबल करना आवश्यक है तब ही हम स्पीकर से कुछ सुन सकते हैं।

विद्युत संकेतों को प्रबल बनाने में जिस युक्ति को काम में लाते है उसे एम्प्लीफायर कहते हैं। कुछ रिकार्ड प्लेयरों में एम्प्लीफायर साथ जुड़ा होता है जबकि कुछ में इसे अलग से जोड़ना होता है। एम्प्लीफायर में आवाज कम अधिक करने का प्रबन्ध रहता है। आवाज में भारीपन अथवा तीखापन उभारने के लिए भी प्रबन्ध रहता है।

एम्प्लीफायर के साथ एक या एक से अधिक स्पीकर जुड़े होते हैं। छोटे आकार का स्पीकर उच्च आवृत्ति की ध्वनि के लिए होता है। रेडियो इंजीनियर इसे ट्यूटर कहते हैं। निम्न आवृत्ति की ध्वनि के लिए बड़े आकार का स्पीकर होता है जिसे लोग बूफर कहते हैं। एम्प्लीफायर व स्पीकर के बारे में आगे विस्तार से बतलाया गया है।

रिकार्ड व रिकार्ड प्लेयर का रख रखाव

रिकार्ड प्लेयर संगीत पैदा नहीं करता, वह तो बस उस संगीत को दोहरा देता है जो रिकार्ड में भरा है। यदि रिकार्ड में ही कोई दोष हो तो अच्छे से अच्छा रिकार्ड प्लेयर उस दोष को मिटा नहीं सकता। इसलिए आवश्यकता तो इस बात की है कि रिकार्डों को संभाल कर रखा जाये और उनमें किसी भी प्रकार का दोष उत्पन्न न होने दिया जाये।

प्रत्येक रिकार्ड के बीच में एक छेद कटा होता है। इस छेद को चौड़ा होने से बचाना चाहिए अन्यथा रिकार्ड बजाते समय वह अपनी जगह से थोड़ा इधर उधर होता रहेगा, फलस्वरूप सही आवाज नहीं मिलेगी।

रिकार्ड को धूल से बचाना भी बहुत आवश्यक है। सुई के साथ घिसटते हुए धूल-कण रिकार्ड को स्थाई तौर पर नष्ट कर देते हैं। एक बार यदि रिकार्ड खराब हो गया तो फिर आप चाहे कितनी भी सफाई

क्यों न करें वह ठीक नहीं हो सकता। रिकार्ड साफ करने के लिए कई प्रकार की युक्तियां बाजार में मिलती हैं। मखमल लगा पैड बहुत अच्छा काम करता है। मुलायम ब्रुश की मदद से भी रिकार्ड साफ किया जा सकता है। कभी-कभी पिक-अप भुजा के आगे एक छोटा-सा ब्रुश बांध दिया जाता है जो सुई पहुंचने के पहले खाँचों को साफ करता रहता है।

रिकार्डों को उनके जेकेट में रखना चाहिए। रिकार्ड को जेकेट से निकालते समय या मंच पर रखते समय उसे किनारे से पकड़ना चाहिए। उंगलियों के निशानों पर धूल तेजी से जमा होती है। रिकार्ड को गंदे मंच पर कभी रखना नहीं चाहिए। इन सब सावधानियों के बावजूद यदि रिकार्ड पर धूल जम गई हो तो उसे ठंडे पानी में धो लेने चहिए व मुलायक कपड़े से पोंछ लेना चाहिए।

4. ध्वनि अंकन की चुंबकीय विधि

ध्वनि अंकन का सबसे सरल साधन है टेप रिकार्डर। इसमें चुंबकीय विधि से एक फीते अथवा टेप पर ध्वनि अंकित की जाती है। विगत कुछ वर्षों में टेप रिकार्डर की लोकप्रियता बहुत बढ़ी है। लेकिन टेप रिकार्डर कोई नया आविष्कार नहीं। इसकी कहानी भी लगभग उतनी ही पुरानी है जितनी ग्रामोफोन की। कहा जाता है कि जब एडीसन अपनी 'बोलने वाली मशीन' बना रहे थे तब कुछ लोग लोहे के तार पर ध्वनि अंकन के प्रयास कर रहे थे। इस संबंध में सबसे पहला छपा विवरण ओवरलिन स्मिथ का मिलता है जिन्होंने सन् 1888 में लोहे के तार पर ध्वनि अंकन के बारे में तब तक किए गए सभी प्रयोगों के बारे में अपने विचार दिए। उन्होंने बतलाया कि लोहे के तार की अपेक्षा ऐसे रिबिन या फीते से अच्छे फल मिल सकते हैं जिसमें चुंबकीय पदार्थ के कण बुने हों। लेकिन उस जमाने में ऐसा फीता बनाना कोई आसान काम न था।

सन् 1898 में वाल्दिमर पॉलसन ने ध्वनि अंकन के लिए पियानों के तार का उपयोग किया। यह तार लोहे का था। उन्होंने इस तार को आवाज की लहरों के अनुरूप चुंबकित किया और फिर टेलीफोन जैसे एक यंत्र द्वारा अंकित आवाज को सफलतापूर्वक पुनः सुना। उन्होंने अपने इस यंत्र का नाम रखा टेलीग्राफोन। दिसम्बर 1898 में उन्होंने अपने इस यंत्र का डेनमार्क में पेटेंट लिया। लेकिन उन दिनों आवाज को शक्तिशाली बनाने के लिए कोई उपयुक्त साधन न थे इस कारण

चुंबकीय प्रभावों पर आधारित यंत्रों का अधिक विकास न हो सका। बगैर बिजली से चलने वाली वे युक्तियां जो आवाज की लहरों का सीधा अंकन करती थीं, अधिक प्रचलित होती गईं। इसप्रकार व्यवसायिक तौर पर टेलीग्राफोन की तुलना में ग्रामोफोन अधिक लोकप्रिय हो गया।

सन् 1920 के बाद से स्थिति में परिवर्तन आया। तब तक रेडियो वाल्व खूब प्रचलित हो चुके थे। ध्वनि को प्रबल बनाने की तरह-तरह की युक्तियों के बन जाने के बाद से चुंबकीय टेप रिकार्डर में लगातार प्रगति होती रही।

सन् 1928 में पेल्यूमेर ने प्लास्टिक के फीते पर चुंबकीय परत चढ़ाने का पेटेंट लिया। सात वर्ष की कड़ी मेहनत के बाद वे चुंबकीय पदार्थ की परत चढ़े फीते पर ध्वनि अंकित करने में सफल हुए। उन्होंने अपनी इस युक्ति को मेगनेटोफोन नाम दिया। बाद में इसी युक्ति को टेप रिकार्डर कहा जाने लगा। उन दिनों बने टेप रिकार्डर में फीते या टेप को बहुत तेज चाल से चलाना होता था। इस कारण थोड़े समय के कार्यक्रम के लिए भी बड़ी-बड़ी रीलों का उपयोग करना पड़ता था। शोर भी बहुत रहता था और उच्च आवृत्ति की ध्वनियां साफ नहीं निकलती थीं।

द्वितीय महायुद्ध के दौरान टेप रिकार्डर का बहुत विकास हुआ। पुराने समय के टेप रिकार्डरों में जो दोष थे, उन्हें दूर करने के लिए तरह-तरह के प्रयोग किए गए। अन्त में फन ब्राउनम्यूल और बेबर को इस कार्य में सफलता मिली। उन्होंने रिकार्डिंग के समय टेप को उच्च आवृत्ति के चुंबकीय क्षेत्र में रखने का महत्व बतलाया। उन्होंने अपनी इस खोज का सन् 1940 में पेटेंट लिया और इसे ए.सी. वाइस विधि नाम दिया। इस विधि के बारे में कुछ बातें आप आगे पढ़ेंगे। इस विधि द्वारा अधिक साफ व स्वाभाविक ध्वनि मिलने लगी। टेप पर अंकित पुराने

कार्यक्रमों को मिटाना भी आसान हो गया। इन दिनों प्रचलित सभी टेप रिकार्डरों में इसी विधि का उपयोग किया जाता है।

चुंबकीय अंकन का सिद्धांत

ध्वनि का चुंबकीय अंकन दो बातों पर निर्भर करता है। एक तो यह कि जब किसी तार में विद्युत धारा भेजी जाती है तो उसके आसपास चुंबकीय क्षेत्र बन जाता है और दूसरी यह कि जब लोहे जैसे पदार्थ को चुंबकीय क्षेत्र में लाया जाता है तो वह मामूली ताकत का चुंबक बन जाता है। इसप्रकार विद्युत धारा के प्रभाव से लोहे या लोहे जैसे पदार्थ को चुंबकित किया जा सकता है।

वैसे तो छड़ चुंबक बनाने की अनेक विधियां हैं परन्तु सबसे सरल विधि यही है कि लोहे की एक छड़ पर लिपटे विद्युत-रोधी तार में विद्युत धारा भेजी जाए। ऐसा करने पर चुंबकीय क्षेत्र बन जाता है जो लोहे की छड़ को चुंबकित कर देता है। लोहे की छड़ पर लिपटे तार को हटाने पर भी उसमें कुछ चुंबकत्व शेष रह जाता है, इसप्रकार हमें एक छड़ चुंबक मिल जाता है। इस चुंबक को जब लोहे की रेतन में डालते हैं तो उसके दोनों सिरों पर सर्वाधिक रेतन चिपकती है। ऐसा लगता है कि मानों इन्हीं सिरों पर चुंबकत्व केन्द्रित हो। इसलिए इन सिरों को ध्रुव कहते हैं। छड़ चुंबक को जब लचकहीन धागे से लटकाते हैं तो एक महत्वपूर्ण बात देखने को मिलती है। वह यह कि चुंबक एक निश्चित दिशा में ही ठहरता है। यह दिशा लगभग उत्तर-दक्षिण दिशा होती है। हम सभी जानते हैं कि चुंबक का वह ध्रुव जो उत्तर की ओर संकेत करता है, उत्तरी ध्रुव (N-ध्रुव) कहा जाता है और दूसरा दक्षिणी ध्रुव (S-ध्रुव)। रेतन फैले कागज को जब धीमे-धीमे थपथपाया जाता है तो रेतन के

कण विशेष व्यवस्था में आ जाते हैं। लगता है कि कोई चीज एक ध्रुव से निकलकर दूसरे ध्रुव की ओर जा रही है जो रेतन के कणों को विशेष व्यवस्था में बांधे हुए हैं (चित्र क)। चुंबक के ऐसे गुणों को देखकर यह कल्पना की गई कि चुंबक के उत्तरी ध्रुव से कुछ अदृश्य रेखाएं निकल

चित्र 22 छड़ चुंबक में अनेक ध्रुव हो सकते हैं
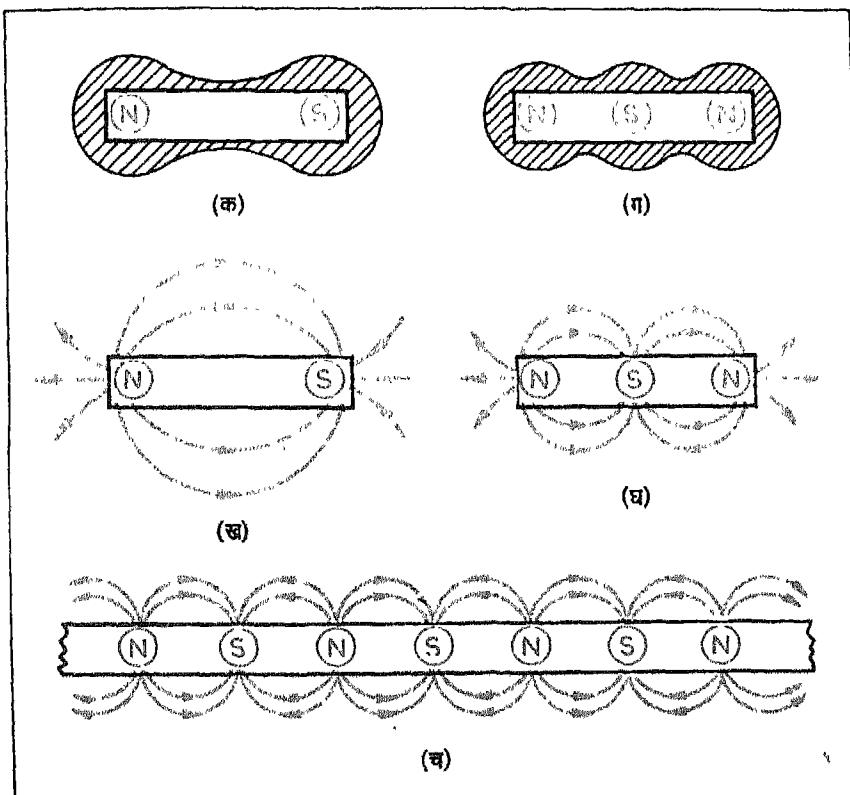
रही हैं जो दक्षिणी ध्रुव की ओर जा रही हैं। यह बात चित्र (ख) में दर्शाई गई है। इन रेखाओं को चुंबकीय रेखायें कहा जाने लगा।

छड़ चुंबक अनेक प्रकार से चुंबकित किया जा सकता है। लोहे की छड़ पर यदि विद्युत-रोधित तार लपेटते हुए बीच तक लायें और फिर लपेटने की दिशा बदल दें तो विद्युत धारा प्रवाहित करने पर क्या होगा? अब छड़ चुंबक के दोनों सिरों पर एक जैसे दो ध्रुव बन जायेंगे और बीच में एक विपरीत ध्रुव। कभी-कभी बीच वाले ध्रुव को दो उपध्रुवों से बना मानने पर बात आसानी से समझ आ जाती है। यह स्थिति चित्र (ग) और (घ) में दिखलाई गई है। अब छड़चुंबक के दोनों सिरों पर उत्तरी ध्रुव हैं और बीच में दक्षिणी ध्रुव हैं।

लोहे की छड़ को इस प्रकार भी चुंबकित कर सकते हैं कि उसमें दो या तीन नहीं वरन् अनेक ध्रुव हो। यह स्थिति चित्र (च) में दिखलाई गई है।

टेप रिकार्डर में चुंबकीय पदार्थ की परत चढ़े प्लास्टिक के टेप का उपयोग किया जाता है। विद्युत धारा के प्रभाव में आने पर उसका कुछ भाग चुंबकित हो जाता है। विद्युत धारा द्वारा उत्पन्न चुंबकीय क्षेत्र यदि थोड़े से स्थान पर केन्द्रित हो तो वह न केवल अधिक शक्तिशाली होगा वरन् टेप के केवल जरा से भाग को चुंबकित करेगा। टेप को धीरे-धीरे सरकाकर उसके दूसरे हिस्सों में भी चुंबकत्व पैदा किया जा सकता है। इस प्रकार टेप पर चुंबकीय भाषा में-संकेत लिखे जा सकते हैं। लेकिन यहां पर ''कलम'' स्थिर रहता है और ''कागज'' उसके सामने आता जाता है।

थोड़े से हिस्से में चुंबकीय क्षेत्र को केन्द्रित करना बहुत सरल है। इस हेतु धारावाही तार को लोहे के एक कटे छल्ले पर लपेटा जाता है।

इसमें कटाव की वजह से बहुत बारीक रिक्त स्थान बन जाता है। ऐसे छल्ले को हैड कहते हैं। अक्सर यह छल्ला ठोस लोहे का नहीं होता वरन् लोहे के पत्रों से बनाया जाता है। जब तार में विद्युत धारा भेजी जाती है तो हैड के रिक्त स्थान के सामने चुंबकीय क्षेत्र बन जाता है।
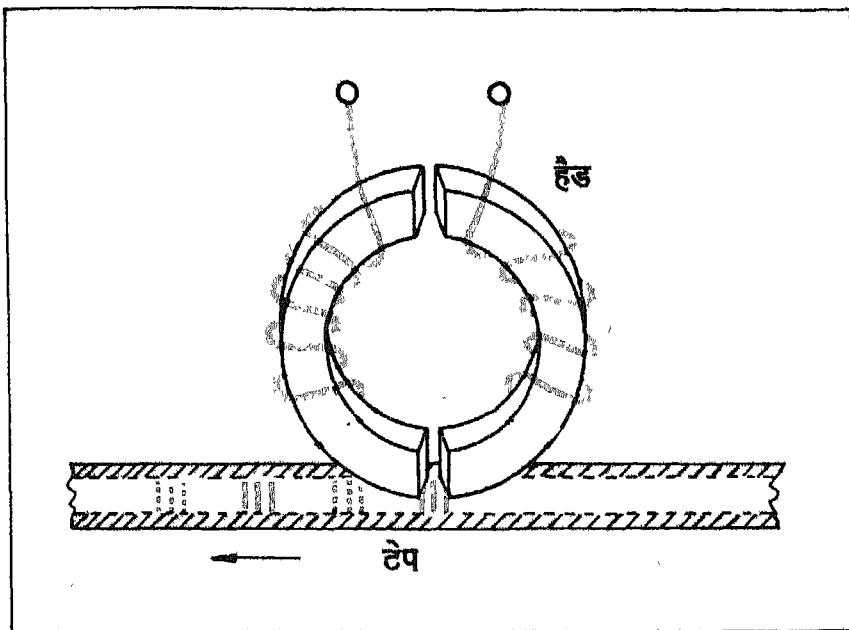
चित्र 23 ध्वनि अंकन के लिए हैड

यदि इस अंकन अथवा रिकार्डिंग हैड पर लिपटे तार में ध्वनि लहर के अनुसार बदलती धारा भेजी जाये और टेप को धीरे-धीरे सरकाया जाये तो क्या होगा? स्पष्ट है कि तब हैड के सामने चुंबकीय क्षेत्र भी

ध्वनि लहरों के अनुसार बदलेगा। फलस्वरूप टेप पर चुंबकीय ध्रुव भी उसीप्रकार बनेंगे। दूसरे शब्दों में टेप पर ध्वनि लहरों के अनुरूप चुंबकीय भाषा में संकेत अंकित हो जायेंगे। माइक द्वारा दी गई धारा
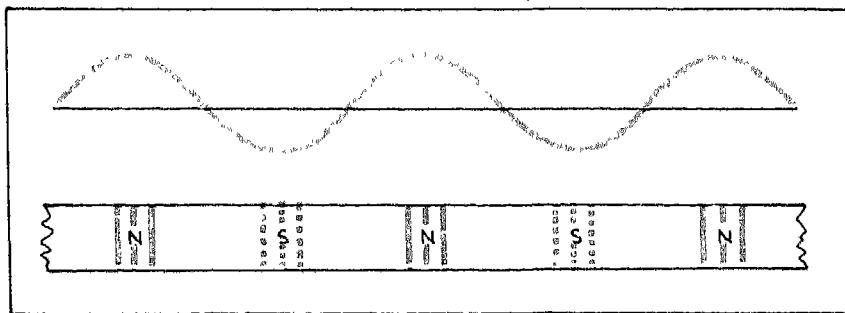
चित्र 24 लम्बाई की दिशा मे चुबकित टेप

प्रबल नहीं होती, इसलिए रिकार्डिंग हैड में भेजने से पहले उसे एम्प्लीफायर द्वारा प्रबल बनाना होता है।

अंकित ध्वनि को फिर सुनने का सिद्धांत

हम सभी जानते हैं कि जब किसी कुंडली के पास चुंबक लाते हैं तो कुंडली में विद्युत धारा प्रेरित हो जाती है। यह बात सन् 1831 में फैराडे ने बतलाई थी। जैसा कि पहले कहा जा चुका है, उन्होंने एक कुंडली के सिरों को गैल्वेनोमीटर से जोड़ दिया और फिर वे इस कुंडली के भीतर एक चुंबक ले गए (चित्र 18)। उन्होंने देखा कि जैसे ही चुंबक कुंडली के पास आता है वैसे ही गैल्वेनोमीटर में विक्षेप होता है। लेकिन यह विक्षेप

क्षणिक होता है। चुंबक के ठहर जाने पर धारा उत्पन्न नहीं होती। जब उन्होंने चुंबक को कुंडली के बाहर निकाला तो फिर गैल्वेनोमीटर में विक्षेप हुआ, लेकिन इस बार विपरीत दिशा में। इन प्रयोगों से फैराडे ने पाया कि जब किसी कुंडली में जाने वाली चुंबकीय रेखाओं की संख्या में घट-बढ़ की जाती है तो इस घट-बढ़ के दौरान कुंडली में विद्युत वोल्टता उत्पन्न होती है। चुंबकीय रेखाओं की संख्या में घट-बढ़ जितनी शीघ्रता से की जाती है, विद्युत वोल्टता भी उतनी ही अधिक उत्पन्न होती है।

टेप पर अंकित चुंबकीय चिह्नों से फिर ध्वनि प्राप्त करने के लिए फैराडे द्वारा खोजी गई इन्हीं बातों का उपयोग किया जाता है। जिस प्रकार ध्वनि अंकन के लिए लोहे के कटे छल्ले अथवा हैड का उपयोग किया जाता है, वैसे ही ध्वनि सुनने के लिए भी ऐसे ही दूसरे छल्ले पर भी बारीक तार लिपटे होते हैं और इस छल्ले में भी बारीक रिक्त स्थान होता है। इस छल्ले को पुनरुत्पादन हैड या प्लेबेक हैड कहते हैं। जब इस हैड के आगे से चुंबकीय टेप गुजारा जाता है तो हैड पर लिपटी कुंडली में विद्युत वोल्टता उत्पन्न हो जाती है। यदि टेप को ठीक उसी चाल से चलाया जाये जिस चाल से उसे अंकन के समय चलाया गया था तो स्पष्ट है कि कुंडली में उत्पन्न वोल्टता भी ध्वनि लहरों के अनुरूप घटे बढ़ेगी।

टेप चलने पर उत्पन्न विद्युत वोल्टता बहुत कम होती है। इससे प्राप्त धारा से स्पीकर नहीं बजाया जा सकता। स्पीकर बजाने के लिए आवश्यकता है कि हैड से प्राप्त विद्युत संकेतों का वर्धन किया जाये। इस हेतु एम्प्लीफायर का उपयोग किया जाता है। एम्प्लीफायर से प्राप्त विद्युत धारा को जब स्पीकर में भेजा जाता है तब स्पीकर बजने लगता है।

अंकित ध्वनि को मिटाने के तरीके

एक बार टेप पर अंकन करने के बाद उसे मिटाया भी जा सकता है। इसके लिए दो तरीके हो सकते हैं। एक तरीका तो यह है कि सारे टेप को एकसमान चुंबकीय कर दिया जाये—तब हैड से होकर गुजरने वाली चुंबकीय रेखाओं की संख्या में न तो कोई परिवर्तन होगा और न ही कोई विद्युत वोल्टता प्रेरित होगी। दूसरा तरीका यह है कि सारे टेप को विचुंबकीय कर दिया जाए, अर्थात् उसपर अंकित चुंबकीय व्यवस्था पूरी तरह बिगाड़ दी जाये।

टेप पर अंकित चिह्नों को चाहे पहली विधि द्वारा मिटायें या दूसरी विधि द्वारा, प्रत्येक दशा में टेप को एक विशेष हैड के आगे से गुजरना होता है। यह हैड भी लोहे के एक कटे हुए छल्ले के रूप में होता है जिस पर तार लिपटे होते हैं। इस हैड को मिटाने वाला हैड या इरेज हैड कहते हैं।

इरेज हैड में प्रबल डी. सी. विद्युत धारा भेजकर जब टेप चलाया जाता है तो टेप के सभी भाग एकसमान चुंबकीय हो जाते हैं। इसप्रकार पूर्व अंकित सभी चुंबकीय चिह्न मिट जाते हैं। लेकिन प्रयोगों द्वारा यह पाया गया है कि टेप पर अंकित्त चुंबकीय चिह्नों को मिटाने के लिए सारे टेप को चुंबकीय बनाने के बदले सारे टेप को विचुंबकीय करना ज्यादा अच्छा है। टेप को विचुंबकीय करने के लिए इरेज हैड में बहुत उच्च आवृत्ति की विद्युत धारा भेजते हैं जिससे पूर्व अंकित चुंबकीय व्यवस्था पूरी तरह बिगड़ जाती है।

चुंबकीय अंकन में ए० सी० बायस का महत्व

चुंबकीय क्षेत्र में लोहे जैसे किसी पदार्थ को लाने पर वह चुंबकत्व

ग्रहण कर लेता है। चुंबकीय क्षेत्र से बाहर निकाल लेने पर यह चुंबकत्व थोड़ा कम तो हो जाता है पर फिर भी काफी चुंबकत्व शेष रह जाता है। शेष रहे चुंबकत्व को अविशिष्ट चुंबकत्व कहा जाता है। ध्वनि अंकन के समय टेप के विभिन्न भाग हैड के आगे से गुजरते हैं जहां उन्हें आवाज के अनुरूप बदलता चुंबकीय क्षेत्र मिलता है। फलस्वरूप टेप पर चुंबकीय लहर छप जाती है। लेकिन चुंबकीय क्षेत्र की तीव्रता और उसके द्वारा उत्पन्न अविशिष्ट चुंबकन में कोई सीधा संबंध न होने की वजह से चुंबकीय लहर और ध्वनि लहर एक दूसरे के ठीक अनुरूप नहीं होती। इसप्रकार अंकित लहर में विकृति आ जाती है।

जब टेप पर चुंबकीय लहर ही विकृत हो गई तो स्पष्ट है कि सुनते समय आवाज भी ठीक नहीं मिलेगी। पुराने जमाने के टेप रिकार्डों में यही एक बड़ा दोष था।

सन् 1947 तक टेप रिकार्डर में विकृति कम करने के उपाय ढूंढ निकाले गए। विकृति के इस दोष से बचने के लिए रिकार्डिंग हैड में ध्वनि वोल्टताओं के साथ-साथ उच्च आवृत्ति की वोल्टता भी दी जाती है। उच्च आवृत्ति की इस वोल्टता का मान ध्वनि वोल्टता की तुलना में कई गुना अधिक लिया जाता है। उच्च आवृत्ति की इस वोल्टता को ए०सी० बाइस कहते हैं।

ए०सी० बाइस की उपस्थिति से विकृति किस प्रकार कम हो जाती है इसे समझने के लिए चुंबकत्व का उच्च ज्ञान होना आवश्यक है। यहां पर यह कहना पर्याप्त होगा कि ए०सी० बाइस के साथ ध्वनि अंकित करने पर टेप रिकार्डर का विकृति संबंधी एक बड़ा दोष दूर हो गया।

इक्वेलाइजर सर्किट की आवश्यकता

ध्वनि की एक लहर टेप पर कितनी दूरी तक अपनी छाप छोड़ती है, यह बात टेप की चाल पर तो निर्भर करती ही है, साथ ही ध्वनि की आवृत्ति पर भी निर्भर करती है। हम सभी जानते हैं कि कम आवृत्ति की लहर को अपना एक चक्र पूरा करने में ज्यादा समय लगता है, इसलिए टेप पर उसकी छाप दूर तक आयेगी। इसके विपरीत उच्च आवृत्ति की लहर को एक चक्र पूरा करने में कम समय लगता है, इस कारण वह थोड़ी दूरी तक अपनी छाप छोड़ती है। यदि हम मानें कि लहर के धन भाग से टेप पर उत्तर-ध्रुव बनता है और ऋण भाग से दक्षिणी-ध्रुव तो टेप के चुंबकन की स्थिति वैसी होगी जैसा कि नीचे दिए गए चित्र में दिखलाया गया है।
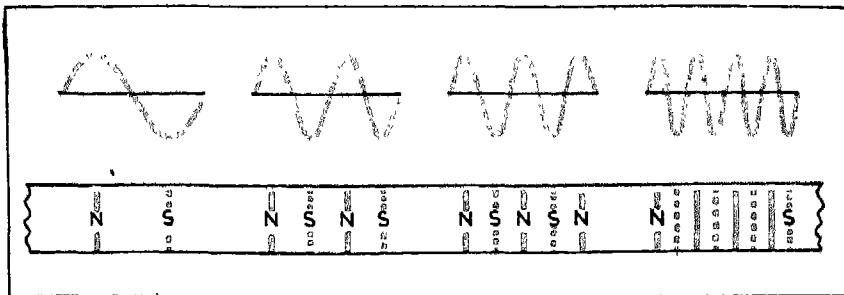
चित्र 25 विभिन्न आवृत्तियों की ध्वनि लहरों की टेप पर छाप

हम देखते हैं कि उच्च आवृत्ति की एक लहर कम दूरी तक चिह्न छोड़ती है और निम्न आवृत्ति की अधिक दूरी तक। फलस्वरूप उतनी ही शक्ति की दो अलग-अलग आवृत्तियों की आवाजें उतनी ही शक्ति की नहीं निकलतीं। इसके दो कारण हैं, जिन्हें जानना जरूरी है।

उच्च आवृत्ति की एक लहर की लम्बाई कम होती है, इस कारण उत्तर व दक्षिण ध्रुव जल्दी-जल्दी हैड के आगे से गुजरते हैं लेकिन निम्न आवृत्ति के धीरे-धीरे। फलस्वरूप उच्च आवृत्ति के समय चुंबकीय रेखाओं की संख्या में घट-बढ़ तेजी से होती है। फैराडे ने जो कुछ बतलाया उससे हम जानते हैं कि ऐसी स्थिति में अधिक वोल्टता उत्पन्न होती है।

ऊपर दिए तर्कों के आधार पर यह निष्कर्ष निकालना कि निम्न आवृत्ति की लहरों से सदा कम वोल्टेज मिलेगा, जल्दबाजी की बात होगी। हम जानते हैं कि टेप रिकार्डर के प्रत्येक हैड का रिक्त स्थान बहुत बारीक होता है। निम्न आवृत्ति पर विचार करने पर हम पाते हैं कि ऐसी लहर की लम्बाई की तुलना में पुनरुत्पादक हैड के रिक्त स्थान की चौड़ाई बहुत कम होती है। इसलिए लहर का एक बहुत छोटा सा भाग ही एक समय हैड के सामने आता है और वोल्टता उत्पन्न करता है। लेकिन उच्च आवृत्ति पर स्थिति भिन्न होती है। उच्च आवृत्ति की लहर की लम्बाई बहुत कम होती है। इसलिए हैड के रिक्त स्थान में लहर का एक बड़ा भाग आ जाता है। यदि आवृत्ति इतनी ऊंची हो कि लहर की लम्बाई का आधे से अधिक भाग हैड के सामने आ जाए तो क्या होगा? तब हैड के रिक्त स्थान के सामने उत्तरी व दक्षिणी ध्रुव दोनों अपना-अपना प्रभाव डालेंगे। क्योंकि ये दोनों ध्रुव एक दूसरे के विपरीत वोल्टता उत्पन्न करते हैं, इसलिए विद्युत वोल्टता घट जाएगी। जिस आवृत्ति पर लहर की लम्बाई रिक्त स्थान की दूरी के बराबर हो जाएगी, उस समय तो यह वोल्टता प्रायः शून्य रह जायेगी।

ऊपर जो कुछ कहा गया उससे स्पष्ट है कि बहुत कम आवृत्ति की लहर बहुत कम वोल्टता प्रेरित करती है और बहुत उच्च आवृत्ति की

लहर भी बहुत कम वोल्टता उत्पन्न करती है। बीच की किन्ही आवृत्तियों की लहरें सर्वाधिक वोल्टता पैदा करती हैं। इसलिए एक ही स्तर की लेकिन भिन्न-भिन्न आवृत्तियों की लहरें समान वोल्टता उत्पन्न नहीं करती। यह बात अच्छी नहीं। इस दोष को दूर करने के लिए विशेष प्रकार के सर्किट लगाने पड़ते हैं। इन्हें इक्वेलाइजर सर्किट कहते हैं। ये सर्किट कैसे काम करते हैं, इसे समझने के लिए इलेक्ट्रानिक्स का प्रारंभिक ज्ञान आवश्यक है। यहां यह बतलाना पर्याप्त होगा कि इक्वेलाइजर सर्किटों की मदद से समान स्तर पर रिकार्ड की गई सभी आवृत्तियों की लहरों से लगभग समान वोल्टता मिलने लगती है।

टेप रिकार्डर की सामान्य रचना

टेप रिकार्डर में जो टेप होता है उसकी लम्बाई बहुत होती है इसलिए उसे रील के रूप में लपेट कर रखा जाता है। टेप का एक सिरा एक घिर्री पर व दूसरा सिरा दूसरी घिर्री पर चढ़ा होता है।

टेप को समान चाल से घुमाने के लिए उसे दो बेलनाकार भागों के बीच से होकर एक घिर्री से दूसरी घिर्री पर ले जाया जाता है। इनमें से एक बेलनाकार भाग विद्युत मोटर द्वारा घुमाया जाता है, व दूसरा भाग स्प्रिंग की मदद से पहले वाले भाग पर दाब डालता रहता है। विद्युत मोटर द्वारा चलाए गए बेलनाकार भाग को कैपस्टन कहते हैं व दूसरे भाग को प्रेशर रोलर। इसके अतिरिक्त टेप को सही मार्ग पर रखने के लिए उसे दो या दो से अधिक बेलनाकार भागों के ऊपर से ले जाते हैं—इन बेलनाकार चीजों को टेप गाइड कहते हैं। अधिकांश टेप रिकार्डरों में टेप बायीं ओर की घिर्री से खुल कर दायीं ओर की घिर्री पर लिपटता जाता है। इसलिए दायीं ओर की घिर्री को घुमाना आवश्यक

है। कैपस्टन घुमाने वाली मोटर से या किसी अन्य मोटर से दायीं ओर की घिर्री घुमाई जाती है। इस प्रकार बायीं ओर की घिर्री से टेप खुलता जाता है और एक सकरे मार्ग से होता हुआ दाईं ओर की घिर्री पर लिपटता जाता है।

टेप रिकार्डर के सकरे मार्ग में उसके तीन मुख्य भाग होते हैं। ये तीन मुख्य भाग हैं—इरेजिंग हैड, रिकार्डिंग हैड और प्लेबेक हैड। जैसा कि पहले कहा जा चुका है ये हैड क्रमशः टेप पर पूर्व अंकित कार्यक्रम मिटाने के लिए, नया कार्यक्रम अंकित करने के लिए और फिर उसे सुनाने के लिए होते हैं। कुछ टेप रिकार्डरों में अंकन व पुनरुत्पादन का काम एक ही हैड करता है।
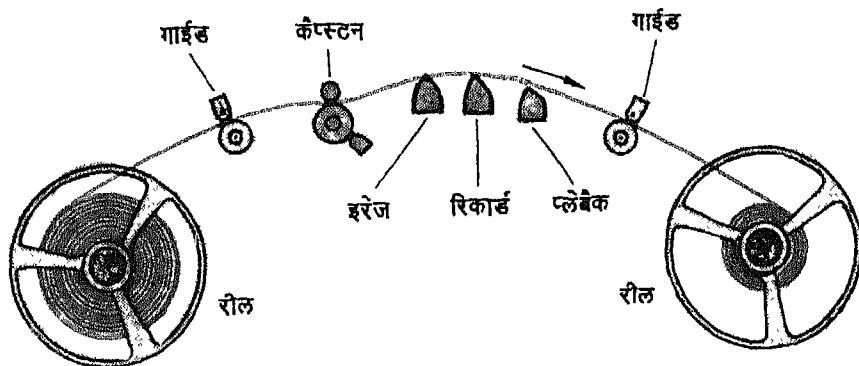
चित्र 26 टेप रिकार्डर की सामान्य व्यवस्था

टेप जितनी अधिक तेज चाल से चलाया जाता है, आवाज उतनी ही अच्छी आती है। लेकिन तेज चाल से चलाने पर केवल थोड़ी देर का कार्यक्रम अंकित हो पाता है। जहां उच्च स्तर की ध्वनि की आवश्यकता

न हो वहां धीमी गति से टेप चलाने पर अधिक देर का कार्यक्रम अंकित किया जा सकता है। इसलिए वार्तालाप आदि सुनने के लिए टेप को धीमी गति से चलाया जा सकता है लेकिन संगीत सुनने के लिए उसे तेज गति से ही चलाना अच्छा होगा। टेप की चाल बदलने के लिए टेप रिकार्डर में कई बटन होते है। इस प्रकार बटन दाब कर टेप को मनचाही चाल से चलाया जा सकता है।
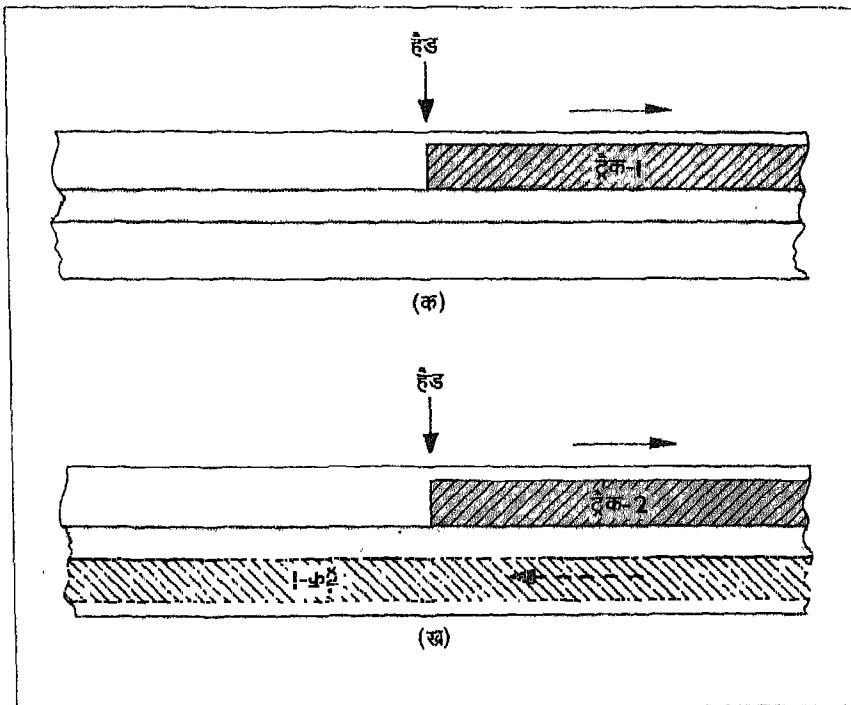
चित्र 27 दो पथ-चिह्नो की स्थिति

(क) ट्रैक 1 पर रिकार्डिंग

(ख) ट्रैक-1 पर रिकार्डिंग पूरा करने के बाद ट्रैक-2 पर रिकार्डिंग

घरेलू टेप रिकार्डरों में टेप की केवल आधी चौड़ाई का ही प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार प्रत्येक टेप पर ऊपर नीचे दो कार्यक्रम अंकित किए जा सकते हैं। ऐसे टेप रिकार्डर को दो पथ चिन्हों अथवा ट्रेकों वाला टेप रिकार्डर कहते हैं। स्पष्ट है कि दो पथचिन्हों वाले टेप में दुगने समय का कार्यक्रम अंकित किया जा सकता है। व्यवसायिक संस्थाओं में जहां अंकन का स्तर अच्छे से अच्छा रखना होता है वहां एक पथचिन्ह वाले टेप रिकार्डर का ही उपयोग किया जाता है। घरेलू मनोरंजन के लिए दो पथचिन्हों वाले टेप रिकार्डर संतोषजनक काम करते हैं। यदि किसी व्यक्ति को बहुत संख्या में कार्यक्रम अंकित करने हैं तो मितव्ययिता के लिए उसे चार पथचिन्हों वाला टेप रिकार्डर लेना चाहिए।

आधुनिक टेप रिकार्डरों में टेप समाप्त हो जाने पर उसे स्वतः रोकने का प्रबन्ध रहता है। गतिमान टेप पर एक लीवर दबाव डालता है। टेप समाप्त हो जाने पर टेप के खिंचाव में परिवर्तन होता है, फलस्वरूप लीवर काम करने लगता है। इस प्रकार लीवर के साथ जुड़ा स्विच विद्युत मोटर का कनेक्शन काट देता है।

आजकल कुछ ऐसे टेप रिकार्डर भी बनने लगे हैं जिनमें टेप को स्वतः वापस लौटाने का प्रबन्ध भी रहता है। लौटते समय टेप का दूसरा पथचिन्ह काम में आता है।

कार्यक्रम अंकित व पुनरुत्पादित करने के लिए टेप रिकार्डर में माइक, एम्प्लीफायर और स्पीकर होने आवश्यक हैं। कार्यक्रम रिकार्ड करते समय एम्प्लीफायर के साथ माइक जुड़ जाता है और सुनते समय स्पीकर। टेप रिकार्डर में जो एम्प्लीफायर, माइक और स्पीकर होते हैं उनके बारे में आप आगे पढ़ेंगे।

टेप कैसे बनाया जाता है?

चुंबकीय टेप बनाने के लिए प्लास्टिक के फीते पर लोहे की आक्साइड की पतली परत चढ़ानी होती है। व्यवसायिक तौर पर इसे बनाने के लिए पहले काफी चौड़ा लेकिन पतला प्लास्टिक का थान लिया जाता है। फिर लोहे की आक्साइड में गीला करने वाले पदार्थ, बांधने वाले पदार्थ, चिकना करने वाले पदार्थ और प्लास्टिक को घोल सकने योग्य पदार्थ का मिश्रण बनाया जाता है। मशीन द्वारा एक निश्चित ताप पर इस मिश्रण की एक पतली तह प्लास्टिक की शीट पर चढ़ा दी जाती है। पतली तह चढ़ाते समय इस बात का ध्यान रखा जाता है कि इस पर्त की मोटाई सभी जगह एकसमान रहे। मिश्रण की तह चढ़ाने के बाद प्लास्टिक की शीट को एक सा करने के लिए उसे दो रोलरों के बीच गुजारा जाता है। ऐसा करने पर प्लास्टिक की शीट पर उभरे कण दब जाते हैं और शीट चमकने लगती है।

चुंबकीय पदार्थ चढ़े प्लास्टिक की शीट को फिर उपयुक्त चौड़ाइयों में काट लिया जाता है। इस काम के लिए विशेष प्रकार की मशीन काम में लाई जाती है। इसप्रकार बने चुंबकीय टेप से विभिन्न आकार की रीलें तैयार की जाती हैं। घरेलू कामों के लिए प्लास्टिक की डिबिया में रखे पतले टेप का खूब उपयोग किया जाता है—टेप रखे प्लास्टिक की डिबिया को सभी लोग कैसेट कहते हैं।

टेप जोड़ना व ध्वनि सम्पादन

टेप काफी मजबूत होते हैं परन्तु कभी-कभी वे टूट भी जाते हैं। टूटे हुए टेप को फिर से जोड़ना कोई कठिन बात नहीं। इसके लिए दो

विधियां प्रयोग में लाई जाती हैं।

पहली विधि में चिपकने वाले सेलो-टेप का उपयोग किया जाता है। सबसे पहले टेप के टूटे हुए भागों को एक दूसरे के ऊपर रख कर कैंची अथवा ब्लेड से तिरछा काटते हैं। फिर उनके सिरे मिलाकर चिपकने वाला टेप लगाते हैं। टेप जुड़ जाने के बाद चिपकने वाले टेप का अतिरिक्त भाग सावधानी से काट देते हैं।

सेलो टेप की मदद से टूटे टेप को जोड़ना बहुत सरल होता है परन्तु इसप्रकार बना जोड़ कुछ कमजोर होता है। सुदृढ़ जोड़ों के लिए जोड़ने वाले मसाले का उपयोग किया जाता है। मसाले द्वारा जोड़ने के लिए भी पहले टेप के टूटे हुए भागों को एक दूसरे के ऊपर रखकर कैंची अथवा ब्लेड से उन्हें तिरछा काटते हैं। फिर एक टुकड़े के सिरे के पास लगभग दो तीन सेमी की लम्बाई पर चिपकने वाले मसाले की तह लगा देते हैं और फिर इसे एक कपड़े से पोंछ देते हैं। ऐसा करने से टेप पर चढ़ी परत हट जाएगी। अब इसपर फिर चिपकने वाले मसाले की परत लगा देते हैं व कुछ देर ठहरते हैं। अब दूसरे टुकड़े को पहले टुकड़े के ऊपर सही स्थिति में रखकर जोड़पर थोड़ा दबाव डालते हैं। कुछ देर में मसाला सूख जाता है व टेप के टुकड़े आपस में जुड़ जाते हैं।

टेप पर अंकित छोटे-छोटे कार्यक्रमों को नए क्रम में जोड़कर एक नया बड़ा कार्यक्रम बनाया जा सकता है। ऐसा करने के लिए दो टेप रिकार्डरों की आवश्यकता पड़ती है। यदि दो टेप रिकार्डर उपलब्ध हैं तो ध्वनि सम्पादन का कार्य बहुत सरल हो जाता है। तब एक टेप रिकार्डर पर अंकित टेप चढ़ाकर वांछित क्रम में उसपर अंकित छोटे-छोटे कार्यक्रम बजाए जाते हैं जिन्हें दूसरे टेप रिकार्डर पर रिकार्ड कर लिए जाते हैं। इसप्रकार मन चाहे ढंग से छोटे-छोटे कार्यक्रम लग जाते हैं।

यदि एक ही टेप रिकार्डर उपलब्ध हो तो बड़े कार्यक्रम के सम्पादन के लिए टेप को काटकर वांछित क्रम में जोड़ने के अतिरिक्त कोई चारा नहीं। टेप के टुकड़े ऊपर वर्णित विधि द्वारा जोड़े जा सकते हैं। ध्वनि सम्पादन के समय यह ध्यान रखना चाहिए कि टेप को बिल्कुल शान्त स्थलों से काटे अथवा अधिक शोर के स्थलों से।

स्टूडियों में ध्वनि सम्पादन के लिए विशेष प्रकार की मेज काम में लाई जाती है। इसपर टेप चलाने के लिए दो पहिये लगे होते हैं तथा एक फालतू पहिया भी लगा होता जिसपर कटा हुआ टेप चढ़ा दिया जाता है। टेप को सुनने के लिए प्लेबैक हैड रहता है। सम्पादकीय मेज पर अन्य हैड होने की आवश्यकता नहीं। टेप को जोड़ने के लिए एक विशेष प्रकार की युक्ति भी मेज पर रखी होती है।

टेप व टेप रिकार्डर का रख-रखाव

अधिक दिनों तक टेप रीलों को रखने में बहुत सावधानी बरतनी पड़ती है। देर तक रखने के लिए रीलों पर टेप को न तो बहुत कड़े लपेटें और न ही ढीले। अधिक कड़े या ढीले लिपटे टेपों के सिरे मुड़ने लगते हैं और उनकी आकृति बिगड़ने लगती है। टेप की रीलों को सदैव प्लास्टिक अथवा गत्ते के डिब्बों में ही रखना चाहिए जिससे वे धूल इत्यादि से बचे रहें। अधिक गर्मी में टेप खराब हो जाते हैं, इसलिए कमरे में नमी भी न बहुत कम हो और न ही बहुत अधिक। बड़े-बड़े संस्थानों में जहां हजारों टेप सुरक्षित रखने होते हैं वहां टेप लायब्रेरी को वातानुकूलित करना आवश्यक है।

टेप की एक परत दूसरी परत पर चिपके नहीं इसके लिए कुछ

समय बाद प्रत्येक टेप का उपयोग करते रहना चाहिए। यदि ऐसा करना संभव न हो तो छः महीने में कम से कम एक बार टेप को तेज चलाकर उसे दूसरी घिर्री पर लपेट देना अच्छा होगा।

चुंबकीय टेप को बिजली के तारों व चुंबक के पास नहीं लाना चाहिए अन्यथा रिकार्डिंग खराब हो सकती है।

यदि टेप पर धूल चढ़ जाए तो साफ व मुलायम कपड़े से उसे लपेटते समय पोंछ लेना चाहिए। हैड की सफाई भी समय-समय पर करते रहना चाहिए। हैड के साथ-साथ टेप गाइडों को भी साफ करना चाहिए। इनपर यदि धूल कण जमे हैं तो उनकी रगड़ से टेप खराब हो सकता है।

टेप पर न तो बहुत अधिक स्तर पर अंकन करना चाहिए और न ही बहुत कम पर। अधिक स्तर पर अंकन करने पर कभी-कभी एक परत का कार्यक्रम पास वाली दूसरी परत में भी छप जाता है। इसे आर-पार प्रिन्ट या प्रिन्ट-थ्रू कहते हैं। ऐसा होने पर प्रतिध्वनि मिलने लगती है।

चुंबकीय टेप का चुनाव भी सावधानी से करना चाहिए। यदि उस पर जमे चुंबकीय कणों का साइज अधिक है तो शोर बढ़ जाता है। कभी-कभी टेप के कुछ भाग से चुंबकीय पदार्थ झड़ जाते हैं। ऐसे स्थानों पर अंकन नहीं हो पाता, इसलिए अच्छा यही है कि ऐसे भागों को काट कर अलग कर दिया जाये।

5. सिनेमा फिल्मों पर ध्वनि अंकन

पुराने समय में फिल्मों में आवाज नहीं होती थी। इन मूक फिल्मों की कहानी समझने के लिए प्रत्येक दृश्य के नीचे कुछ बातें लिखी होती थीं। इन्हें पढ़कर दर्शक फिल्म के दृश्यों का पूरा आनन्द उठाते। जो दर्शक पढ़ नहीं सकते थे उन्हें कहानी समझने में कठिनाई आती, इसलिए सिनेमाघरों में यह इंतजाम कर दिया गया कि एक व्यक्ति दृश्यों के साथ-साथ उनका वर्णन करता रहे। संगीत कार्यक्रमों के लिए सिनेमाघर के परदे के नीचे कुछ लोग बैठे होते थे जो उचित समय पर वाद्यवृंद बजाते।

सन् 1928 से बोलने वाली फिल्में बनने लगीं। अब नायक नायिका अपनी बात कहने के लिए बोलने लगे। वे गीत भी गाने लगे। ऐसी फिल्मों को बड़ी सनसनीभरी फिल्में समझा जाता था। वास्तव में तब भी फिल्में बोलती नहीं थीं। उन दिनों कलाकारों की आवाजें व गीत आदि अलग से ग्रामोफोन रिकार्डों पर अंकित कर लिए जाते थे। फिल्म चलाते समय ग्रामोफोन की इन रिकार्डों को भी चला दिया जाता था। रिकार्ड बजाने का समायोजन ठीक इसप्रकार किया जाता था कि बोलने वाले के होंठ आवाज के अनुसार हिलते डुलते लगें। लेकिन ऐसा समायोजन करना कठिन बात थी। वैसे भी अलग से ग्रामोफोन बजाना अच्छा नहीं समझा जाता था। इसलिए यह एक बड़ी चुनौती थी कि फिल्म में आवाज पाने के लिए ग्रामोफोन बजाने की प्रथा से कैसे छुटकारा पाया जाए।

वैज्ञानिकों ने सोचा कि क्यों न फिल्म के एक किनारे पर किसी

प्रकार ध्वनि अंकित की जाए और फिर किसी युक्ति द्वारा उसे सुना जाए। सिनेमा घरों में चित्र दिखलाने के लिए तेज प्रकाश का उपयोग किया जाता है। इसलिए उनका सारा ध्यान प्रकाश की मदद से ध्वनि अंकित व पुनरुत्पादित करने में लग गया। कुछ समय बाद उन्हें अपने प्रयास में सफलता मिली। इसप्रकार सचमुच बोलती फिल्में बनने लगीं।

बोलती फिल्में : सामान्य व्यवस्था की रूपरेखा

फिल्म बनाते समय सेट पर अभिनेता के पास एक माइक लटका देते हैं। इसे लटकाते समय यह ध्यान रखा जाता है कि वह कैमरे के क्षेत्र के बाहर रहे, अर्थात् चित्र खींचते समय माइक का चित्र न आ जाए। माइक का संबंध रिकार्डिंग स्टूडियो से होता है। यहां तरह-तरह के रिकार्डर लगे होते हैं। ये चुंबकीय टेप रिकार्डर हो सकते हैं या प्रकाशीय रिकार्डर। फिलहाल हमारी दिलचस्पी प्रकाशीय विधि द्वारा ध्वनि अंकन में है। इस हेतु जो रिकार्डर काम में लाया जाता है, उसके बारे में आप आगे पढ़ेंगे। यहां यह बतलाना पर्याप्त होगा कि रिकार्डर के भीतर चित्रों वाली फिल्म की तरह एक दूसरी फिल्म चलती रहती है। यह फिल्म भी ठीक उसी गति से चलती है जिस गति से कैमरे की फिल्म चल रही है। इसप्रकार ध्वनि रिकार्डर की फिल्म पर टेड़े-मेढ़े चिह्नों के रूप में ध्वनि अंकित हो जाती है। उधर कैमरे में चढ़ी फिल्म पर दृश्य अंकित हो जाते हैं। इसप्रकार दो फिल्में बनकर तैयार हो जाती है जिन्हें क्रम से ध्वनि-फिल्म और चित्र-फिल्म कहा जाता हैं।

फुरसत मिलने पर ध्वनि फिल्मों और चित्र फिल्मों को मिलाकर एक नई फिल्म बना ली जाती है। इस नई फिल्म के बीच में चित्र-फिल्म
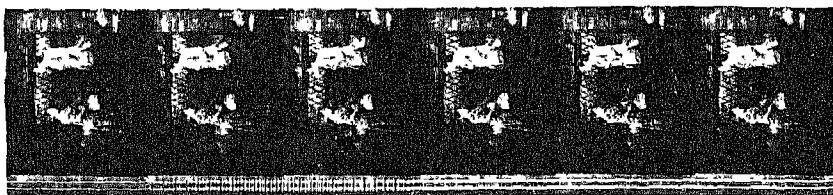
चित्र 28 चलचित्र फिल्म का एक टुकड़ा। ध्वनि एक ओर की पट्टी पर अंकित है

से उतारे चित्र होते हैं व किनारों पर ध्वनि-फिल्म से उतरे टेड़े-मेढ़े चिह्न। इसप्रकार अन्तिम बनी चलचित्र फिल्म में चित्र व ध्वनि दोनों होते हैं।

सिनेमा घर में इस फिल्म को प्रोजक्टर द्वारा चलाया जाता है। प्रोजक्टर में एक लैंप होता है जो बहुत तेज प्रकाश देता है। इस तेज प्रकाश को फिल्म पर डाला जाता है। फिल्म के चित्रों वाले भाग से निकला प्रकाश एक लैंस द्वारा परदे पर फोकस कर दिया जाता है। इस प्रकार परदे पर बड़े-बड़े बिम्ब बन जाते हैं। जो प्रकाश ध्वनि पथ से होकर आता है उसे एक फोटो सेल पर डाला जाता है। इस सेल के बारे में कुछ बातें आप आगे पढ़ेंगे। कम अधिक प्रकाश पड़ने पर यह सेल कम अधिक विद्युत धारा उत्पन्न करता है। इसलिए ध्वनि पथ पर बने टेड़े-मेढ़े चिह्नों को पार कर जो प्रकाश निकलता है वह फोटो सेल पर गिर कर ध्वनि के अनुरूप विद्युत धारा पैदा करता है। इस सेल का संबंध एक एम्प्लीफायर से होता है। इसप्रकार ध्वनि पथ पर अंकित ध्वनि एम्प्लीफायर से जुड़े स्पीकर से निकलने लगती है।

प्रकाशीय ध्वनि रिकार्डर

प्रकाश की मदद से ध्वनि अंकन के लिए एक वैसी ही फिल्म काम में लाई जाती है जैसी चलचित्र बनाने के लिए उपयोग में लाई जाती है। इस फिल्म पर अंकन दो तरीकों से किया जा सकता है। एक विधि में ध्वनि के कम ज्यादा होने पर फिल्म का पारदर्शी भाग का क्षेत्रफल घटता बढ़ता है, इसलिए ध्वनि पट्टी में छोटे-बड़े चिह्नों के रूप में ध्वनि अंकित हो जाती है। दूसरी विधि में चिह्नों का साइज तो उतना ही रहता है

चित्र 29 परिवर्ती क्षेत्रफल विधि से ध्वनि अकन
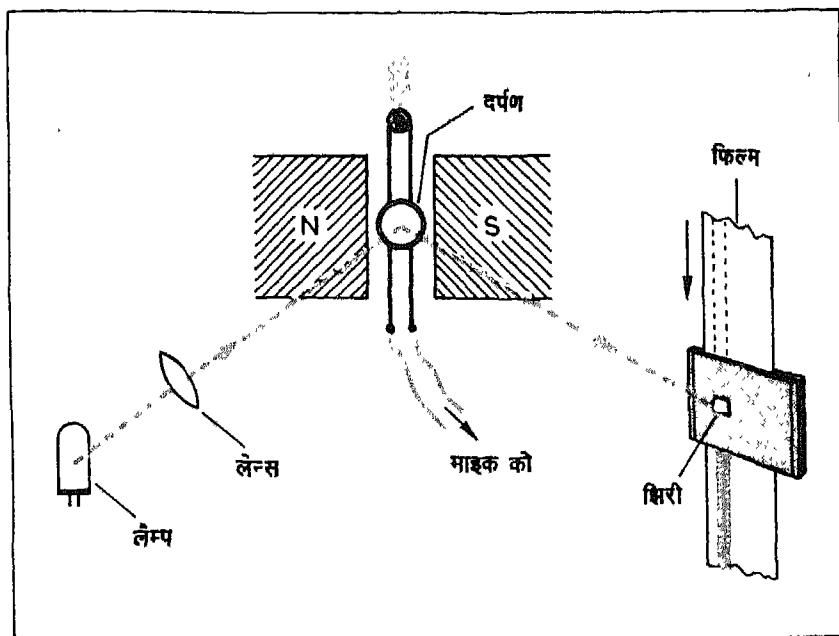
लेकिन इन चिह्नों की पारदर्शिता ध्वनि के घटने-बढ़ने पर उसी ढंग से बदलती है। इस विधि का प्रचलन अब कम हो गया है।

पहली विधि से अंकन करने के लिए चुंबक के दोनों ध्रुवों के बीच तारों की मदद से एक दर्पण लटकाया जाता है। इस दर्पण पर प्रकाश किरणावली डाली जाती है। दर्पण से टकरा कर यह प्रकाश एक झिरी पर गिरता है। इस झिरी के पीछे फिल्म चलती रहती है।

दर्पण को लटकाने वाले तारों में जब विद्युत धारा भेजी जाती है-तो वह एक तार में यदि ऊपर की ओर जाती है तो दूसरे तार में नीचे की ओर। चुंबकीय क्षेत्र में लटके होने के कारण इन तारों पर बल लगते हैं, फलस्वरूप दर्पण थोड़ा घूम जाता है। लेकिन यदि तारों में ध्वनि के अनुरूप घटती-बढ़ती धारा भेजें तो क्या होगा? स्पष्ट है कि तब दर्पण इधर-उधर कंपन करने लगेगा। दर्पण के कंपन के कारण पूरी झिरी पर प्रकाश नहीं पड़ पाता। फलस्वरूप कभी झिरी का कम भाग प्रकाशित होता है तो कभी अधिक। झिरी के पीछे चल रही फिल्म पर यह प्रकाश गिरता है जिससे फिल्म पर ध्वनि के अनुरूप चिह्न बन जाते हैं।

फिल्म पर अंकित ध्वनि कैसे सुनें

हम सभी जानते हैं कि विद्युत धारा कई तरह से पैदा की जा सकती है, जैसे चुंबक के दोनों ध्रुवों के बीच कुंडली घुमाकर या वैसी रसायनिक क्रियाएं करके जैसी टार्च के सेल के भीतर होती हैं। किन्हीं पदार्थों को दाबने से भी विद्युत वोल्टता मिल जाती है। लोहे के तार को तांबे के तार से, दोनों सिरों पर जोड़ने पर आसानी से विद्युत वोल्टता तब मिलने लगती है जब इस युगल के एक सिरे को ठंडा रखें व दूसरे को गर्म। माइक के आगे बोलने पर भी विद्युत धारा मिलती है। प्रश्न उठता है कि

क्या प्रकाश की मदद से भी विद्युत धारा मिल सकती है?

जीं हां, यह पाया गया है कि जब प्रकाश किसी धातु पर गिरता है तो कुछ इलेक्ट्रान मुक्त होते हैं। यदि कांच के बल्व के भीतर धातु की एक प्लेट लगाएं जिसे बैटरी के ऋण सिरे से जोड़ दें तथा इसके आगे धन सिरे से जुड़ा कोई तार खड़ा कर दें तो प्लेट पर प्रकाश डालने पर क्या होगा? धातु की प्लेट पर प्रकाश डालने पर इलेक्ट्रान मुक्त होंगे। इलेक्ट्रान ऋण आवेशित होते हैं इसलिए धातु की प्लेट से मुक्त होते ही ये धनात्मक तार की ओर चल पड़ते हैं। इसप्रकार प्लेट और तार के बीच विद्युत प्रवाह आसान हो जाता है। स्पष्ट है कि जितना तेज प्रकाश धातु की प्लेट पर डाला जाएगा उतनी ही अधिक संख्या में इलेक्ट्रान मुक्त होंगे, फलस्वरूप उतनी ही अधिक विद्युत धारा प्रवाहित होगी। प्रकाश की मदद से विद्युत धारा पाने की इस युक्ति को प्रकाश विद्युत सेल या फोटो सेल कहा जाता है। सिनेमा की फिल्मों पर अंकित ध्वनि सुनाने में फोटो सेल बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। टेलीविजन के विकास में भी इन सेलों का बड़ा योगदान रहा है।

चित्र 30 फोटो सेल

जैसा पहले कहा जा चुका है सिनेमा फिल्म पर अंकित छोटे बड़े चिह्नों से फिर आवाज पाने के लिए फिल्म पर प्रकाश डाला जाता है।
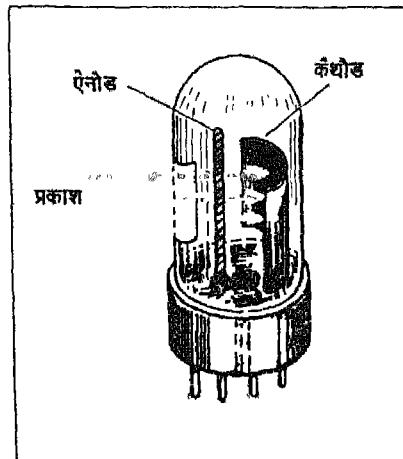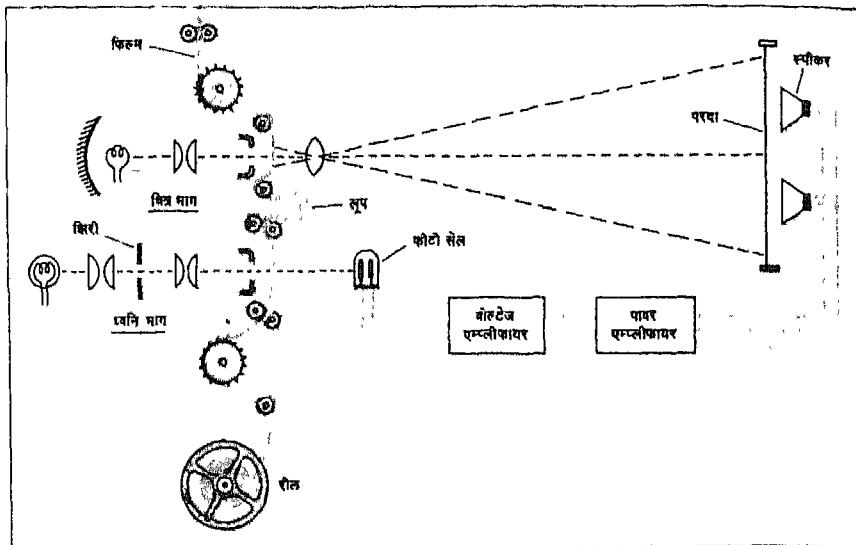
चित्र 31 फिल्म पर अंकित ध्वनि का पुनरुत्पादन

फिल्म की ध्वनि पट्टी को पारकर जो प्रकाश बाहर निकलता है उसे फोटो सेल पर डाला जाता है। फलस्वरूप फोटो सेल के सर्किट में ध्वनि के अनुरूप विद्युत धारा का उतार चढ़ाव होने लगता है। विद्युत धारा के इस उतार-चढ़ाव को एम्प्लीफायर द्वारा प्रबल बनाया जाता है और फिर उससे स्पीकर बजाया जाता है।

चित्र और ध्वनि में समायोजन

फिल्म उद्योग में चित्रों की व ध्वनि की फिल्में अलग-अलग बनाई जाती हैं। बाद में इन्हें जोड़ा जाता है। जिससे एक ही फिल्म से चित्र व ध्वनि दोनों पाई जा सकें। सवाल उठता है कि चित्रों और ध्वनि में कैसे

सही समायोजन किया जाता है। ऐसा क्यों नहीं होता कि जब कोई गायक गाना गाता दिख रहा हो तब दर्शक को गीत की आवाज के बदले आगे या पीछे के किसी दृश्य की बातें सुनाई दें।

सिनेमा फिल्म में चित्र और ध्वनि में समायोजन करना बहुत आवश्यक है। इसके लिए एक बहुत मामूली चीज का उपयोग किया जाता है। इस चीज को क्लैपस्टिक कहा जाता है। यह एक काला बोर्ड होता है जिसपर फिल्म का नाम, दृश्य, शाट और टेक संख्या लिख देते हैं। इस बोर्ड के ऊपरी भाग में कब्जों से जुड़ी एक पट्टी होती है, जिससे पट्टी को उठाया या गिराया जा सके। किसी भी शाट से पहले इस बोर्ड को कैमरे के आगे लाते हैं। जैसे ही निर्देशक कहता है 'साउंड' वैसे ही रिकार्डिंग कक्ष में बैठा इंजीनियर ध्वनि रिकार्डर चला देता है और कहता है 'कैमरा'। कैमरामैन तुरन्त कैमरा चला देता है। ठीक इसी समय क्लैपस्टिक वाला सहायक शाट और टेक संख्या आदि बोलता हुआ हाथ से उठाई पट्टी को छोड़ देता है। कब्जों से जुड़ी इस पट्टी को छोड़ने पर वह बोर्ड से टकराती है। फलस्वरूप चटाख की आवाज पैदा होती है। इस घटना को चलचित्र कैमरे द्वारा उतार लिया जाता है और चटाख की आवाज ध्वनि रिकार्डर द्वारा अंकित हो जाती है। इसप्रकार अंतिम फिल्म बनाते समय चित्र और ध्वनि के चिह्न साथ-साथ उतारे जा सकते हैं। लेकिन समायोजन की समस्या यहीं समाप्त नहीं होती। अन्य समस्याओं का ध्यान रखते हुए ध्वनि चिह्न संगत चित्रों से थोड़े आगे उतारे जाते हैं। ऐसा क्यों किया जाता है, इसे समझने के लिए हमें फिल्म प्रोजेक्टर के बारे में कुछ जानना होगा।

हम सभी जानते हैं कि सिनेमा की फिल्म में चित्रों की लम्बी कड़ी होती है। जब फिल्म चलाई जाती है तो ये चित्र एक के बाद एक प्रोजेक्टर के लेंस के सामने आते हैं, क्षण भर ठहरते हैं और फिर आगे

बढ़ जाते हैं। प्रोजेक्टर के इस चित्र-भाग में फिल्म रुक-रुक कर चलती है। लेकिन परदे पर बिम्ब इतनी तेज गति से प्रकट और ओझल होते हैं कि हमें लगता है कि जैसे अभिनेता सचमुच चल फिर रहे हैं। प्रोजेक्टर के चित्र-भाग के बाद फिल्म उसके ध्वनि-भाग में पहुंचती है। क्योंकि फिल्म ध्वनि-भाग में जरा देर से पहुंचती है, इसलिए चित्र और ध्वनि मेल नहीं खा पाते। यदि ऐसा हो तो दृश्य तो कोई होगा और आवाज कुछ और। इस त्रुटि को मिटाने के लिए ध्वनि चिह्नों को पहले ही चित्र से कुछ फ्रेम आगे अंकित करते हैं। यही नहीं, ध्वनि में सतता बनाए रखने के लिए प्रोजेक्टर के चित्र-भाग से निकलने के बाद फिल्म को कई जगहों से निकाला जाता है और कई लूप बनाती हुई यह फिल्म ध्वनि-भाग में पहुंचती है। फलस्वरूप ध्वनि-भाग में आने पर वह सतत रूप से चलती है। इसप्रकार सही समय पर व सही ढंग से फिल्म बोलने लगती है।

पार्श्व गायन

पुराने समय में फिल्म स्टूडियो के भीतर अभिनेता स्वयं गीत गाते थे। चलचित्र बनाते समय इस बात का ध्यान रखना पड़ता था कि वाद्यवृंद कैमरे के फ्रेम में न आ जाए। इस कारण वाद्यवृंद छोटा रखना पड़ता था। तब भी वाद्यवृंद को कैमरे के क्षेत्र से बाहर रखने के लिए कैमरे के कोणों को बहुत अधिक बदला नहीं जा सकता था।

आउट डोर शूटिंग के समय तो और भी परेशानी होती थी। एक गाड़ी में रखकर सारे वाद्य ले जाने पड़ते थे। यदि अभिनेता गीत गाते समय चल-फिर रहा है तो उसके पीछे-पीछे वादक अपने-अपने वाद्य

बजाते हुए चलते थे। इतना सब कुछ करने के बाद भी ध्वनि अंकन अच्छा नहीं होता था, क्योंकि आसपास का शोर भी गाने के साथ अंकित हो जाता था।

इन सभी कठिनाइयों से बचने के लिए पार्श्व गायन या प्लेबैक प्रथा का आरंभ हुआ। पार्श्व गायन के लिए कोई गायक, जो अक्सर अभिनेता नहीं होता, पहले ही पूरे वाद्यवृंद के साथ अपना गाना ध्वनि स्टूडियो में रिकार्ड करा लेता है। बाद में सेट पर या आउट डोर शूटिंग के समय इस गाने को बजा दिया जाता है। इसे सुनकर अभिनेता अपने होंठ हिलाकर गीत गाने का अभिनय करते हैं। पार्श्व गायन प्रथा के आरंभ होने से वे अभिनेता भी जिन्हें गाना नहीं आता था, फिल्मों में गाने लगे।

पार्श्व गायन प्रथा में गीत को ध्वनि स्टूडियो में रिकार्ड किया जाता है। ध्वनि स्टूडियो में फिल्म स्टूडियो की तरह चहल-पहल और तड़क-भड़क नहीं होती। न ही अधिक लोगों की भीड़-भाड़ होती। ध्वनि स्टूडियों के ध्वनि रोधी हॉल में सौ, डेढ़ सौ वादक अपने-अपने वाद्ययंत्रों के साथ मौजूद रहते हैं। प्रत्येक वादक के सामने गीत संबंधी निर्देश संगीत लिपि में लिखे होते हैं। इन वादकों को कई समूहों में बांट दिया जाता है और प्रत्येक समूह के आगे एक-एक माइक लगा दिया जाता है। इस प्रकार पांच-छः माइक्रोफोनों से संगीत लहरी को पकड़ा जाता है।

ध्वनि स्टूडियो में हॉल के अतिरिक्त कुछ ध्वनि-रोधक कमरे और भी होते हैं। ऐसे ही एक कमरे में गायक वाद्यवृंद को सुनते हुए अपना गीत गाता है। गायक और वाद्यवृंद के सभी माइक्रोफोनों का संबंध दूसरे कमरे में रखे ध्वनि-रिकार्डर से होता है।

आजकल ध्वनि का पहला रिकार्डिंग चुंबकीय टेप पर किया जाता है—इससे महंगी चलचित्र फिल्म की बचत होती है। चुंबकीय रिकार्डर में

कई पथचिह्नों वाला टेप होता है। ध्वनि इंजीनियर विभिन्न माइक्रोफोनों द्वारा पकड़ी गई आवाजों को अलग-अलग पथचिन्हों या ट्रेकों पर अंकित कर लेते हैं। इससे लाभ यह होता है कि फिल्म की जरूरत को देखते हुए कभी गायक की आवाज उभारी जा सकती है या किसी विशेष वाद्यवृंद यंत्र की।

गीत गाने के लिए गायक व वादकों को काफी मेहनत करनी पड़ती है। उन्हें संगीत निर्देशक के इशारों पर गाना व बजाना पड़ता है। गायक की लय और वाद्यवृंद की लय के बीच संतुलन बैठाना होता है। इस बीच संगीत-निर्देशक व ध्वनि-इंजीनियर सब कुछ सुनते रहते हैं। जब वे दोनों संतुष्ट हो जाते हैं तब ही असली रिकार्डिंग शुरू होता है।

जैसाकि पहले कहा जा चुका है सबसे पहले रिकार्डिंग चुंबकीय टेप रिकार्डर पर किया जाता है। चुंबकीय टेप के विभिन्न टेकों पर अलग-अलग माइक्रोफोन द्वारा पकड़ी गई आवाजें अंकित कर ली जाती हैं। आवश्यकता पड़ने पर गीत कई बार गाना होता है। अक्सर चार पांच टेक (प्रयास) के बाद ही किसी एक को सही घोषित किया जाता है। सबसे अच्छे टेक को छोड़कर अन्य टेकों की ध्वनि मिटा दी जाती है। बाद में इस टेक की ध्वनि को साधारण फिल्म पर उतार दिया जाता है। स्टीरियो प्रभाव देने के लिए इस फिल्म पर कम से कम दो ध्वनि पट्टियों का छापना आवश्यक है। इसप्रकार बनी ध्वनि-फिल्म की एक प्रति स्टूडियो में या आउट डोर शूटिंग के स्थान पर भेज दी जाती है और दूसरी प्रति ग्रामोफोन कम्पनियों को दे दी जाती है जिससे वे रिकार्ड बना सकें। शूटिंग के समय इस ध्वनि-फिल्म को चलाकर आवाज पैदा की जाती है जिसे सुनकर अभिनेता अपने होंठ हिलाता है। उधर कैमरे द्वारा गीत गाते अभिनेता के चित्र खिंच जाते हैं और इसप्रकार चलचित्र फिल्म बन जाती है। वैसे तो इस चलचित्र फिल्म के किनारों पर संवाद और गीत की

ध्वनियां उतारकर अन्तिम फिल्म बनाई जा सकती है, लेकिन अन्तिम फिल्म बनाने से पहले कुछ दृश्यों के संवाद फिर बोले जाते हैं, दृश्य की नीरसता तोड़ने के लिए पार्श्व संगीत दिया जाता है और फिल्म में नाटकीयता लेने के लिए कुछ विशेष ध्वनि प्रभाव अलग से अंकित किए जाते हैं।

पार्श्व संगीत

जब पूरी फिल्म बना ली जाती है तो उसे चलाने पर कुछ ऐसे भी दृश्य आते हैं जिनमें आवाज नहीं होती। ऐसे मूक दृश्यों की नीरसता तोड़ने के लिए व प्रमुख दृश्यों में नाटकीय प्रभाव लाने के लिए पार्श्व संगीत दिया जाता है।

पार्श्व संगीत संबंधी सारा काम ध्वनि स्टूडियो में किया जाता है। यहां प्रोजेक्शन कक्ष में फिल्म के उस भाग को बार-बार परदे पर दिखलाया जाता है जहां पार्श्व संगीत की आवश्यकता हो। इन दृश्यों को देखकर संगीत निर्देशक यह तय करता है कि इन दृश्यों के लिए कैसा पार्श्व संगीत दिया जाये। इस संगीत को गीतों की तरह अलग से रिकार्ड कर लिया जाता है।

डबिंग

आउट डोर शूटिंग के समय ध्वनि अंकन ठीक नहीं हो पाता। ऐसी शूटिंग के समय बहुत सी फालतू आवाजें आ जाती हैं, जैसे शूटिंग देखने वाले दर्शकों की आवाजें, पास गुजरती कारों के होर्न की आवाजें, विद्युत जनेरेटर की भकभक आदि। इनसे बचने के लिए डबिंग प्रथा का आरंभ हुआ।

जब पूरी फिल्म बन जाती है तब डबिंग के लिए उसे ध्वनि स्टूडियो के प्रोजेक्शन कक्ष में चलाया जाता है। फिल्म के साथ-साथ उस चुंबकीय टेप को भी चलाया जाता है जिसमें आउट डोर शूटिंग के संवाद आदि अंकित होते हैं। इस टेप को सुनकर व परदे पर फिल्म देखकर अभिनेता को यह याद आ जाता है कि उसने क्या संवाद किस ढ़ंग से बोले थे। किसी एक दृश्य की फिल्म व टेप बार-बार चलाए जाते हैं जिससे अभिनेता को संवाद अच्छी तरह याद हो जाए। अब प्रोजेक्शन कक्ष के स्पीकर को बन्द कर दिया जाता है और अभिनेता के कानों पर ईयरफोन लगा दिया जाता है। ईयरफोन द्वारा अभिनेता वह सब कुछ सुनता रहता है जो थोड़ी देर पहले वह स्पीकर से सुन रहा था। अभिनेता दृश्य देख कर व ईयरफोन की आवाज सुनकर अपने सामने रखे माइक में संवाद बोलता है। वह ठीक उसीप्रकार बोलता है जिसप्रकार फिल्म में उसके होंठ हिल रहे थे—इस दृष्टि से यह पाश्र्व गायन के ठीक विपरीत क्रिया है। ध्वनिरोधी कमरे में बोले गए संवाद पहले टेप रिकार्डर में अंकित कर लिए जाते हैं। बाद में इन्हें फिल्म पर उतार लिया जाता है।

एक भाषा में बनी फिल्म को दूसरी भाषा में डब करने के लिए यही सब कुछ करना पड़ता है।

ध्वनि संबंधी विशेष प्रभाव

कुछ दृश्यों की नाटकीयता बढ़ाने के लिए तरह-तरह की आवाजें जोड़ना आवश्यक होता है—जैसे घोड़े की टाप, बूटों की खटखट, दरवाजा खुलने की चरमराहट, कुत्ते के भौंकने की आवाज आदि। ये ध्वनियां पहले ही ठींक क्रम में रिकार्ड कर ली जाती हैं और इसप्रकार विशेष प्रभाव देने के लिए एक ध्वनि फिल्म अलग से तैयार कर ली जाती है।

ध्वनि का पुनः अंकन

जब कैमरे द्वारा सारे दृश्य फिल्माए जा चुके होते हैं और उनका संपादन कर लिया जाता है तो फिल्म में केवल ध्वनि अंकित करने का काम रह जाता है। उधर ध्वनि-फिल्म के कई ट्रेकों पर संवाद, ध्वनि प्रभाव और पार्श्व गीत व पार्श्व संगीत अंकित होता है। लेकिन अंतिम फिल्म में चलचित्रों के साथ केवल एक ही ध्वनि ट्रेक छापना पड़ता है।

अन्तिम फिल्म बनाने के लिए ध्वनि-फिल्म के सभी ट्रेकों पर अंकित ध्वनियों को मिलाना पड़ता है। इस हेतु ध्वनि स्टूडियो में चलचित्र-फिल्म व ध्वनि फिल्म साथ साथ चलाई जाती हैं। चलचित्र-फिल्म और ध्वनि-फिल्म का काल समायोजन पहले ही कर लिया जाता है। इसप्रकार परदे पर चलते-फिरते चित्र आने लगते हैं और ध्वनि-फिल्म के सभी ट्रेकों से आवाजें। ध्वनि इंजीनियर आवश्यकता के अनुसार किसी भी ध्वनि ट्रेक की आवाज बढ़ा या घटा सकता है। इसप्रकार ध्वनि स्टूडियो में ध्वनि प्रभावों, पार्श्व गीत व संगीत तथा संवादों की आवाजें उचित अनुपात में मिलाकर फिल्म के किनारे पर अंतिम बार अंकित कर लेते हैं। इस क्रिया को पुनः अंकन या री-रिकार्डिंग कहते हैं।

यदि फिल्म में स्टीरियो प्रभाव लाना है तो फिल्म के किनारे पर एक से अधिक ट्रेकों पर ध्वनि अंकित की जाती है। इनमें से कुछ ट्रेक-चुंबकीय टेप जैसे भी हो सकते हैं।

6. स्टीरियो ध्वनि

प्रकृति ने हमें दो आंखें और दो कान दिए हैं। लेकिन यदि हमारे केवल एक आंख और एक कान होते तो क्या होता? तब हमें दृश्य और ध्वनि में वैसे त्रि-आयामी प्रभाव अनुभव न होते जिनके हम आदी हो चुके हैं। एक आंख बंद करके सुई में धागा पिरोना मुश्किल है क्योंकि एक आंख से दूरी का सही अंदाज नहीं हो पाता। इसीप्रकार यदि हमारे
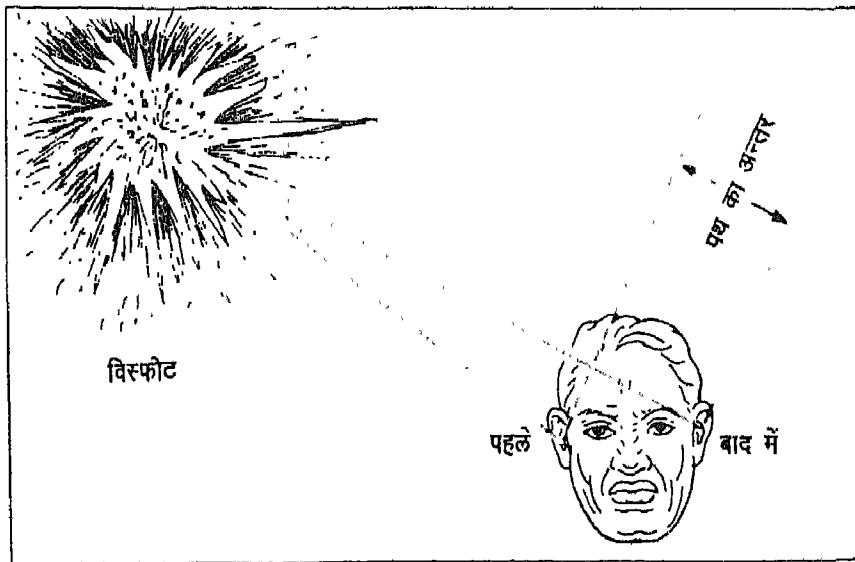
चित्र 32 दो कानो से सुनने पर दिशा बोध हो जाता है। पास वाला कान ध्वनि पहले पकड़ता है व दूर वाला तनिक देर से

केवल एक कान होता हो हमें आवाज सुनकर उसे उत्पन्न करने वाले स्रोत की दिशा व दूरी का बोध न होता। जब कोई व्यक्ति हमें बुलाता है तो हमारा सिर यूं ही उस ओर घूम जाता है जिधर से आवाज आ रही हो। यही नहीं आंखें बन्द करके यदि हम किसी बन्द कमरे में आवाजें सुनें तो हमें कमरे के साइज का अन्दाज भी लग जाता है। संक्षेप में दो कानों की वजह से हमें ध्वनिक आकाश का आभास होता है।

हमारे दोनों कान एक ही ओर नहीं हैं। एक दायीं ओर है तो दूसरा बायीं ओर। इसकारण दोनों कान बिल्कुल एक जैसी आवाज नहीं सुनते। उदाहरणार्थ, यदि दायीं ओर धमाका हो तो दायीं ओर वाले कान तक आवाज तनिक पहले पहुंचेगी और दूसरे कान तक थोड़ी देर बाद। यही नहीं बायीं ओर वाले कान द्वारा सुनी गई आवाज की तुलना में वह थोड़ी प्रबल भी होगी। यद्यपि दोनों कानों द्वारा सुनी गई आवाजों में समय और प्रबलता का बहुत कम अन्तर होता है, लेकिन इसी अन्तर के आधार पर हमारा मस्तिष्क यह हिसाब लगा लेता है कि आवाज आगे, पीछे, दायें, बायें किस ओर से आई। दूसरे शब्दों में दो कानों के कारण हमारे दिमाग में हमारे परिवेश की ध्वनिक तस्वीर खिंच जाती हैं।

किसी सभा भवन में बैठकर वाद्यवृंद सुनने में बड़ा आनन्द आता है। वाद्यवृंद में अक्सर बहुत से वाद्य होते हैं जो सारी स्टेज पर फैले होते हैं। ये सारे वाद्य प्राय: एक साथ नहीं बजाए जाते वरन् कभी किसी वाद्य को बजाया जाता है तो कभी किसी को। इस प्रकार सुनने की दृष्टि से भी हमारे आकर्षण का केन्द्र स्टेज पर इधर-उधर चलता-फिरता रहता है। पृष्ठभूमि की हल्की आवाजों के बीच इसप्रकार चलते-फिरते ध्वनि केन्द्र की वजह से हमें बड़ा अच्छा लगता है और हम सुध-बुध खोकर संगीत की दुनिया में खो जाते हैं। लेकिन साधारण ढंग से रिकार्ड किए वाद्य वृंदों के कार्यक्रमों को सुनने में वैसा आनन्द नहीं मिलता जैसाकि सभा भवन में

बैठकर सुनने में मिलता है। इसका कारण स्पष्ट है—सभा भवन में बैठकर सुनने पर हमें लगभग 30 मीटर × 10 मीटर मंच पर फैले वाद्यों को सुनने का अवसर मिलता है लेकिन साधारण रिकार्ड की गई युक्तियों को बजाने पर पूरे मंच की आवाजें सिकुड़कर स्पीकर के कुछ सेमी चौड़े सुराख से आती लगती है। फलस्वरूप ध्वनि केन्द्र के चलते-फिरते रहने का, तो प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता। इसकारण सारा संगीत निर्जीव लगता है।

वास्तविकता के निकट का संगीत पाने के लिए आवश्यकता इस बात की है कि ध्वनि अंकन और ध्वनि पुनरुत्पादन की सारी व्यवस्था इसप्रकार बनाई जाए कि सुनते समय पूरी ध्वनिक तस्वीर उभर कर आए। पूरी ध्वनिक तस्वीर पाने की इस व्यवस्था को स्टीरियो व्यवस्था कहते हैं।

स्टीरियो प्रभाव और उसे कैसे पाएं

स्टेज पर आयोजित संगीत के किसी कार्यक्रम को सुनते समय यदि आप अपनी आंखें बन्द भी कर लें तो भी आपको यह आभास हो जाता है कि कौन-सा वाद्य कहां रखा है। क्या हारमोनियम बीच में रखा है? वायलिन किस ओर है? तबले किधर रखे हैं, आदि। संगीत निर्देशक मंच सजाते समय इस बात का बड़ा ध्यान रखते हैं कि कौन सा साज कहां रखा जाये। उन्हें अपने अनुभव से यह पता है कि किस वाद्य को कहां रखने से कर्णप्रिय संगीत प्राप्त होता है। अंकित ध्वनि को सुनते समय भी यह प्रभाव मिलना चाहिए। इसलिए आवश्यकता इस बात की है कि स्टीरियो कहलाने वाली किसी भी उपक्रम को सुनते समय इधर उधर
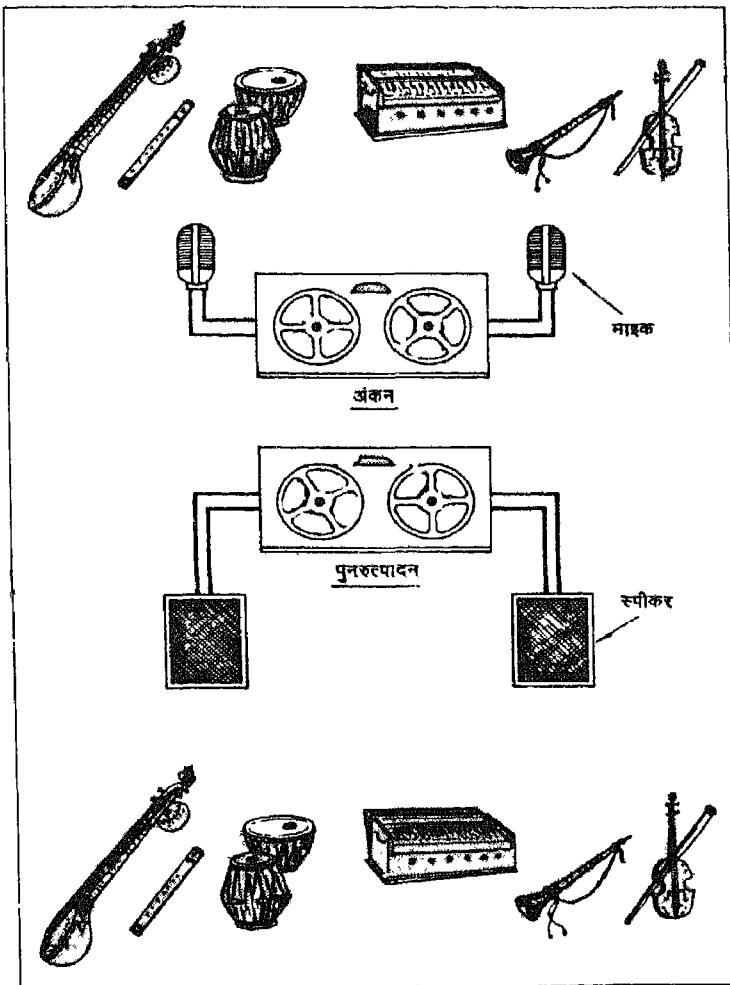
चित्र 33 स्टीरियो प्रभाव पाने की सामान्य व्यवस्था

रखे वाद्यों की आवाजें एक ही स्थान से आती न लगें वरन् वे एक बड़े क्षेत्र से आती लगें।

स्टीरियो प्रभाव पाने के लिए ध्वनि अंकन के समय दो माइक्रोफोनों और सुनते समय दो स्पीकरों का उपयोग किया जाता है। अंकन करते समय दो माइक्रोफोनों को दो कानों की तरह रखकर दो ध्वनि रिकार्ड तैयार किए जाते हैं। फिर दोनों रिकार्डों को एक साथ बजाकर दो एम्प्लीफायरों की मदद से दो स्पीकरों द्वारा सुना जाता है। व्यवस्था इसप्रकार बनाई जाती है कि दायें माइक्रोफोन द्वारा रिकार्ड किया संगीत दायें रखे स्पीकर से आए और बायीं ओर रखे माइक्रोफोन द्वारा रिकार्ड किया गया संगीत बायीं ओर स्पीकर से। ऐसा करने पर दोनों स्पीकरों के बीच बैठे व्यक्ति को यह धोखा होने लगता है कि जैसे वह सचमुच सभा भवन में बैठा वास्तविक संगीत सुन रहा है।

स्टीरियो और हाई-फाई

यदि आप साधारण कमरे में वह स्टीरियो रिकार्ड बजाएं जो किसी बड़े सभा भवन में रिकार्ड किया गया था तो उसे सुनने वाले को एक अजब सा प्रभाव मिलता है। लगता है कि कमरे की दीवारें दूर सरक गईं और वह साधारण कमरा सभा भवन बन गया। आवाज स्पीकरों से आती नहीं लगती वरन् उनके बीच सारे क्षेत्र से आती लगती है। इस प्रकार स्टीरियो बजाने पर लगभग वास्तविक ध्वनिक परिवेश पैदा हो जाता है।

इसके विपरीत एक चैनल अथवा मोनोफोनिक रिकार्ड सुनने पर क्या होता है? हो सकता है कि आपका टेप रिकार्डर या रिकार्ड प्लेयर

हाई-फाई कहलाने योग्य हो—तब उसे बजाने पर यद्यपि सभी तरह की आवाजें बगैर विकृति के उत्पन्न होती हैं लेकिन फिर भी वह रोनक नहीं आती जो वास्तविक संगीत सुनने में आती है। मोनोफोनिक रिकार्ड सुनने पर ऐसा लगता है कि जैसे हम केवल एक कान द्वारा सब कुछ सुन रहे हैं। ध्वनिक आकाश वाली बात गायब हो जाती है। संगीत तब दो आयामी होता है, तीन आयामी नहीं।

यह माना कि स्टीरियो ध्वनि को समझना आसान बात नहीं लेकिन उसमें और मोनोफोनिक ध्वनि में लगभग वैसा ही अन्तर है जैसा किसी मूर्ति में और मूर्ति की तस्वीर में।

कुछ लोग समझते हैं कि एक के बजाय दो स्पीकर लगा देने से स्टीरियो बन जाता है। लेकिन यह बात गलत है। मात्र दो स्पीकरों के लगा देने से बात नहीं बनती। स्टीरियो के लिए आवश्यकता इस बात की है कि हमारे दायें व बायें कानों को वैसी ही अलग-अलग आवाजें सुनाई दें जैसी हमें तब सुनाई पड़तीं जब हम सचमुच संगीत सभा में बैठे होते हैं। आप कितने भी स्पीकर क्यों न लगायें एक चैनल अथवा मोनोफोनिक रिकार्ड बजाने पर स्टीरियो प्रभाव आ ही नहीं सकता।

कुछ लोग हाई-फाई और स्टीरियो के बीच तुलना करते हैं। वे पूछते हैं कि हाई-फाई अच्छा है या स्टीरियो? इससे तो ऐसा लगता है कि मानों दोनों की पारस्परिक तुलना की जा सकती है, जबकि बात ऐसी नहीं। ये दोनों अलग-अलग बातें हैं, दोनों अपनी-अपनी जगह हैं।

उदाहरणार्थ, यदि आप मामूली बगैर हाई-फाई युक्तियों से स्टीरियो व्यवस्था बनायें तो स्पीकरों से आने वाली आवाज तो स्टीरियो आवाज होगी लेकिन तब हाई-फाई न होने की वजह से आवाज में विकृति आने की पूरी संभावना होगी। स्टीरियो व्यवस्था में लगाई गई युक्तियों के हाई-फाई न होने के कारण बहुत निम्न व बहुत उच्च

आवृत्तियों की ध्वनियों में विकृति आ जाती है। इससे संगीत में पूर्णतः का लोप हो जाता है और संगीत में कुछ कमी लगने लगती है। पर फिर भी यह ध्वनि स्टीरियो ध्वनि होती है। उधर दूसरी तरफ केवल हाई-फाई लगाने पर स्टीरियो ध्वनि मिलेगी ही नहीं चाहे आप कितनी भी अच्छी युक्तियों को लगाएं और कितने भी स्पीकर लगायें।

इन सब बातों से स्पष्ट है कि मधुर व वास्तविक ध्वनि प्राप्त करने के लिए हमारी सभी युक्तियों को हाई-फाई तो होना ही चाहिए लेकिन गहराई व ध्वनिक तस्वीर उभारने के लिए ये सभी स्टीरियो किस्म की भी होनी चाहिए। तब ही ध्वनि में वास्तविकता आएगी।

स्टीरियो का प्रारंभ

स्टीरियो का इतिहास भी लगभग उतना ही पुराना है जितना टेलीफोन का। जिन दिनों टेलीफोन का विकास हो रहा था उन दिनों न तो रेडियो थे न ही टेलीविजन। मनोरंजन के लिए तब नृत्य घरों में प्रस्तुत संगीत कार्यक्रमों व नाटकों को सुनने के लिए टेलीफोन का उपयोग किया जाता था। टेलीफोन ग्राहकों को यह सुविधा थी कि वे रंगमंच पर आयोजित कार्यक्रमों को सुन सकें। सन् 1881 तक अधिक वास्तविकता से कार्यक्रमों को सुनने की एक नई टेलीफोन व्यवस्था का विकास हो चुका था। इस व्यवस्था में रंगमंच पर दायीं व बायीं ओर माइक्रोफोन लगाए जाते थे और ग्राहकों को भी दो कानों के लिए दो रिसीवर दिए जाते थे। इसप्रकार दोहरी टेलीफोन व्यवस्था से सुनने पर ग्राहकों को ठीक वैसा ही त्रिविमीय प्रभाव मिलता था जैसाकि किसी दृश्य को दो आंखों से देखने पर मिलता है।

प्रथम विश्व युद्ध के दौरान दुश्मनों के विमानों की दिशा का सही ज्ञान पाने के लिए द्विपथी श्रवण-व्यवस्था का उपयोग किया गया। इस व्यवस्था में ध्वनि एकत्र करने के लिए दो भोंपू लगाए जाते थे जिनका संबंध रबर की नलियों द्वारा चालक के दोनों कानों से होता था। इस ढंग से सुनने पर विमान की दिशा का सही ज्ञान हो जाता था।

रेडियो प्रसारण आरंभ होने के तुरंत बाद त्रिविमीय ध्वनि प्रसारित करने के प्रयत्न किए गए। इस हेतु स्टूडियो में 15-20 सेमी दूरी पर दो माइक्रोफोन रखे जाते थे, जिनके सकेत दो अलग अलग ट्रान्समीटरों द्वारा प्रसारित किए जाते थे। सुनने वाले को दो क्रिस्टल सेट काम में लाने होते थे जिनकी आवाजें वह हैडफोन के एक जोड़े से सुनता था। इसका एक हैडफोन एक क्रिस्टल सेट की आवाज देता था तो दूसरा हैडफोन दूसरे क्रिस्टल सेट की।

जहां तक स्टीरियो ध्वनि अंकन का प्रश्न है, इसकी शुरूआत सन् 1930 से मानी जा सकती है। उस वर्ष इलेक्ट्रिक एंड म्यूजिक इंडस्ट्रीज के इंजीनियर ए० डी० ब्लूमलिन ने दो चैनल वाले ग्रामोफोन रिकार्ड का सफल प्रदर्शन किया। अगले वर्ष उन्होंने इस खोज के लिए ब्रिटिश पेटेंट प्राप्त करने का प्रार्थना पत्र दिया और शीघ्र ही उन्हें यह पेटेंट मिल गया। नई तरह के ग्रामोफोन रिकार्ड बनाने के लिए उन्होंने एक ही खाँचे में दो माइक्रोफोनों के संकेतों को अंकित करने की एक नहीं, वरन् दो, रीतियां ढूंढ निकाली।

सन् 1933 के आसपास बैल टेलीफोन प्रयोगशाला में संगीत प्रसारण व अंकन के लिए महत्वपूर्ण कार्य किया। बैल टेलीफोन प्रयोगशाला के वैज्ञानिकों ने अपने प्रयोगों के लिए माडलों में काम आने वाले नकली सिर का उपयोग किया। इस तरह के नकली सिर को ओस्कर कहा जाता था। ओस्कर के लकड़ी के कानों पर दो माईक्रोफोन
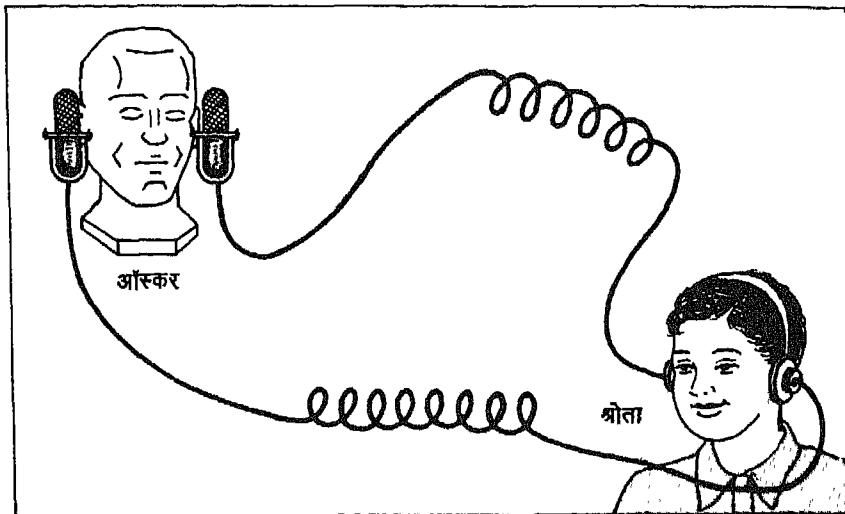
चित्र **34** ओस्कर का उपयोग

लगाए जाते थे और सभा भवन में रखे इस ओस्कर से प्राप्त संकेतों को टेलीफोन द्वारा दूर-दूर तक भेजा जाता था। इन प्रयोगों द्वारा प्राप्त जानकारी का स्टीरियो अंकन में बहुत उपयोग किया गया। सन् 1936 में बैल टेलीफोन प्रयोगशाला के इंजीनियरों ने स्टीरियो रिकार्ड काटने की मशीन का अमेरिका में पेटेंट लिया। इसके एक वर्ष बाद ही इसी प्रयोगशाला ने स्टीरियो टेप रिकार्डर का सफल प्रदर्शन किया। सन् 1937-1941 के बीच बैल टेलीफोन प्रयोगशाला व रेडियो कार्पोरेशन ऑफ अमेरिका के प्रयासों से स्टीरियो प्रभाव देने वाली सिनेमा की कुछ प्रारंभिक फिल्में बनीं।

द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान व उसके बाद के कुछ वर्षों में स्टीरियो तकनीक में बहुत उन्नति हुई। फलस्वरूप सन् 1950 तक स्टीरियो टेप

रिकार्डर और सिनेमा की स्टीरियो ध्वनि देने वाली फिल्मों का प्रचलन बहुत बढ़ गया। वैसे तो स्टीरियो ग्रामोफोन रिकार्ड बनाने के प्रयास बहुत पहले से किए जाते रहे थे लेकिन इन्हें व्यवसायिक रूप से बनाने में सफलता मिली लगभग सन् 1957 में। तब से यही स्टीरियो रिकार्ड और रिकार्ड प्लेयर इतने लोकप्रिय हो गए कि घरेलू मनोरंजन के लिए वे सबसे अच्छे साधन माने जाने लगे।

ग्रामोफोन रिकार्डों पर स्टीरियो ध्वनि

आधुनिक स्टीरियो रिकार्ड लचकदार विनेलाइट नामक प्लास्टिक से बनाई जाती हैं। साधारण रिकार्ड की तरह इस पर भी सर्पिल के रूप में एक महीन खाँचा कटा होता है। यह खाँचा बाहरी सिरे से प्रारंभ होकर केन्द्र से थोड़ी दूरी पर समाप्त होता है। इस खाँचे की दो दीवालें होती हैं। इन्हीं दो दीवालों पर उठानों के रूप में ध्वनि संकेत उभरे होते हैं। खाँचे की एक दीवाल पर दायीं ओर के माइक्रोफोन द्वारा बनी उठानें होती हैं तो विपरीत दीवाल पर बायीं ओर के माइक्रोफोन के द्वारा बनाई उठानें। यहां यह याद दिलाना उचित होगा कि गैर-स्टीरियो साधारण रिकार्ड बनाने के लिए केवल एक ही माइक्रोफोन का उपयोग किया जाता है और इससे प्राप्त संकेतों को खाँचे के टेड़े-मेढ़े चिह्नों के रूप में अंकित किया जाता है। इस तरह के अंकन में खाँचे की दोनों दीवालें तो काम में आती हैं लेकिन वे दोनों मिलकर ही एक माइक्रोफोन द्वारा एकत्र ध्वनि के अनुरूप संकेत देती हैं। इसके विपरीत, स्टीरियो रिकार्ड में खाँचे की दोनों दीवालों पर अलग-अलग संकेत रिकार्ड किए जाते हैं। एक ओर की दीवाल पर दायीं ओर के संकेत होते हैं तो विपरीत दीवाल पर बायीं ओर के।

स्टीरियो रिकार्ड बनाने के लिए विशेष प्रकार के कटर का उपयोग किया जाता है। लोहे से बने इस कटर की शक्ल अंगेजी के वाई अक्षर (Y) जैसी होती है—इस अक्षर के दायीं-बायीं भुजाओं पर दो कुंडलियां चढ़ी होती हैं और नीचे वाली भुजा पेनी सुई के रूप में होती है। बायीं ओर की कुंडली का संबंध एक माइक्रोफोन से होता है तो दायीं ओर की कुंडली का दूसरे माइक्रोफोन से। दोनों कुंडलियां स्थिर होती हैं इसलिए जब दायीं ओर के माइक्रोफोन द्वारा संकेत भेजे जाते हैं तो कटर नीचे की ओर 45° पर चलता है और खाँचे की एक ओर की दीवाल पर उठानें काटता है। लेकिन तब दूसरी दीवाल पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता क्योंकि उस समय कटर इस दीवाल के समानान्तर चल रहा होता है। ठीक इसी प्रकार, बायीं ओर के संकेतों से खाँचे को दूसरी दीवाल पर उठाने बनती हैं लेकिन पहली दीवाल पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता। यदि दायीं व बायीं दोनों ओर से संकेत एक साथ आ रहे हों तो कटर की गति बड़ी पेचीदा हो जाती है, लेकिन इस गति के फलस्वरूप एक दीवाल पर दायीं ओर के संकेत व दूसरी दीवाल पर बायीं ओर के संकेत बन जाते हैं। इस प्रकार एक ही खाँचे की दोनों दीवालों पर दो अलग-अलग संकेत अंकित हो जाते हैं।

स्टीरियो रिकार्ड सुनने के लिए साधारण रिकार्ड प्लेयर में कुछ परिवर्तन करना होता है—साधारण कार्ट्रिज हटा कर उसके स्थान पर स्टीरियो कार्ट्रिज लगाना होता है व एक के स्थान पर दो एम्प्लीफायर व दो स्पीकर काम में लाने होते हैं।

दाब-विद्युत कार्ट्रिज में दाब-विद्युत पदार्थ की छोटी-छोटी दो पट्टियां होती हैं। इन्हें एक दूसरे के समकोण रखा जाता है और बीच में सुई लगाने का प्रबन्ध होता है—इसप्रकार फिर वाई अक्षर जैसी आकृति बन जाती है। हम जानते हैं कि दाब-विद्युत पदार्थ की पट्टी को जब

थोड़ा-सा दाबा जाता है तो विद्युत वोल्टता पैदा हो जाती है। जब इस कार्ट्रिज की मदद से स्टीरियो रिकार्ड बजाया जाता है तो सुई पर कभी दायीं ओर की दीवाल पर अंकित उठानों के अनुरूप धक्का लगता है तो कभी बायीं ओर की। इसप्रकार एक दीवाल से धक्का लगता है तो केवल बायीं ओर की पट्टी में वोल्टेज पैदा होता है लेकिन तब क्योंकि सुई दूसरी दीवाल के समानान्तर चल रही होती है, इसलिए उस ओर की पट्टी में कोई वोल्टता पैदा नहीं होता। ठीक ऐसे ही दायीं ओर की दीवाल की उठानों से धक्का लगने पर दूसरी दाब-विद्युत पट्टी में वोल्टता पैदा होती है। इन वोल्टताओं को अलग-अलग एम्प्लीफायरों में दिया जाता है। एम्प्लीफायरों द्वारा अपने-अपने संकेत प्रबल बनाए जाते हैं और फिर उनसे दो स्पीकर बजाए जाते हैं।

चित्र 35 दाब-विद्युत स्टीरियो कार्ट्रिज

दाब-विद्युत के सिद्धांत पर आधारित कार्ट्रिज के अतिरिक्त अन्य सिद्धांतों पर आधारित कार्ट्रिज भी मिलते हैं। वैद्युत चुंबकीय सिद्धांत पर आधारित कई किस्म के कार्ट्रिज बनाए गए हैं। चल कुंडली किस्म के कार्ट्रिज में दो कुंडलियां होती हैं जो अंग्रेजी में वाई अक्षर (Y) की दोनों भुजाओं की तरह लगी होती हैं तथा बीच में सुई लगाने का प्रबन्ध होता है। यह दोनों कुंडलियां प्रबल स्थाई चुंबकों के बीच होती है। सुई के चलने पर दाईं व बाईं ओर वाली दोनों कुंडलियां इसप्रकार कंपन करती
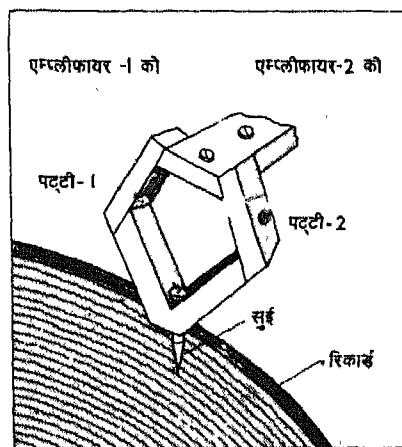
चित्र 36 चल कुंडली स्टीरियो कार्टिज
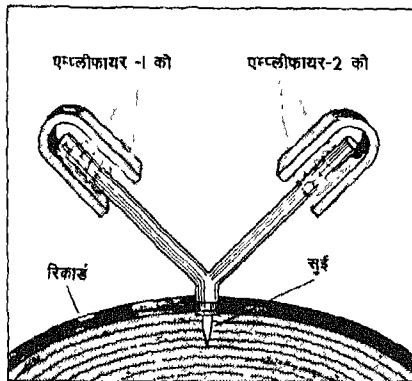
हैं कि दायें ओर की कुंडली में एक ओर के संकेतों के अनुरूप वोल्टता प्रेरित हो और बायें ओर की कुंडली में दूसरी ओर के संकेतों के अनुरूप। दोनों कुंडलियों से प्राप्त विद्युत संकेतों को अलग-अलग दो एम्प्लीफायरों को दिया जाता है और इसप्रकार वर्धित संकेतों से दो स्पीकर बजाए जाते हैं। कार्ट्रिज से जुड़े चारों तार पास-पास नहीं होने चाहिए। जब ये तार पास-पास आ जाते हैं तो एक चैनल की कुछ आवाज दूसरे चैनल में भी पहुंच जाती है। ऐसा होने पर स्टीरिओ प्रभाव मंद पड़ जाता है। एक चैनल से दूसरे चैनल में पहुंचे संकेतों को वैज्ञानिक अप्रासंगिक सिगनल या क्रास टॉक कहते हैं। अच्छी स्टीरियो व्यवस्था में अप्रासंगिक सिगनल एक सीमा से अधिक नहीं होना चाहिए।

चुंबकीय टेप पर स्टीरियो ध्वनि

विगत कुछ वर्षों में स्टीरियो टेप रिकार्डर का प्रचलन बहुत बढ़ा है। सामान्य टेप में एक टेप होता है लेकिन उसमें ध्वनि अंकन के लिए दो पथचिह्न अथवा ट्रेक होते हैं। साधारण रिकार्डिंग के समय इन दोनों ट्रेकों पर अलग-अलग कार्यक्रम अंकित किए जाते हैं, फलस्वरूप दो ट्रेक वाले टेप में दुगने समय का कार्यक्रम अंकित किया जा सकता है। लेकिन यदि स्टीरियो रिकार्डिंग करना हो तो एक ही कार्यक्रम के लिए दोनों ट्रेकों

का साथ-साथ उपयोग करना होता है। तब ऊपर वाले ट्रेक पर बायीं ओर रखे माइक्रोफोन से प्राप्त संकेतों के अनुसार रिकार्डिंग होती है और नीचे वाले ट्रेक पर दायीं ओर रखे माइक्रोफोन से।
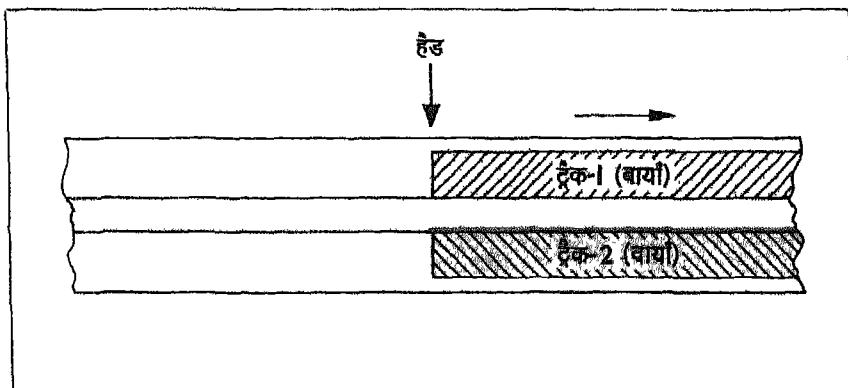
चित्र 37 स्टीरियो टेप के ट्रेक

स्टीरियो टेप पर दोनों ट्रेकों की स्थिति चित्र में दिखलाई गई है। क्योंकि इन ट्रेकों की स्थिति व चौड़ाई आदि उतनी ही है जितनी सामान्य गैर-स्टीरियो की होती है, इसलिए स्टीरियो टेप रिकार्डर पर सामान्य गैर-स्टीरियो टेप भी बजाए जा सकते हैं।

सामान्य टेप रिकार्डर में ध्वनि अंकन के लिए एक हैड काम में लाया जाता है। लेकिन स्टीरियो ध्वनि अंकन के लिए एक के स्थान पर दो हैडों का उपयोग करना होगा। सुविधा के लिए ये दोनों हैड एक के ऊपर एक इसप्रकार रखे होते हैं कि उनके रिक्त स्थान एक ही सीध में हों। ऊपर वाले हैड द्वारा बायीं ओर रखे माइक्रोफोन के संकेत अंकित होते हैं तो नीचे वाले हैड द्वारा दायीं ओर रखे माइक्रोफोन के।

स्टीरियो टेप रिकार्डर में प्रत्येक हैड के लिए अलग-अलग किन्तु समान सर्किट वाले एम्प्लीफायर होते हैं। प्रत्येक एम्प्लीफायर में ध्वनि नियंत्रक (वोल्यूम कन्ट्रोल) और स्वर नियंत्रक (टॉन कन्ट्रोल) होते हैं। ये एम्प्लीफायर बायें व दायें रखे स्पीकरों को बजाते हैं। इन दोनों एम्प्लीफायरों को इसप्रकार समंजित किया जाता है कि वे अपने अपने स्पीकरों से समान स्तर की ध्वनि दें।

बाजार में मिलने वाले अधिकांश स्टीरियो रिकार्डर तीन बातों के लिए बनाए जाते हैं—स्टीरियो अंकित टेप सुनने के लिए, गैर-स्टीरियो साधारण टेप सुनने के लिए और गैर-स्टीरियो साधारण रिकार्डिंग के लिए। अवश्य ही कुछ महंगें स्टीरियो टेप रिकार्डरों में स्टीरियो ध्वनि अंकन का भी प्रबन्ध रहता है।

स्टीरियो रिकार्डिंग के लिए दो माइक्रोफोनों का उपयोग किया जाता है। कुछ समय पहले तक सभी दिशाओं से समान ध्वनि पकड़ने वाले माइक्रोफोन काम में लाए जाते थे, लेकिन आजकल प्रचलित टेप रिकार्डरों में निश्चित दिशाओं से ध्वनि प्राप्त करने वाले माइक्रोफोनों का उपयोग किया जाता है। यह दोनों माइक्रोफोन एक दूसरे के समकोण बनाते हुए लगाए जाते हैं और उनके बीच कलाकार को बैठाया जाता है।

स्टीरियो रिकार्डिंग करने से पहले यह देख लेना अच्छा होगा कि स्टीरियो टेप रिकार्डर के हैड ठीक लगे हैं, कहीं वे थोड़ा घूम तो नहीं गए। हम जानते हैं कि प्रत्येक हैड में बारीक रिक्त स्थान होता है। जब टेप चलाया जाता है तो दोनों हैडों के रिक्त स्थान टेप के ठीक लम्बवत् होने आवश्यक हैं। यदि ऐसा न हुआ तो टेप पर तिरछी लकीरें बनती हैं। संरेखण की इस त्रुटि के कारण यह संभव है कि किसी सही अंकित टेप को बजाने पर दायें बायें संकेत एक दूसरे के विपरीत निकलें। स्पष्ट है

कि तब सही स्टीरियो प्रभाव नहीं मिलेगा। टेप की चाल जितनी तेज होगी, इस त्रुटि की वजह से दोष कम होगा। इस कारण भी तेज चाल से चलने वाले टेप रिकार्डर अच्छे समझे जाते हैं।

टेप रिकार्डर का सबसे बड़ा लाभ यह है कि हम मन चाहा कार्यक्रम स्वयं अंकित कर सकते हैं। यह सुविधा ग्रामोफोन में उपलब्ध नहीं है क्योंकि ग्रामोफोन रिकार्ड बनाना आसान काम नहीं। ग्रामोफोन रिकार्ड बड़ी-बड़ी कम्पनियां बनाती हैं। लेकिन इन रिकार्डों को बनाने से पहले टेप पर कार्यक्रम अंकित किया जाता है, फिर सुविधानुसार इस अंकित टेप को बजाकर ग्रामोफोन रिकार्ड बनाया जाता है। टेप पर स्टीरियो कार्यक्रम अंकित करने के लिए दो माइक्रोफोनों का उपयोग किया जाता है। किसी भी माध्यम पर अंकित स्टीरियो ध्वनि को सुनने के लिए दो एम्प्लीफायर व दो स्पीकर लगाना भी आवश्यक है। इसलिए माइक्रोफोन, एम्प्लीफायर और स्पीकर आदि के बारे में जानना बहुत आवश्यक है।

7. माइक, एम्प्लीफायर और स्पीकर

तरह-तरह के माइक्रोफोन

मानिए कि हमें पेड़ पर चहकती किसी चिड़िया की आवाज अंकित करनी है। यदि उस पेड़ के आस-पास जिस पर चिड़िया बैठी है बड़ी चहल-पहल है, मोटर गाड़ियों का शोर है तब क्या किया जाए? ऐसी परिस्थिति में यदि हम सामान्य माइक्रोफोन का उपयोग करें तो सभी तरह की आवाजें अंकित हो जाएंगी और इस शोर गुल में चिड़िया की आवाज खो जाएगी। लेकिन यदि हम ऐसा माइक्रोफोन पा सकें जो केवल ऊपर से नीचे आने वाली आवाजें पकड़े व बाकी दिशाओं की नहीं तो चिड़िया की आवाज का बढ़िया अंकन होगा। इस हेतु हमें दिशा संवेदी माइक्रोफोनों की आवश्यकता पड़ती है। लेकिन अनेक अवसरों पर हमें सभी दिशाओं से आने वाली आवाजों को पकड़ने की आवश्यकता होती है। स्पष्ट है कि आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए माइक्रोफोन का चुनाव करना होगा। माइक्रोफोन को बोलचाल की भाषा में माइक भी कहा जाता है।

माइक्रोफोन कई किस्म के होते हैं। साधारण काम के लिए क्रिस्टल माइक्रोफोन का उपयोग किया जाता है। यह दाब-विद्युत के सिद्धांत पर कार्य करता है। जैसाकि पहले बतलाया गया है, प्रकृति में कुछ ऐसे क्रिस्टल मिलते हैं जिन्हें दाबने या मोड़नेपर विद्युत वोल्टता पैदा हो जाती है। क्रिस्टल माइक्रोफोन में ऐसे ही क्रिस्टल का उपयोग किया जाता है। इसमें एक डायाफ्राम होता है जिसका संबंध दाब-विद्युत क्रिस्टल की पट्टी
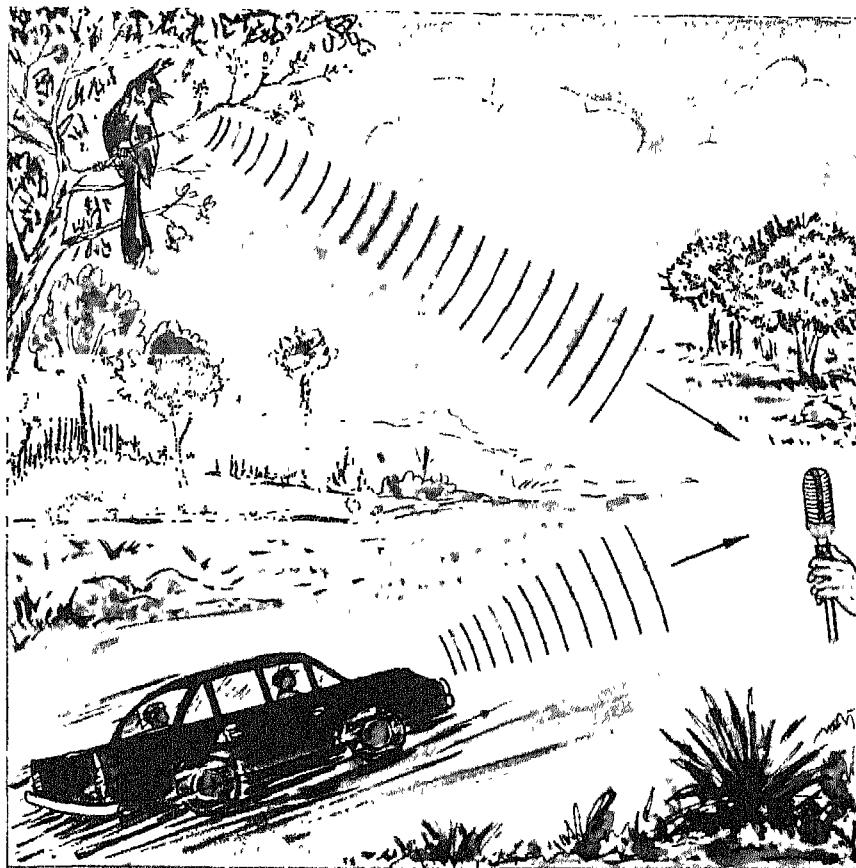
चित्र 38 दिशा सबदी माइक्रोफोन की आवश्यकता

से होता है। ध्वनि पड़ने पर डायाफ्राम कंपन करने लगता है, फलस्वरूप दाब-विद्युत पदार्थ की पट्टी पर वैसा ही दाब पड़ता है और ध्वनि के अनुरूप वोल्टता पैदा हो जाती है। क्रिस्टल माइक्रोफोन कम कीमत पर

मिल जाते हैं। परिवर्ती दाब पर आधारित होने के कारण यह किसी विशेष दिशा की ध्वनि नहीं पकड़ते हैं। इसकारण स्टीरियो रिकार्डिंग में इनका उपयोग प्रायः कम ही किया जाता है।
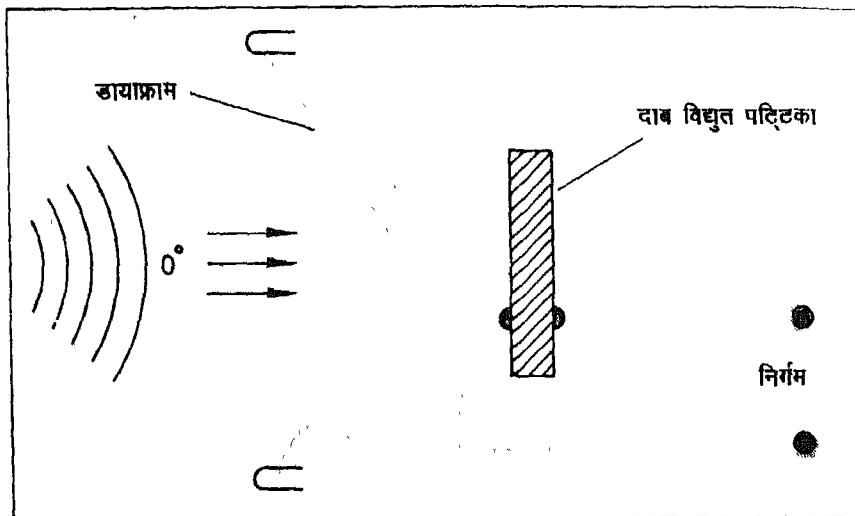
चित्र 39 क्रिस्टल माइक्रोफोन

गैर स्टीरियो रिकार्डिंग के लिए कदाचित सबसे बढ़िया माइक्रोफोन है कंडेन्सर माइक्रोफोन। यह काफी महंगा होता है। रेडियो स्टूडियो में ऐसे ही माइक्रोफोनों का उपयोग किया जाता है। इस माइक्रोफोन में एक कंडेन्सर होता है। हम सभी जानते हैं कि कन्डेन्सर ऐसा पात्र होता है जिसमें विद्युत आवेश एकत्र किया जाता है। विद्युत आवेश के कारण कन्डेन्सर की प्लेट व डायाफ्राम के बीच वोल्टता पैदा हो जाती है। ध्वनि आने पर डायाफ्राम कंपन करता है, फलस्वरूप कन्डेन्सर की एक प्लेट

भी कंपन करने लगती है। इस कन्डेन्सर को एक सर्किट के साथ जोड़ा जाता है। ध्वनि आने पर कन्डेन्सर प्लेटों के बीच कम अधिक दूरी होने की वजह से सर्किट के किसी भाग में विद्युत वोल्टता भी उसीप्रकार बदलती है। इसप्रकार ध्वनि के अनुरूप वोल्टता मिल जाती है।

चित्र 40 कन्डेन्सर माइक्रोफोन

कन्डेन्सर माइक्रोफोन चलाने के लिए सर्किट में बाहर से बैटरी लगाना आवश्यक है। यद्यपि कन्डेन्सर माइक्रोफोन तकनीकी दृष्टि से बढ़िया होते हैं, लेकिन यह भी सभी दिशाओं से ध्वनि पकड़ते हैं। इसकारण इनका उपयोग भी स्टीरियो अंकन में प्रायः नहीं होता है।
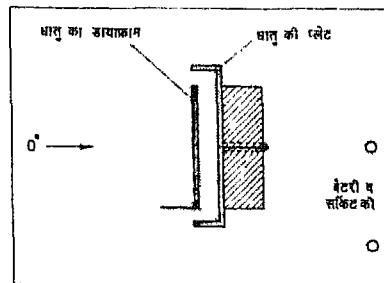
साधारण काम के लिए चल-कुंडली माइक्रोफोन का उपयोग किया जाता है क्योंकि यह काफी मजबूत होता है और दूसरे माइक्रो-फोनों की तरह नाजुक नहीं। इसकी रचना स्पीकर जैसी ही होती है। इसमें एक शक्तिशाली चुंबक के दोनों ध्रुवों के बीच एक कुंडली सधी होती है जिसका संबंध डायाफ्राम से होता है। ध्वनि आने पर डायाफ्राम कंपन
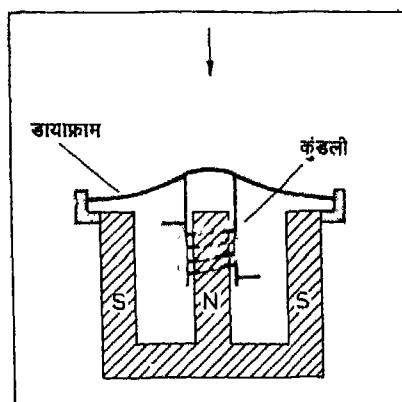
चित्र 41 चल-कुंडली माइक्रोफोन

करता है। डायाफ्राम के कंपन करने पर ध्रुवों के बीच सधी कुंडली भी कंपन करने लगती है। फलस्वरूप कुंडली में ध्वनि के अनुरूप वोल्टता प्रेरित हो जाती है। चल कुंडली माइक्रोफोन निम्न आवृत्ति की ध्वनि तो सभी दिशाओं से पकड़ते हैं लेकिन उच्च आवृत्ति की ध्वनि के लिए वे दिशा संवेदी होते हैं। सामने से आती ध्वनि को वे अधिक पकड़ते हैं। ये माइक्रोफोन मजबूत होते हैं और अन्य माइक्रोफोनों की तुलना में अधिक वोल्टता देते हैं इसलिए इनका उपयोग खूब किया जाता है।

निश्चित दिशा से ध्वनि पकड़ने वाले माइक्रोफोनों में सबसे अच्छा माइक्रोफोन है रिबन माइक्रोफोन। इसमें चुंबक के दो ध्रुवों के बीच धातु का एक पतला रिबन लटका होता है। टीन की चादरों की तरह रिबन को भी लहरिएदार बनाया जाता है। ध्वनि आने पर रिबन कंपन करने लगता है, फलस्वरूप उसके दोनों सिरों के बीच वोल्टता पैदा हो जाती है। अन्य माइक्रोफोनों की तुलना में यह माइक्रोफोन बहुत नाजुक होता है और इसमें काफी कम वोल्टता पैदा होती है। इस माइक्रोफोन में ध्वनि रिबन के दोनों ओर से पहुंचती है, इसकारण रिबन का कंपन उसके आगे व पीछे के ध्वनि दाबों के अन्तर पर निर्भर करता है। रिबन माइक्रो–फोन रिबन के ठीक सामने या पीछे से आने वाली ध्वनि के लिए बहुत संवेदी है तथा समानान्तर आने वाली ध्वनि के लिए लगभग बहरा है—इसलिए
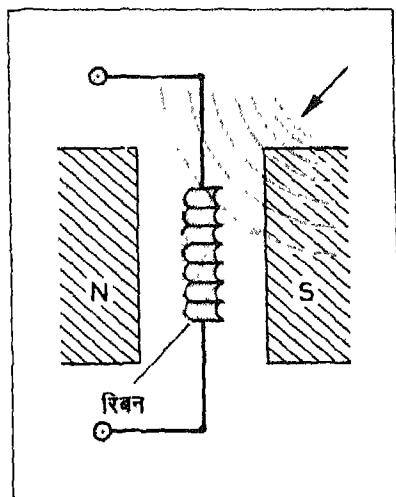
चित्र 42 रिबन माइक्रोफोन

इसे अंग्रेजी के आठ (8) अंक वाला माइक्रोफोन भी कहा जाता है। स्पष्ट है कि स्टीरियो अंकन के लिए रिबन माइक्रोफोन सबसे अच्छा है।

एक अच्छे माइक्रोफोन का चुनाव करने के लिए कई बातों का देखना जरूरी है। सबसे महत्व की बात तो यह है कि क्या माइक्रोफोन श्रवण परास की सभी आवृत्तियों को समान रूप से सुनता है अथवा वह किन्हीं आवृत्तियों के साथ भेदभाव करता है। यह जानकारी माइक्रोफोन के अनुक्रिया (रिस्पोन्स) ग्राफ देखकर मिल जाती है। यह जानना भी बहुत आवश्यक है कि माइक्रोफोन कितना संवेदी है, उसमें कितना शोर और उससे कितना निर्गम वोल्टता मिलती है। क्योंकि माइक्रोफोन को प्रीएम्प्लीफायर से जोड़ना होता है, अतः यह देखना भी उचित होगा कि माइक्रोफोन हमारे प्रीएम्प्लीफायर के साथ मेल खाएगा या नहीं। माइक्रोफोन को दिशा ज्ञान कितना है यह बात चित्र देखकर दिखलाई जाती है। इस दृष्टि में बाजार में मिलने वाले माइक्रोफोन तीन तरह के होते हैं–सभी दिशाओं के लिए उपयुक्त, केवल सामने की ध्वनि पकड़ने वाले और सामने व पीछे की ध्वनि पकड़ने वाले। निम्न आवृत्तियों के लिए चल-कुंडली माइक्रोफोन दिशा संवेदी नहीं होता अर्थात् वह सभी दिशाओं की आवाजें समान रूप से पकड़ता है। (चित्र क)। रिबन माइक्रोफोन सामने व पीछे की आवाजों के लिए संवेदी होता है (चित्र ख)। कुछ माइक्रोफोन मुख्यतः सामने की आवाजें ही पकड़ते हैं (चित्र ग)। उच्च आवृत्तियों पर चल कुंडली माइक्रोफोन भी दिशा संवेदी हो जाता है और केवल सामने की आवाज पकड़ता है। माइक्रोफोन का चुनाव करते समय इन बातों के अतिरिक्त उसकी कीमत पर भी ध्यान देना चाहिए। साधारण कामों के लिए कम कीमत पर मिलने वाले क्रिस्टल माइक्रोफोनों का उपयोग किया जा सकता है, किन्तु क्रिस्टल माइक्रोफोनों के जोड़े से

स्टीरियो प्रभाव उतना स्पष्ट नहीं आता जितना रिबन माइक्रोफोन के जोड़े से।
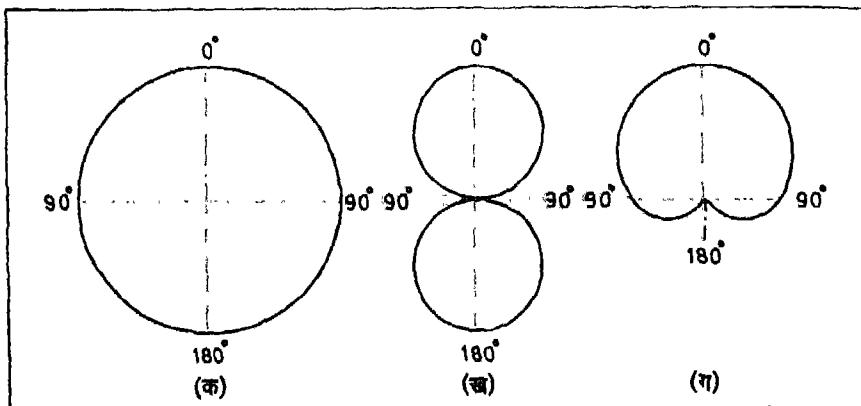
चित्र 43 माइक्रोफोनों की दिशा संवेदना : (क) सभी दिशाओं की आवाजें पकड़ने वाला (ख) सामने व पीछे के लिए संवेदी; (ग) मुख्यतः सामने की आवाज पकड़ने वाला

साधारण ध्वनि अंकन के समय एक माइक्रोफोन का उपयोग किया जाता है। इसे किसी स्टैंड पर लगा दिया जाता है और बोलने वाला माइक्रोफोन के पास आकर उसके सामने बोलता है। आवश्यकता पड़ने पर इस माइक्रोफोन को हाथ में लेकर वह इधर-उधर चल फिर भी सकता है। किन्तु स्टीरियो अंकन के समय यदि आप माइक्रोफोनों को इधर-उधर करें तो सारा काम बिगड़ जाएगा—तब यह पता ही नहीं लगेगा कि सुनने वाले के संदर्भ में बोलने वाला कहां है। इसलिए स्टीरियो अंकन के लिए माइक्रोफोनों को स्थिर स्टेंडों पर रखा जाता है। साधारण अंकन के लिए माइक्रोफोन को लगभग आधा मीटर दूरी या इससे पास रखा जाता है, लेकिन स्टीरियो अंकन के लिए ऐसा नहीं किया

जाता। इसका कारण यह है कि स्टीरियो की मदद से हम ठीक वैसे ही सुनते हैं जैसाकि तब सुनते जब हम माइक्रोफोनों के स्थान पर होते—और कोई व्यक्ति किसी कलाकार या वाद्य को इतने पास से सुनना पसंद नहीं करेगा।

एम्प्लीफायर के बारे में कुछ बातें

टेप रिकार्डर, रिकार्ड प्लेयर, रेडियो आदि विभिन्न युक्तियों के विद्युत संकेतों को विवर्धित करने के जो एम्प्लीफायर काम में लाया जाता है उसके दो भाग होते हैं—प्री-एम्प्लीफायर और पावर एम्प्लीफायर।

जैसाकि नाम से प्रगट है पावर एम्प्लीफायर द्वारा विद्युत संकेतों को शक्तिशाली बनाया जाता है। लेकिन टेप रिकार्डर या रिकार्ड प्लेयर को पावर एम्प्लीफायर के साथ सीधे ही नहीं जोड़ा जाता। उन्हें पहले प्री-एम्प्लीफायर से जोड़ा जाता है और फिर पावर एम्प्लीफायर से। इसका मुख्य कारण यह है कि टेप रिकार्डर या रिकार्ड प्लेयर से प्राप्त संकेतों में बहुत अन्तर होता है—इतने अधिक अन्तर के संकेतों को शक्तिशाली बनाना अकेले पावर एम्प्लीफायर के बस की बात नहीं—यदि वह रिकार्ड प्लेयर के लिए उपयुक्त है तो टेप रिकार्डर के नहीं। एक घर में जहां कभी रिकार्ड प्लेयर लगाया जाता है, कभी टेप रिकार्डर या कभी ट्यूनर (रेडियो) वहां प्रत्येक युक्ति के लिए अलग-अलग पावर एम्प्लीफायर लगाना न तो आवश्यक है और न ही कीमत की दृष्टि से उचित। रिकार्ड प्लेयर, टेप रिकार्डर और ट्यूनर आदि के संकेतों को वैद्युत दृष्टि से समान स्तर पर लाने के लिए प्री-एम्प्लीफायर का उपयोग किया जाता है। इसमें विभिन्न युक्तियों से प्राप्त संकेतों के लिए अलग-अलग सर्किट होते हैं। इन सर्किटों की

मदद से विभिन्न युक्तियों से प्राप्त संकेतों को ऐसे समान स्तर पर लाया जा सकता है जो पावर एम्प्लीफायर के लिए उचित हो। इसलिए अलग-अलग युक्तियों जैसे रिकार्ड प्लेयर, टेप रिकार्डर, ट्यूनर को प्री-एम्प्लीफायर से जोड़ने के लिए अलग-अलग टर्मिनलों का प्रबन्ध होता है।
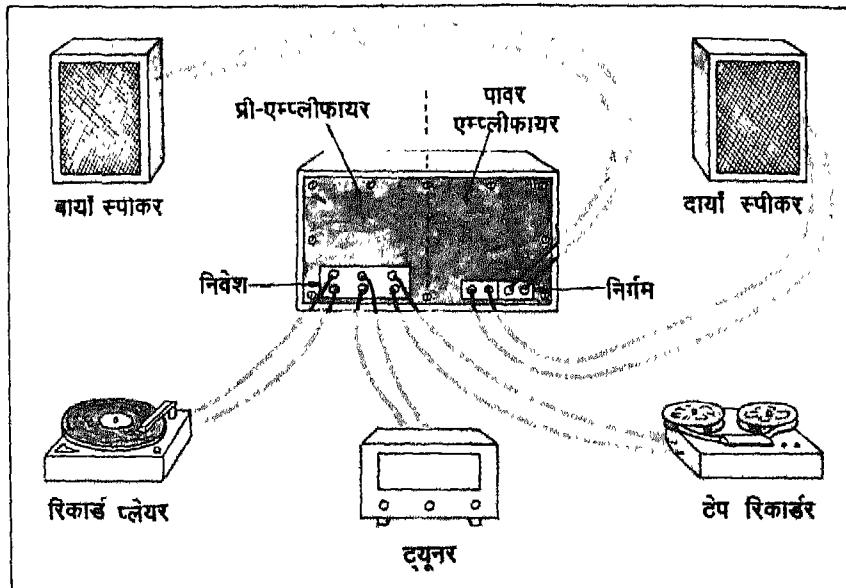
चित्र 44 प्री एम्प्लीफायर एवं पावर एम्प्लीफायर

प्री-एम्प्लीफायर के पेनल पर कई तरह के स्विच व नांव लगे होते हैं। स्विच चलाकर मनचाही युक्ति सुनी जा सकती है। नांव घुमाकर आवाज की प्रबलता या स्वर को नियन्त्रित किया जा सकता है।

प्री-एम्प्लीफायर से प्राप्त विद्युत संकेतों को प्रबल बनाने के लिए पावर एम्प्लीफायर का उपयोग किया जाता है। पावर एम्प्लीफायर की शक्ति वाट मात्रक में दी जाती है। यह सोचना गलत है कि 60 वाट वाले एम्प्लीफायर से 30 वाट वाले एम्प्लीफायर की तुलना में दुगने जोर की आवाज सुनाई देगी। इसका कारण हमारे कान की वह विशेषता है जिसकी वजह से ध्वनि स्तर को प्रगट करने के लिए डेसीबेल नामक मात्रक प्रचलित हुआ। उतनी ही जोर की आवाज पाने के लिए अधिक वाट वाले एम्प्लीफायर से कम विकृति होने की संभावना रहती है। इसलिए एम्प्लीफायर को पूरी शक्ति पर नहीं चलाया जाता। यदि एम्प्लीफायर को पूरी शक्ति पर चलाएं तो उस समय क्या होगा जब आवाज में सहसा क्षणिक बढ़ोत्तरी हो? तब आवाज फटने लगेगी। सही उतार-चढ़ाव तो संगीत की जान हैं। यदि इन्हीं क्षणों पर आवाज में विकृति आ जाए तो संगीत की मधुरता छिन जाएगी। अधिक शक्ति वाले एम्प्लीफायर को पूरी शक्ति पर न चलाने पर वह सभी चरम अवस्थाओं में पूरी निष्ठा के साथ काम करेगा और हमें साफ व मधुर ध्वनि सुनाई देगी। एक साधारण कमरे में 20 वाट प्रति चैनल (अर्थात् स्टीरियो के लिए कुल 40 वाट) शक्ति काफी होती है। यहां पर बतलाना उचित होगा कि जबकि गैर-स्टीरियो कार्यक्रम को अधिक जोर से सुनने में सर-दर्द हो जाता है लेकिन स्टीरियो कार्यक्रम को काफी जोर से सुना जा सकता है।

एक अच्छे एम्प्लीफायर को दिए गए संकेतों को पूरी निष्ठा के साथ विवर्धित करना चाहिए। लेकिन होता ऐसा नहीं है। अनेक कारणों से संकेत विकृत हो जाते हैं। यदि एम्प्लीफायर अधिक विकृति उत्पन्न करता है तो आवाज बदली हुई लगती है। यद्यपि मामूली विकृति को पहचानना मुश्किल है लेकिन ऐसी दशा में थोड़ी देर में ही सुनने वाले
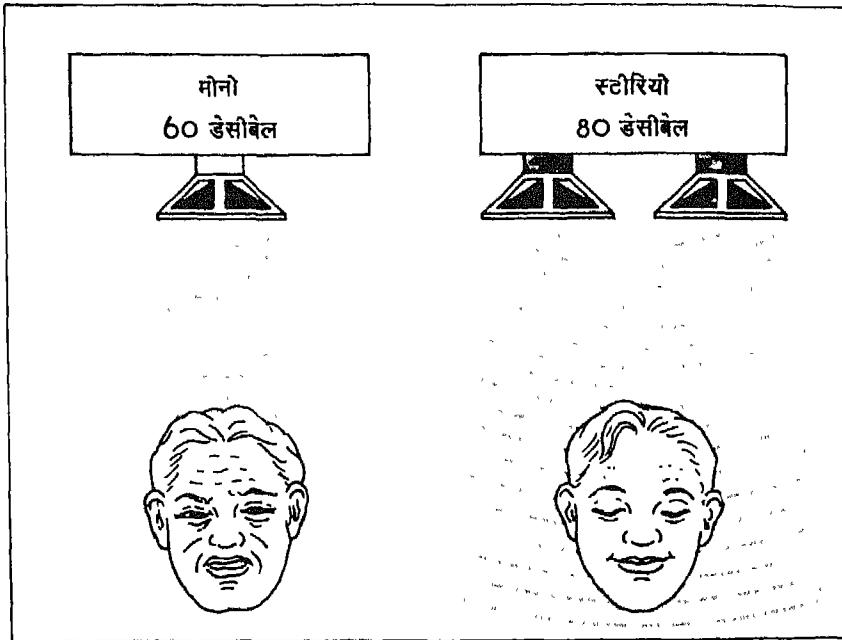
चित्र 45 गैर स्टीरियो कार्यक्रम अधिक जोर से सुनने पर सिर दर्द हो जाता है लेकिन स्टीरियो कार्यक्रम काफी जोर से सुना जा सकता है।

को थकान आ जाती है। एम्प्लीफायर कई तरह से विकृति उत्पन्न करता है। किसी भी एम्प्लीफायर से यह आम शिकायत होती है कि वह सभी आवृत्तियों को समान रूप से विवर्धित नहीं करता। दूसरे शब्दों में उसका आवृत्ति-अनुक्रिया वक्र सपाट नहीं होता। यद्यपि ऐसा वक्र पूर्ण रूप से सपाट पाना बड़ा मुश्किल है पर फिर भी 20-20000 हर्ट्ज के बीच त्रुटि ± 1 डेसीबेल से अधिक नहीं होनी चाहिए। एम्प्लीफायर को अपनी ओर
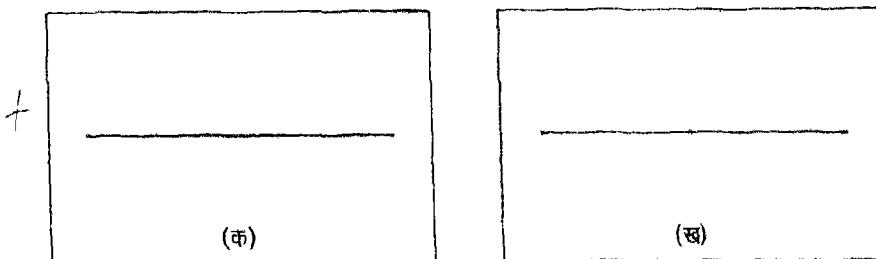
चित्र 46 कैथोड किरण ऑसिलोस्कोप से एम्प्लीफायर द्वारा उत्पन्न विकृति की जाँच।
(क) निवेशी तरंग रूप (ख) निर्गत तरंग रूप

से कोई नई आवृत्तियां नहीं जोडनी चाहिए। उसमें भुनभुनाहट और शोर भी कम होना चाहिए।

किसी भी वाद्य को बजाने पर प्रारंभिक कुछ क्षणों में एक विशिष्ट प्रकार की ऐसी ध्वनि निकलती है जिसे सुनकर हमें यह पता लग जाता है कि हम कौनसा वाद्य सुन रहे हैं। प्रारंभिक कुछ क्षणो में ध्वनि तेजी से उतरती चढ़ती है, लेकिन बाद में ध्वनि का ऐसा तेजी से उतार-चढ़ाव
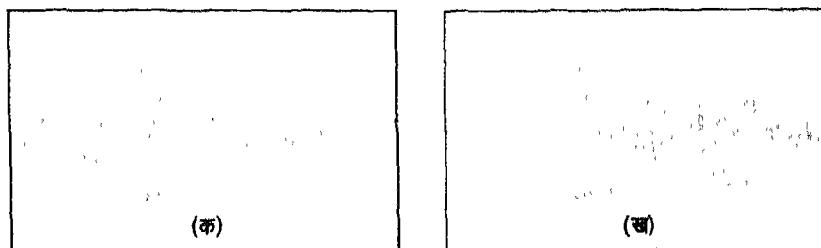
चित्र 47 कैथोड किरण ऑसिलोस्कोप द्वारा एम्प्लीफायर की क्षणिकाओं सम्बन्धी जाँच।
(क) बढ़िया एम्प्लीफायर (ख) घटिया एम्प्लीफायर

नहीं होता। प्रारंभ की ये क्षणिकाएं एम्प्लीफायर के लिए समस्या खड़ी कर देती हैं। यदि एम्प्लीफायर शीघ्रता से उतरती-चढ़ती ध्वनियों को न संभाल सका तो बात बिगड़ जाती है। सारा ऑक्रेस्ट्रा नीरस लगने लगता है। संक्षेप में, एम्प्लीफायर की क्षणिक अनुक्रिया भी जानना आवश्यक है। इसे प्रदर्शित करने के लिए एम्प्लीफायर को वर्गाकार या आयताकार संकेत दिया जाता है और निर्गम टर्मिनलों को कैथोड किरण ऑसिलोस्कोप नामक विशेष यंत्र के साथ जोड़ दिया जाता है। इस यंत्र में टेलीविजन जैसी स्क्रीन होती है जिसपर निर्गित संकेतों का चित्र आ जाता है। आयताकार संकेत की खड़ी भुजा वास्तव में किसी क्षणिका की अधिकतम तीखी स्थिति को प्रदर्शित करती है। इसलिए यदि आयताकार संकेत में अधिक विकृति न उत्पन्न हो तो एम्प्लीफायर को इस दृष्टि से अच्छा समझना चाहिए। क्षणिकाओं सम्बन्धी समस्याओं से निपटने का एक सरल उपाय यह है कि एम्प्लीफायर के आवृत्ति-अनुक्रिया वक्र को दूर-दूर तक सपाट रखा जाए। तब ही तो बहुत अच्छे किस्म के एम्प्लीफायर में 20 हर्ट्ज से नीचे व 20000 हर्ट्ज से ऊपर की आवृत्तियों का भी ध्यान रखा जाता है। बहुत बढ़िया एम्प्लीफायर 5 से 100000 हर्ट्ज तक सपाट वक्र देता है।

स्पीकर कैसे लगाएं

स्पीकर का चुनाव कैसे करें और उन्हें किसप्रकार लगाएं, इस बारे में कुछ भी कहने से पहले यह जानना बहुत आवश्यक है कि कोई स्पीकर काम कैसे करता है।

साधारण स्पीकर का सिद्धांत वैद्युत चुंबकीय क्रिया पर आधारित है। जैसा कि पहले बतलाया जा चुका है, जब कभी चुंबकीय क्षेत्र में रखे किसी तार में विद्युत धारा भेजी जाती है तो वह तार स्वयं एक चुंबक जैसा आचरण करने लगता है और उसपर कुछ बल लगने लगता है। स्पष्ट है कि धारा जितनी प्रबल होगी, यह बल उतना ही अधिक होगा। जहां तक इस तार पर लगने वाले बल की दिशा का सवाल है, वहां यह बतलाना काफी होगा कि यह बल चालक के लम्ब रूप तो होता ही, साथ ही वह चुंबकीय बल रेखाओं के लम्ब रूप भी होता है।

स्पीकर के अन्दर चुंबकीय क्षेत्र उत्पन्न करने के लिए विशेष
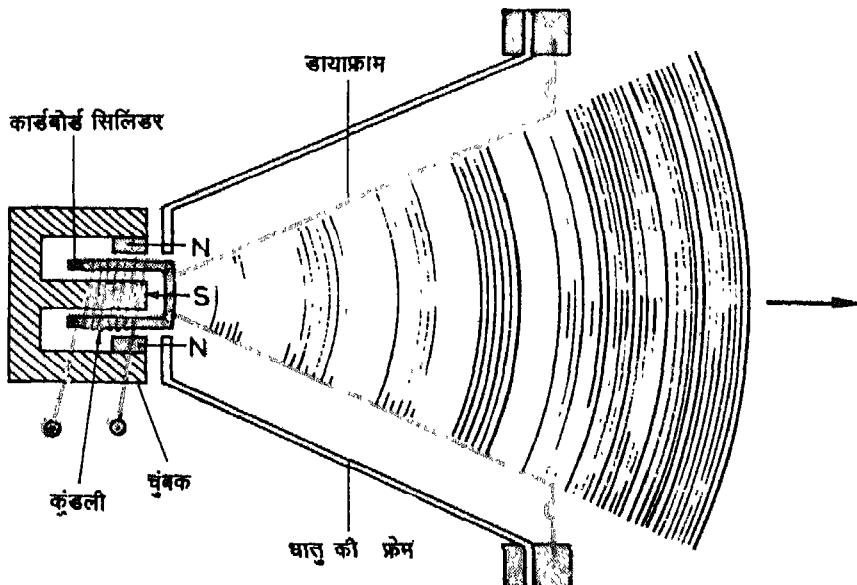
चित्र 48 स्पीकर

शक्ल का चुंबक होता है और इस चुंबकीय क्षेत्र में कार्ड बोर्ड के सिलिंडर पर लिपटे तार की एक कुंडली सधी होती है। जब स्पीकर की कुंडली में ध्वनि के अनुरूप धारा भेजी जाती है तो यह कुंडली आगे पीछे कंपन करने लगती है। स्पीकर की यह कुंडली मोटे कागज के एक शंक्वाकार डायाफ्राम से चिपकी होती है। कुंडली के कंपन की वजह से कागज का शंक्वाकार डायाफ्राम भी कंपन करने लगता है, फलस्वरूप हवा में ध्वनि तरंगें उत्पन्न हो जाती हैं।

साधारण किस्म के स्पीकर का एक बड़ा दोष यह है कि यह निम्न आवृत्तियों की ध्वनियों का पुनरुत्पादन ठीक नहीं करता। यह दिक्कत इसलिए आती है क्योंकि जब कागज का डायाफ्राम कंपन करता है तब वह आगे व पीछे—दोनों ओर हवा के दाब में परिवर्तन करता है। जब कागज का डायाफ्राम आगे की ओर बढ़कर सामने संपीडन उत्पन्न करता है तो पीछे की ओर विरलन उत्पन्न हो जाता है। जब कंपन की आवृत्ति निम्न होती है तो आगे की संपीडित हवा को इतना समय मिल जाता है कि वह पीछे की ओर जाकर वहां उत्पन्न हुए विरलन को समाप्त कर दे। यदि ऐसा हुआ तो शंक्वाकार डायाफ्राम के न तो आगे और न ही पीछे जोरदार परिवर्तन हो पाता है, फलस्वरूप निम्न आवृत्ति की ध्वनि काफीमंद सुनाई देती है। लेकिन उच्च आवृत्ति के समय शंक्वाकार डायाफ्राम इतनी जल्दी अपना कंपन पूरा करता है कि इतने थोड़े समय में संपीडित क्षेत्र की हवा को विरलित क्षेत्र तक पहुंचकर उसे नष्ट करने का समय ही नहीं मिलता। ऐसी दशा में कागज के डायाफ्राम के आगे उच्च आवृत्ति की ध्वनि को सुना जा सकता है।

आगे की ओर उत्पन्न संपीडन पीछे की ओर उत्पन्न विरलन को नष्ट न कर पाएं इसके लिए एक सरल उपाय है। यदि स्पीकर को बड़ी व मोटी पट्टिका पर लगा दिया तो आगे व पीछे की हवा एक दूसरे से नहीं

मिल पाएगी। 50 हर्ट्ज की आवाज का ठीक पुनरुत्पादन करने के लिए इस पट्टिका का साइज लगभग 1 मीटर × 1 मीटर होना चाहिए। मोटी लकड़ी की इस पट्टिका को व्यारोधक पट्टिका या बेफल बोर्ड कहते हैं।

साधारण व्यारोधक पट्टिका की अपेक्षा सही डिजाइन के डिब्बे में स्पीकर लगाना अधिक प्रचलित है। इस डिब्बे में ऊपर की ओर स्पीकर लगाने के लिए जगह कटी होती है और नीचे की ओर एक द्वार या पोर्ट खुला होता है। प्रयोगों द्वारा इस द्वार का साइज व दूरी तय की जाती है। द्वार कटे इस डिब्बे को प्रतिवर्ती रोधक कहा जाता है। इस तरह की व्यवस्था से निम्न आवृत्ति की ध्वनि भी ठीक सुनाई देती है।

चित्र 49 (क) व्यारोधक पट्टिका।
(ख) द्वार युक्त व्यारोधक।

साधारतया निम्न आवृत्तियों के लिए विशेष साइज के डिब्बों से काम चल जाता है, लेकिन बहुत उच्च व बहुत निम्न आवृत्तियों के लिए डिब्बे में विशेष प्रकार के स्पीकर लगाने आवश्यक हैं। इन्हें क्रमशः ट्वीटर और वूफेर कहते हैं।

ट्वीटर बहुत छोटे साइज का स्पीकर होता है। इसे बहुत उच्च आवृत्ति की ध्वनि को ठीक प्रकार से पुनरुत्पादित करने के लिए लगाते हैं। हम जानते हैं कि उच्च आवृत्तियों की ध्वनि चारों ओर फैलती नहीं वरन् टार्च के प्रकाश की तरह स्पीकर के आगे सुनाई देती है। उच्च आवृत्ति की ध्वनि को चारों ओर फैलाने के लिए ट्वीटर में तरह तरह के प्रबन्ध किए जाते हैं। ट्वीटर को डिब्बे के ऊपर एक ओर लगाना अच्छा होता है।

संगीत में निम्न आवृत्तियों का बहुत महत्व है। लेकिन साधारण स्पीकर निम्न आवृत्तियों की ध्वनि मुश्किल से दे पाते हैं। यद्यपि 40 हर्ट्ज के नीचे की आवृत्तियों की ध्वनि बहुत कम वाद्य उत्पन्न कर पाते हैं तो भी यदि हमारा स्पीकर इससे नीचे की आवृत्तियों की ध्वनि दे सके तो संगीत में कुछ भारीपन आ जाता है। निम्न आवृत्ति की ध्वनि ठीक प्रकार से पुनरुत्पादित करने के लिए जो विशेष स्पीकर काम में लाए जाते हैं उन्हें वूफर कहते हैं। ये बड़े साइज के होते हैं। इन्हें डिब्बे में नीचे की ओर, ठीक बीच में लगाया जाता है।

चित्र 50 ट्यूटर, वूफर आदि लगाना

इसप्रकार स्पीकर के डिब्बे में तीन तरह के स्पीकर होते हैं–साधारण स्पीकर, ट्वीटर और वूफेर। आजकल कुछ दोहरे डायाफ्राम वाले स्पीकर भी मिलने लगे हैं जो उच्च से निम्न आवृत्तियों
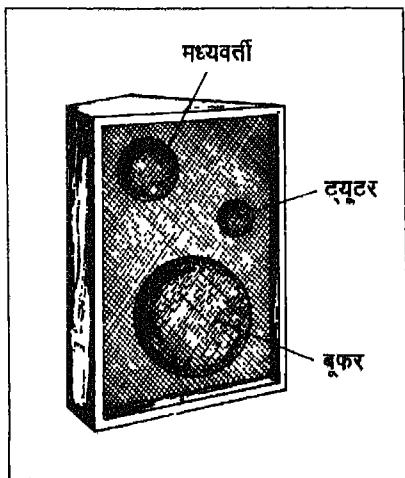
तक की पूरी परास में ठीक कार्य करते हैं। सभी स्पीकर एक ही वाट अथवा ओम के नहीं होते। एम्प्लीफायर कितनी शक्ति देता है और उसके साथ कितने ओम का स्पीकर लग सकता है, इन बातों को जानकर स्पीकर का चुनाव किया जाता है। लेकिन उतने ही वाट और ओम के सभी स्पीकर एक जैसी आवाज नहीं देते। कुछ स्पीकर भारी आवाज देते हैं तो कुछ तीखी। किस व्यक्ति को कौन सा स्पीकर पसंद आएगा यह उसकी व्यक्तिगत बात है। इसलिए स्पीकर को यंत्रों द्वारा जांचने का अधिक प्रचलन नहीं हैं। सही वाट और ओम के अनेक स्पीकरों में से सही स्पीकर चुनने का सबसे अच्छा तरीका यह है कि किसी बहुत बढ़िया रिकार्ड प्लेयर से कोई अच्छा-सा रिकार्ड बजाया जाए और स्पीकर से आने वाली आवाज को सावधानी से सुना जाए। यह बतलाना उचित होगा कि वास्तविकता से अधिक भारीपन या तीखेपन देने वाले स्पीकर को सही नहीं कहा जा सकता। कुछ ही दिनों में सुनने वाला ऐसी कृत्रिम ध्वनि से ऊब जाता है।

स्टीरियो ध्वनि पाने के लिए दो स्पीकर लगाने आवश्यक हैं। इन दोनों स्पीकरों को अपने अपने एम्प्लीफायरों से इसप्रकार जोड़ना चाहिए कि वे दोनों एक साथ हवा को दाबें या खींचें। यदि ऐसा नहीं है तो जब एक स्पीकर संपीडन देगा तो उसी समय दूसरा विरलन उत्पन्न करेगा, फलस्वरूप उनके बीच बैठे व्यक्ति को मंद ध्वनि सुनाई देगी। यह देखने के लिए कि क्या स्पीकर ठीक ढ़ंग से जुड़े हैं, रिकार्ड प्लेयर पर कोई साधारण रिकार्ड बजानी चाहिए। इन दोनों स्पीकरों के ठीक बीच बैठ कर इस रिकार्ड को सावधानी से सुनना चाहिए। फिर एक स्पीकर के कनेक्शन बदल देने चाहिए। ऐसा करने में यदि अच्छी व तेज आवाज सुनाई दे तो यह समझ लेना चाहिए कि अब दोनों स्पीकर ठीक ढ़ंग से

जुड़े हैं। किसी एक स्पीकर के कनेक्शन उलटने के लिए एम्प्लीफायर में एक स्विच भी रहता है जिसे कला-स्विच या फेज स्विच कहते हैं।
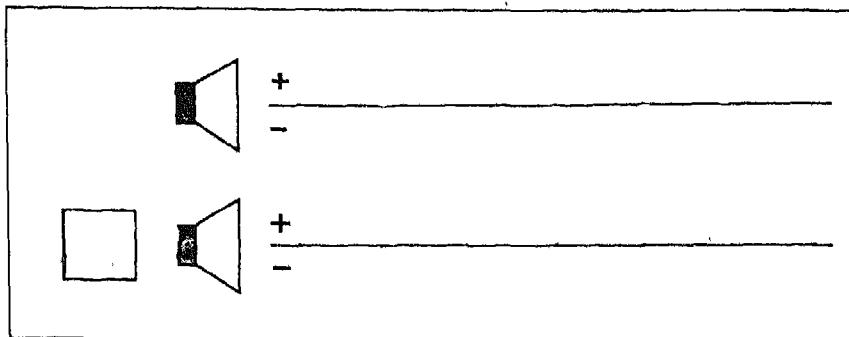
गलत तरीका
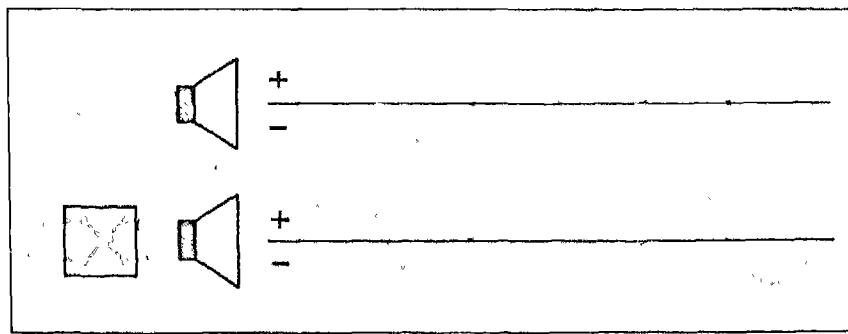
सही तरीका

चित्र 51 दोनों स्पीकरों को समान कला (फेज) में होना आवश्यक है

स्टीरियो व्यवस्था में ऐसा प्रबन्ध होना चाहिए कि दोनों चैनलों से लगभग उतनी ही शक्ति की ध्वनि आए। इस हेतु दोनों एम्प्लीफायरों के

ध्वनि नियन्त्रक इसप्रकार समंजित करने चाहिए कि स्टीरियो प्रभाव ठीक ठीक मिले।

अच्छा स्टीरियो प्रभाव लाने के लिए दोनों स्पीकरों के बीच दूरी कितनी रखनी चाहिए, यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है। स्पष्ट है कि दोनों स्पीकरों को इसप्रकार रखना चाहिए कि ध्वनि न तो बायें स्पीकर से आती लगे और न ही दायें स्पीकर से, वरन् वह इन दोनों के बीच की सारी जगह से आती लगे। यदि ऐसा न हुआ तो स्टीरियो प्रभाव कृत्रिम लगता है। उदाहरणार्थ यदि हम ऐसी रिकार्ड सुन रहे हैं जिसमें कोई कलाकार गीत गाता हुआ मंच के बायें सिरे से दायें सिरे की ओर जा रहा है। ऐसी दशा में आवश्यक है कि सुनने वाले को भी ऐसा लगे कि आवाज बायें स्पीकर से निकल कर धीरे धीरे स्पीकरों के बीच के स्थान से होकर फिर दायें स्पीकर से आ रही है। यदि कलाकार तेजी से चलता है और फिर आवाज सहसा एक स्पीकर से निकलकर दूसरे स्पीकर से आती लगे तो आवाज सतत नहीं रहती वरन् बीच में टूट जाती है। ऐसी आवाज कृत्रिम लगती है। जब ऐसी परिस्थिति आ जाती है तो कहा यह जाता है हमारी स्टीरियो व्यवस्था मध्य में खोखलेपन जैसे प्रभाव से ग्रसित है। मध्य में खोखलेपन वाला प्रभाव (होल इन मिडिल) मिटाने के लिए दोनों स्पीकरों के बीच की दूरी को आवश्यकतानुसार कम अधिक करनी चाहिए।

जिस कमरे में आप स्टीरियो रिकार्ड या टेप सुन रहे हैं उस कमरे के साइज और उसमें लटके परदे व खिड़कियों का भी प्रभाव पड़ता है। कमरे की दीवारों से ध्वनि तरंगें लौटकर वापस आती हैं। इधर-उधर की दीवारों से बार-बार टकरा कर लौटने पर कोई भी ध्वनि काफी देर तक बाकी रहती है। ऐसा होने से आवाज स्पष्ट नहीं रहती। लेकिन संगीत में इसप्रकार धीरे-धीरे मंद पड़ती ध्वनि का बड़ा मधुर प्रभाव पड़ता है।

ध्वनि किसी सीमा से दस लाख गुना कम होने में कितना समय लेती है, यह बात बहुत महत्व की है। वैज्ञानिक इतने समय को अनुरणन काल या रिवरबरेशन काल कहते हैं। संगीत का मजा लेने के लिए कमरे का अनुरणन काल अधिक होना चाहिए लेकिन किसी वार्तालाप सुनने के लिए कम। इस कारण कमरे के अनुरणन काल को समंजित करना होता है। कमरे में परदे लटकाने या कालीन बिछाने से ध्वनि जल्द समाप्त हो जाती है और अनुरणन काल कम हो जाता है। यद्यपि सिनेमा घरों और बड़े-बड़े सभागृहों में इन बातों पर ध्यान देना बहुत आवश्यक है लेकिन घरेलू स्टीरियो के लिए इन बातों पर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता नहीं।
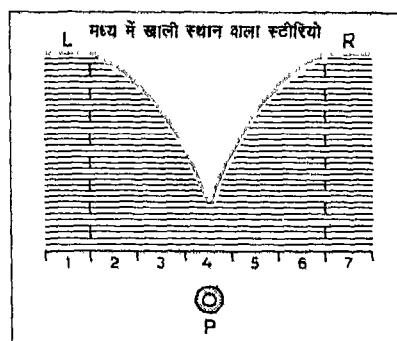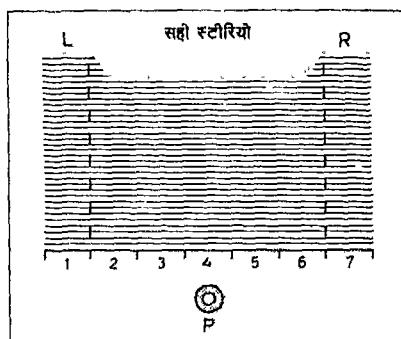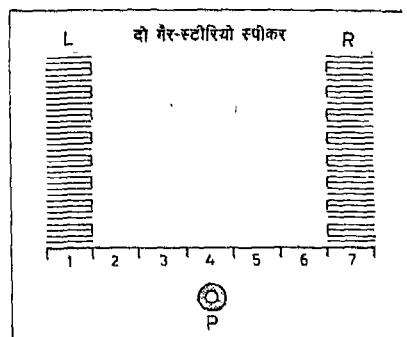
चित्र 52 स्टीरियो व्यवस्था के मध्य में खोखलेपन का प्रभाव

8. नई खोजें, नई बातें

नकली स्टीरियो

क्या साधारण टेप या रिकार्ड से स्टीरियो टेप या रिकार्ड बनाया जा सकता है? इस सवाल पर विचार करने से पहले हमें यह जानना बहुत जरूरी है कि हम अपने दोनों कानों से जो कुछ सुनते हैं, क्या वह बिल्कुल एक जैसा होता है। नहीं, दोनों कानों से सुनी गई आवाजों में थोड़ा फर्क जरूर होता है। अक्सर एक कान पर आवाज तनिक पहले पहुंचती है व दूसरे कान पर तनिक देर से। स्टीरियो अंकन करते समय जब दो माइक्रोफोन लगाए जाते हैं तो वे भी दो कानों की तरह एक साथ एक जैसी आवाजें नहीं पकड़ते। समय के इस अन्तर की वजह से ही स्टीरियो में हमें गहराई और ध्वनिक आकाश का अनुभव होता है। आवाजें ऐसी लगती हैं कि मानों वहीं पैदा हो रही हों।

साधारण रिकार्ड बजाने पर जो आवाज पैदा होती है यदि वह हमारे एक कान तक तनिक पहले पहुंचे व दूसरे कान तक तनिक बाद में तो हमें स्टीरियो जैसा अनुभव होगा। इसके लिए एक सरल उपाय यह है कि हम स्टेथोस्कोप जैसी रबर की नली लें और उसके एक ओर की नली की लम्बाई बढ़ा लें। तब हमारे एक कान तक आवाज छोटे मार्ग से पहुंचेगी और दूसरे कान तक लम्बे मार्ग से। इसलिए गैर स्टीरियो रिकार्ड सुनने पर भी स्टीरियो जैसा मजा आएगा।

रबर की छोटी-बड़ी नलियें लगाकर जो प्रभाव मिलता है उसे पाने के लिए अब तरह-तरह के सर्किट भी बनाए गए हैं। नई विधि के

चित्र 53 नकली स्टीरिओ

अनुसार गैर स्टीरियो रिकार्ड से प्राप्त संकेतों को दो अलग-अलग एम्प्लीफायरों से वर्धित किया जाता है और फिर दो स्पीकर बजाए जाते हैं, लेकिन एक स्पीकर के मार्ग में देरी करने वाला विशेष सर्किट जोड़ दिया जाता है। फलस्वरूप दोनों स्पीकरों से आने वाली आवाजों में अन्तर आ जाता है और हमें स्टीरियो सुनने का भ्रम होता है। लेकिन यहां पर बतलाना आवश्यक है कि यह स्टीरियो प्रभाव असली नहीं है, इसलिए इसे नकली स्टीरियो या छदम स्टीरियो कहते हैं।
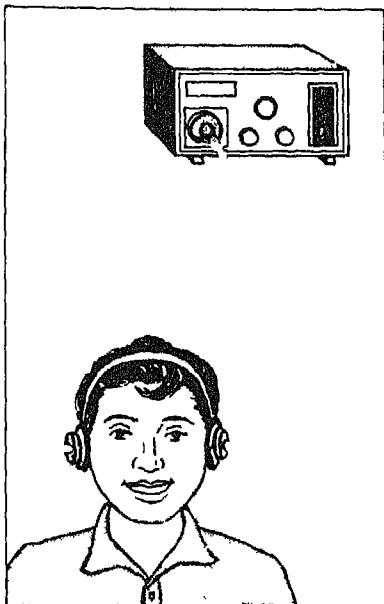
यदि हमारे चार कान होते

हमारे दो कान हैं, इसलिए संगीत का पूरा आनन्द लेने के लिए दो चैनल वाला स्टीरियो बनाया गया। लेकिन दो चैनल वाला स्टीरियो यदि ठीक आवाज भी दे तो क्या गारंटी है कि हमें सब कुछ ठीक सुनाई देगा? रंगमंच पर जब कोई कार्यक्रम चल रहा होता है तो सभा भवन में बैठा श्रोता न केवल रंगमंच से सीधी आ रही आवाजें सुनता है बल्कि पीछे की दीवालों से टकरा कर लौटने वाली आवाजें भी सुनता है। पीछे की दीवार से लौट कर आने वाली प्रतिध्वनि की वजह से संगीत में विशेष आकर्षण

पैदा हो जाता है। क्या अपने छोटे से कमरे में दो चैनल स्टीरियो बजाकर हम बिल्कुल वैसी ही प्रतिध्वनियां पा सकते हैं? नहीं। तभी तो अच्छे से अच्छे दो चैनल युक्तियों में स्टीरियो प्रभाव पूरी तरह उभर कर नहीं आता। इस कमी को दूर करने के लिए अब चार चैनल के स्टीरियो बनाए गए हैं।

चार चैनल स्टीरियो के लिए चार माइक्रोफोनों की मदद से ध्वनि अंकित की जाती है। ये माइक्रोफोन बायें-आगे, बायें-पीछे, दायें-आगे और दायें-पीछे रखे जाते हैं। इन चारों माइक्रोफोनों द्वारा पकड़ी गई आवाजों को चार ट्रेक वाले किसी रिकार्डर में अंकित कर ली जाती हैं।
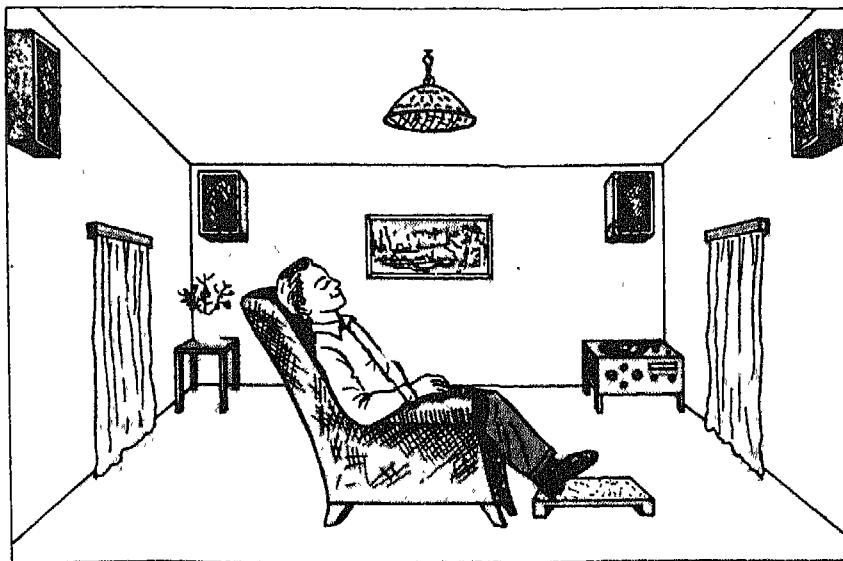
चित्र 54 चार चैनल का स्टीरियो

सुनते समय इन चारों ट्रेकों से प्राप्त संकेतों से चार स्पीकर बजाए जाते हैं।

क्या चार चैनल वाली ध्वनि सुनने के लिए हमें चार कान चाहिए? प्रकृति ने तो हमें केवल दो ही कान दिए हैं। इसलिए ध्वनि अंकन और पुनरुत्पादन का हम कोई भी तरीका क्यों न अपनाएं, हमारी कोशिश सदा यही रहनी चाहिए कि हम अपने दोही कानों से ठीक वैसा सुनें जैसा कि हमें तब सुनाई देता जब हम सचमुच सभा भवन में बैठे होते। इसलिए हमें चार कान नहीं चाहिएं वरन् चारों स्पीकरों को इसप्रकार रखना चाहिए कि बायें-आगे रखे माइक्रोफोन की आवाज बायें-आगे रखे स्पीकर से आए, बायें-पीछे रखे माइक्रोफोन की आवाज बायें-पीछे लगे स्पीकर से आए और इसीप्रकार दायें-आगे रखे माइक्रोफोन की आवाज दायें-आगे लगे स्पीकर से आए तथा दायें-पीछे रखे माइक्रोफोन की आवाज दायें-पीछे लगे स्पीकर से आए। ऐसी व्यवस्था द्वारा अधिक वास्तविक ध्वनि सुनाई देगी। अच्छा प्रभाव लाने के लिए यह ध्यान रखना चाहिए कि पीछे के स्पीकरों से जोर की आवाजें न आएं क्योंकि वे तो केवल प्रतिध्वनियों का आभास देने के लिए लगाए गए हैं।

चार चैनल वाला टेप रिकार्डर बनाना कोई बड़ी बात नहीं। सन् 1960-1970 के बीच ऐसे टेप रिकार्डर बाजार में मिलने लगे। चार चैनल वाले टेप रिकार्डर में एक विशेष प्रकार का हैड होता है जिसके चार भाग होते हैं। प्रत्येक भाग अपने-अपने ट्रेक के लिए ध्वनि अंकित करता है और बजाने पर पुनरुत्पादित करता है। इसप्रकार प्राप्त संकेतों से चार स्पीकर बजाए जाते हैं जिन्हें ठीक ढंग से रखा जाता है।

विगत कुछ वर्षों में चार चैनल ध्वनि देने वाली ग्रामोफोन रिकार्ड भी बनाए गए हैं। ऐसे रिकार्ड में स्टीरियो रिकार्ड की तरह एक ही खाँचे की दोनों दीवारों पर संकेत काटे जाते हैं। फिर चार तरह की आवाजें

कैसे मिल जाती हैं? इसे समझने के लिए चित्र देखिए जिसमें चार चैनल रिकार्ड काटने व सुनाने की पूरी व्यवस्था दिखलाई गई है।

चित्र में चारों माइक्रोफोनों से प्राप्त संकेतों को A, B, C और D से लिखा गया है। A व B बायीं ओर की आगे पीछे की ध्वनि प्रदर्शित करते हैं और C और D दायीं ओर की आगे पीछे की। अब विशेष सर्किट द्वारा, जिन्हें योग व ऋण सर्किट कहते हैं (A + B), (C + D), (A - B) और (C - D) संकेत प्राप्त कर लिए जाते हैं। फिर ऋण संकेतों, अर्थात् (A - B) और (C - D) संकेतों को 30 किलोहर्ट्ज की तरंग पर सवार करा दिया जाता है—वैज्ञानिक इस क्रिया को माडुलन कहते हैं। इसप्रकार ऋण संकेतों की सारी सूचनाएं 30 किलोहर्ट्ज के आसपास फैल
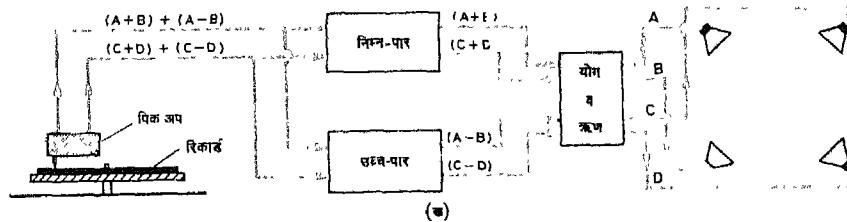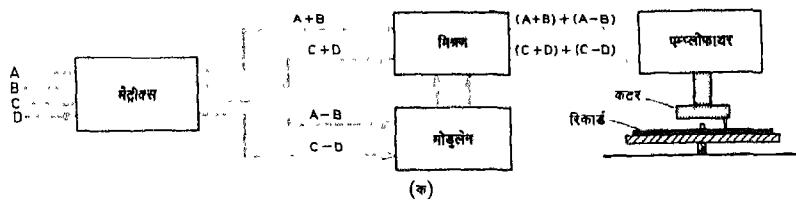
चित्र 55 चार चैनल का ग्रामोफोन रिकार्ड पर अंकन व पुनरुत्पादन

जाती हैं। उधर धन संकेतों की सूचनाएं तो 0 से 15 किलोहर्ट्ज तक सीमित होती हैं। अब (A + B) व (A - B) के संकेतों को मिलाकर जो

संकेत मिलते हैं उन्हें खाँचे की बायीं दीवार पर अंकित कर लेते हैं और (C+D) व (C-D) को मिलाकर जो संकेत मिलते हैं उन्हें दायीं दीवार पर।

रिकार्ड बजाने पर बायीं दीवार से हमें (A+B) + (A-B) संकेत मिल जाते हैं। लेकिन (A+B) संकेतों की परास तो 0 से 15 किलोहर्ट्ज है जबकि (A-B) संकेतों की 30 किलोहर्ट्ज के आसपास। इसलिए साधारण सर्किटों की मदद से (A+B) व (A-B) संकेतों को अलग-अलग छांटना कोई मुश्किल बात नहीं। इसप्रकार बायीं दीवार से (A+B) व (A-B) संकेत मिल जाते हैं और दायीं दीवार से (C+D) व (C-D)। इन चारों संकेतों को फिर योग व ऋण सर्किटों में भेज कर नीचे दी गई योजना के अनुसार A, B, C और D संकेत प्राप्त कर लेते हैं।

$$(A+B) + (A-B) = 2A$$
$$(A+B) - (A-B) = 2B$$
$$(C+D) + (C-D) = 2C$$
$$(C+D) - (C-D) = 2D$$

अंत में इन संकेतों को वर्धित कर इनसे चार स्पीकर बजाए जाते हैं।

चार चैनल वाले रिकार्ड प्लेयर में कार्ट्रिज ऐसा होना चाहिए जो 30 किलोहर्ट्ज से भी ऊंची आवृत्तियों पर काम कर सके। यह तो स्पष्ट ही है कि ऐसे चार चैनल वाले प्लेयर से दो चैनल वाली स्टीरियो रिकार्ड तो बजाई ही जा सकती है।

यद्यपि चार चैनल के टेप रिकार्डर व रिकार्ड प्लेयर बाजार में मिलने लगे हैं लेकिन अभी तक वे अधिक लोकप्रिय नहीं हो पाए हैं।

बगैर सुई के बजने वाली रिकार्ड : डिजिटल रिकार्डिंग

क्या किसी रिकार्ड को बगैर किसी सुई के बजाया जा सकता है? क्या रिकार्ड पर धूल कण, उंगलियों के निशान आदि होने पर भी सही आवाज मिल सकती है? क्या वो, फ्लटर आदि दोषों से छुटकारा मिल सकता है? इन सवालों पर वैज्ञानिकों का ध्यान जाना स्वाभाविक ही है। पिछले कुछ वर्षों में इस दिशा में काफी प्रगति हुई है। अब बाजार में ऐसी रिकार्डें मिलने लगी है जिन्हें बगैर सुई के बजाया जा सकता है। इस रिकार्ड को नए प्रकार के प्लेयर के मंच पर रख कर घुमाइए और उस पर लेसर प्रकाश डालिए और देखिए कितना मधुर संगीत पुनरुत्पादित होता है। न शोर और न ही भनभनाहट।

इस नई प्रकार की रिकार्ड को लेसर की मदद से बजाया और बनाया जाता है। लेसर एक प्रकार का प्रकाश होता है जिसमें कई प्रकार की विशेषताएं होती हैं। लेसर किरणावली बगैर फैले दूर-दूर तक जा सकती है, इसकी चमक भी बहुत अधिक होती है और इसे छोटे से छोटे बिन्दु के रूप में फोकस किया जा सकता है।

लेसर प्रकाश की मदद से किसी योजना के अनुसार रिकार्ड पर बहुत नन्हें-नन्हें गड्ढे काटे जाते हैं। लेसर कटर की महीनता की वजह से 1 सेमी में 5000 तक खांचे काटे जा सकते हैं। इस रिकार्ड को एक ही ओर से बजाया जाता है। फिर भी 12 सेमी व्यास वाली रिकार्ड पर घंटे भर का कार्यक्रम अंकित किया जा सकता है।

नए प्रकार की रिकार्ड बनाने के लिए कांच की एक पूर्ण सपाट प्लेट पर प्रकाश संवेदी परत चढ़ा दी जाती है जिसपर लेसर बिन्दु से गड्ढे काटे जाते हैं। इस परत के सपाट भागों व गड्ढे को चांदी की पालिश से चमकदार बना दिया जाता है। ध्वनि संबंधी सारी सूचनाएं इन्हीं

चमकदार सपाट भागों व चमकदार गड्ढे के रूप में अंकित होती हैं। इस परत की रक्षा के लिए इसके ऊपर पारदर्शी प्लास्टिक की एक परत चढ़ा दी जाती है जिससे धूलकणों, खरोंचों व उंगलियों के निशानों से रिकार्ड खराब न हों।

रिकार्ड बजाने के लिए फिर लेसर प्रकाश का उपयोग किया जाता है। इस प्रकाश.को बहुत महीन बिन्दु के रूप में फोकस कर रिकार्ड पर डाला जाता है। यह प्रकाश जब किसी सपाट चमकदार स्थान पर गिरता है तो उसका अधिकांश भाग परावर्तित हो जाता है लेकिन किसी गड्ढे पर गिरने पर वह फैल जाता है इसलिए परावर्तित प्रकाश बहुत मंद होता है। परावर्तित प्रकाश को प्रकाश संवेदी युक्तियों, जैसे फोटो सेल पर डालकर सपाट स्थानों और गड्ढे के अनुरूप विद्युत संकेत मिल जाते हैं। इन्हीं संकेतों द्वारा ध्वनि तरंग की रचना कर ली जाती है। इसप्रकार के रिकार्डिंग को अंकीय अभिलेखन अथवा डिजिटल रिकार्डिंग कहते हैं।

अंकीय अभिलेखन के लिए सबसे पहले ध्वनि वोल्टताओं के नमूने थोड़ी-थोड़ी देर बाद ले लिए जाते हैं। इसका मतलब यह है किसी निश्चित अल्प काल बाद वोल्टता का माप किया जाता है और इस माप को पूर्ण संख्याओं में प्रदर्शित किया जाता है। प्रथा के अनुसार यदि वोल्टता 2 और 3 के बीच है तो उसे 3 से प्रदर्शित करते हैं। इसप्रकार चित्र में जो ध्वनि तरंग दिखलाई गई है उसके लिए जो संख्याएं मिलीं, वे हैं– 3, 5, 6, 6, 7, 6, 6, 5, 3 आदि। इसप्रकार ध्वनि तरंग का एक प्रकार से क्वांटमीकरण हो गया, अर्थात् ध्वनि के बारे में अब हमारे पास जो सूचना है वह सतत रूप से बढ़ती घटती नहीं है वरन् 1 वोल्ट के चरणों में बढ़-घट रही है।

साधारण कामों में हम जो संख्याएं काम में लाते हैं वे 0, 1,

चित्र 56 अंकीय अभिलेखन की क्रियाएं
(क) ध्वनि संकेत
(ख) नमूने निकाले की क्रिया या प्रतिचयन
(ग) क्वांटमीकरण—दशामिक पद्धति, द्विआधारी पद्धति
(घ) विद्युत संकेतों की कड़ी
(च) पुनरुत्पादन—द्विआधारी पद्धति, दशामिक पद्धति
(छ) ध्वनि तरंग की रचना
(ज) ध्वनि संकेत
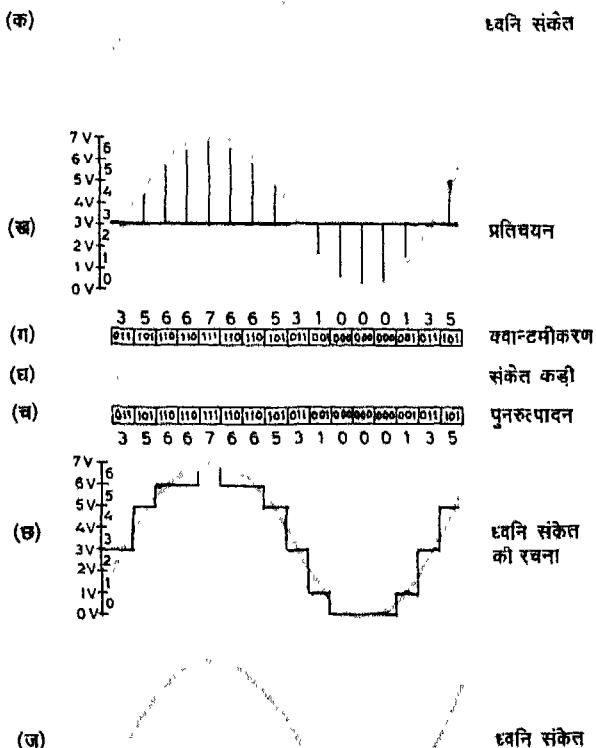
2.........9 अंकों अर्थात् कुल दस अंकों से बनती होती हैं, लेकिन इलेक्ट्रोनिक्स में संख्याओं को केवल दो अंकों अर्थात् 0 व 1 से प्रदर्शित

चित्र 57 द्विआधारित पद्धति में संख्याएं

करना अच्छा होता है। यह बात भले ही अजीब लगे पर यह सत्य है कि हम बड़ी से बड़ी संख्या को केवल 0 व 1 अंकों से प्रदर्शित कर सकते हैं। जैसा कि चित्र से स्पष्ट है कि पांच को हम 0 व 1 अंकों की द्विआधारी पद्धति या बायनरी पद्धति में 101 से लिख सकते हैं। ध्वनि के बारे में हमें जो संख्याएं नमूने के तौर पर मिलीं यदि उन्हें 0, 1 अंकों की द्विआधारी पद्धति में प्रदर्शित करें तो हमें 011, 101, 110, 110, 111, 110, 110, 101... जैसी लम्बी कड़ी मिल जाती है। इस कड़ी में ध्वनि सम्बन्धी सारी जानकारी समाई हुई है।

अब यदि अंक 0 को 0 वोल्ट से दर्शाएं और अंक 1 को 1 वोल्ट से तो हमें ध्वनि का एक कोडित रूप मिलता है जो चित्र में दिखलाया गया है। इन विद्युत संकेतों से लेसर लैम्प को नियंत्रित करके ग्रामोफोन जैसी रिकार्ड पर गड्ढे काटे जा सकते हैं। इस प्रकार रिकार्ड का

कोई सपाट भाग यदि 1 को प्रदर्शित करता है तो गड्ढे वाला भाग 0 को प्रदर्शित करेगा, तो इस प्रकार रिकार्ड पर ध्वनि का अंकीय अभिलेखन हो जाता है।

रिकार्ड बजाकर ध्वनि पाने के लिए क्या करें? रिकार्ड पर तो केवल सपाट स्थान हैं या गड्ढों के चिह्न हैं। इन्हें पहचानने के लिए फिर लेसर प्रकाश का उपयोग किया जाता है। एक छोटे से लेसर लैम्प से प्रकाश डालने की व्यवस्था चित्र में दिखलाई गई है। इस व्यवस्था में कांच की प्लेट एक अर्ध दर्पण की तरह काम करती है। लैम्प से आ रहे प्रकाश का 50% भाग कांच की इस अर्ध दर्पण जैसी प्लेट पर गिरकर बिन्दु के रूप में फोकस होकर रिकार्ड पर गिरता है। जब यह प्रकाश रिकार्ड के किसी सपाट चमकीले भाग पर पड़ता है तो परावर्तित प्रकाश काफी तीव्र होता है। सपाट स्थान से लौट रहे तीव्र प्रकाश के मार्ग में फिर वही अर्ध दर्पण वाली प्लेट आ जाती है, फलस्वरूप इस प्रकाश का काफी बड़ा भाग बायीं ओर मुड़ जाता है और पास रखे फोटोसेल जैसी किसी युक्ति पर गिरता है—फलस्वरूप विद्युत वोल्टता पैदा होती है। लेकिन लेसर बिन्दु जब किसी गड्ढे पर गिरता है तो प्रकाश इधर-उधर बिखर जाता है। तब लौटा हुआ प्रकाश इतना मंद होता है कि वह फोटो सेल पर गिरकर कोई वोल्टता उत्पन्न नहीं कर पाता। इसप्रकार लेसर से 0, 1 अंकों वाली कड़ी फिर मिल जाती है। इन द्विआधारी अंकों को फिर साधारण अंकों में बदलना कोई बड़ी बात नहीं। इसप्रकार एक निश्चित क्रम में 3, 5, 6,6 आदि संकेत मिल जाते हैं। इन संकेतों को जोड़कर ध्वनि के अनुरूप विद्युत तरंग की रचना हो जाती है। जब इन संकेतों को एम्प्लीफायर से वर्धित कर स्पीकर में भेजा जाता है तो हमें ध्वनि मिलती है।
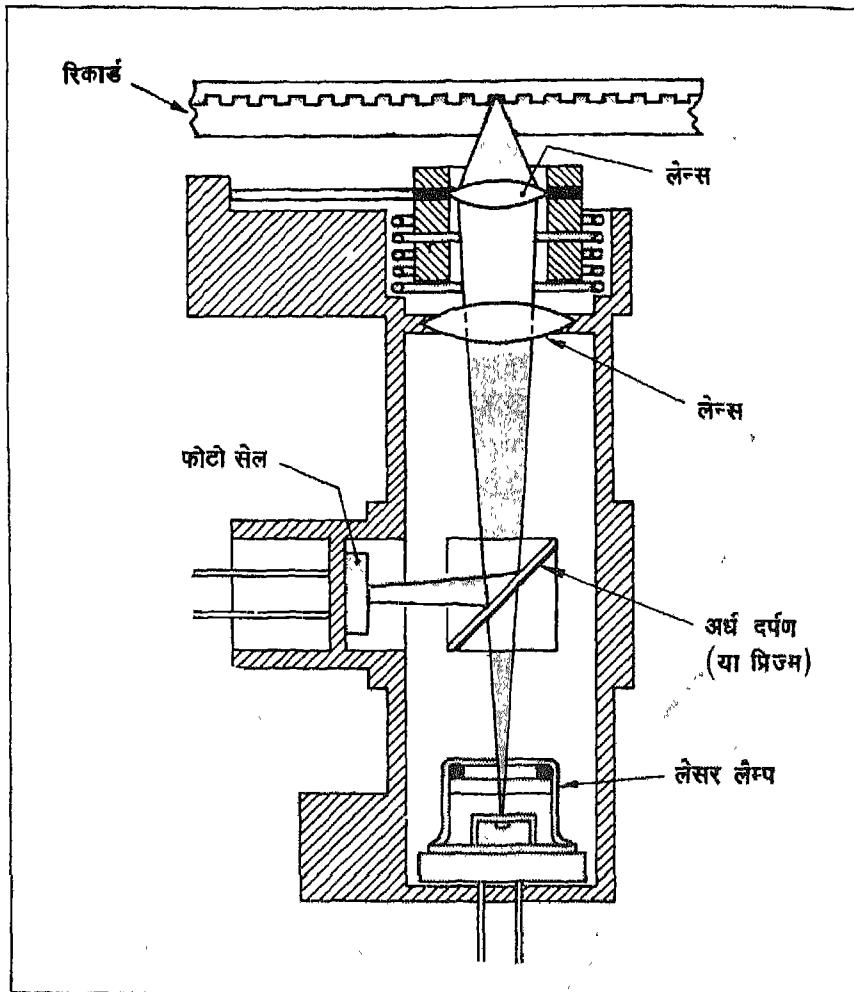
चित्र 58 अकीय अभिलेखित सकेतों का लेसर की मदद से पढना

साधारण किसी भी पद्धति में शोर से बचना मुश्किल है क्योंकि ध्वनि वोल्टता पर शोर वोल्टता इसप्रकार सवार हो जाती है कि उससे बचना संभव नहीं। लेकिन अंकीय अभिलेखन की बात कुछ और है। इस विधि द्वारा अंकित संकेत तो शोर से प्रभावित हो सकते हैं लेकिन रिकार्ड बजाते समय तो हमें केवल इतनी ही सूचना चाहिए कि लेसर प्रकाश किसी सपाट स्थान से लौटा या किसी गड्ढे वाले स्थान से।

इस विधि द्वारा रिकार्ड सुनने पर धूल कणों, मामूली खँरोचों व उंगलियों के निशानों का भी कोई बुरा असर नहीं पड़ता। इसका कारण यह है कि लेसर प्रकाश ठीक उसी सतह पर फोकस होता है जिस सतह पर ध्वनि अंकित है। रक्षित सतह के ऊपर यदि कोई निशान या धूलकण हों तो भी क्योंकि वहां लेसर प्रकाश फोकस होकर नहीं गिर रहा, इसलिए उनके द्वारा परावर्तित प्रकाश इतना मंद होता है कि उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

रिकार्ड पर जो गड्ढे बनाए जाते हैं उन्हें इसप्रकार व्यवस्थित किया जाता है कि हमें न केवल दो चैनल मिल सकें वरन् रिकार्ड की चाल बिगड़ने पर वह अपने आप ठीक हो जाए। इस विधि में रिकार्ड किसी निश्चित चाल से घुमाया जाता है और लेसर प्रकाश भीतरी खाँचे से बाहरी खाँचे की ओर अंकित चिह्नों को पढ़ता जाता है। इस रिकार्ड प्लेयर में अर्धचालक लेसर का उपयोग किया जाता है जो अवरक्त किरणावली देता है।

क्या किसी किताब को बार-बार पढ़ने पर वह घिसती है? नहीं। ठीक उसीप्रकार अंकीय अभिलेखित रिकार्ड को कितनी ही बार बजाइये वह घिसेगी नहीं।
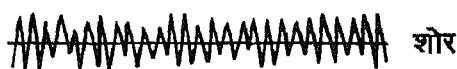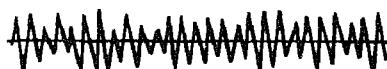
चित्र 59 शोर का प्रभाव (क) साधारण विधि मे (ख) अंकीय अभिलेखन में
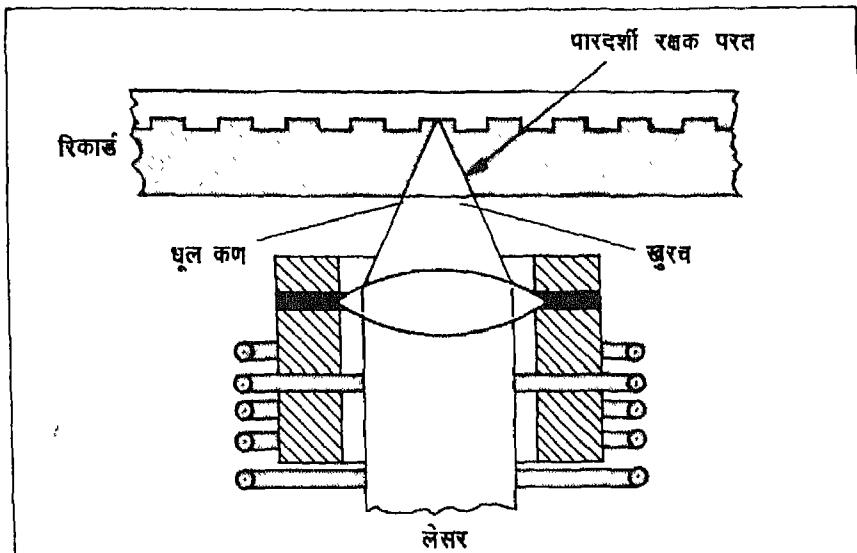
चित्र 60 धूल कणों का कोई प्रभाव न पड़ना

बोलते पत्र

यह आशा की जाती है कि निकट भविष्य में टेप पत्र भी चलने लगेंगे। तब पत्र भेजने वाला डाकखाने से एक छोटा-सा टेप खरीदेगा, और उसपर अपना संदेश अंकित करके डाक में डाल देगा। पत्र पाने वाला जब इसे पाएगा तो वह किसी टेप रिकार्डर की मदद से उसे सुन सकेगा।

जनता की सुविधा के लिए पब्लिक टेलीफोन की तरह डाकखानों में पब्लिक टेप रिकार्डर भी रखने होंगे। इनकी मदद से वे व्यक्ति भी

जिनके पास अपना टेप रिकार्डर नहीं है, अपना संदेश अंकित कर सकते हैं और टेप पत्र पाने पर उसे सुन सकते हैं।

टेप पर लिखे संदेश को मिटाया जा सकता है और उसे बार-बार काम में लाया जा सकता है। जिनके घरों में नियमित डाक आती है, वे जितने पत्र भेजेंगे लगभग उतने ही पत्र उन्हें प्राप्त होंगे। इसलिए टेप पत्र की क्या कीमत हो यह कोई महत्वपूर्ण बात नहीं। अवश्य ही, डाक विभाग को नुकसान न हो, इसे ध्यान में रखते हुए टेप पत्र भेजने के लिए विशेष लिफाफे पर उचित कीमत के टिकट लगाने होंगे।

हिन्दी अंग्रेजी शब्दावली

पारिभाषिक शब्दकोश में प्रयुक्त	अन्य	अंग्रेजी शब्द
संरेखण	–	Alignment
प्रवर्धक एम्प्लीफायर		Amplifier
प्रवर्धन	वर्धन	Amplify
बेरियम टायटनेट		Barium titanate
किरणावली		Beam
बेल		Bel
बायस		Bias
द्विआधारी, बायनरी		Binary
द्विपथी		Binaural
कैपस्टन		Capston
कार्ट्रिज		Cartrige
कैथोड किरण ऑसिलोस्कोप		Cathode ray oscilloscope
परिपथ	सर्किट	Circuit
–	क्लैम्प स्टिक	Clamp stick
संपीडन		Compression
संधारित्र	कन्डेन्सर	Condenser
कुंडली		Coil
स्वर नियन्त्रक		Control, tone,
ध्वनि नियंत्रक		,volume

धारा		Current,
प्रत्यावर्ती धारा	ए.सी. धारा	a.c.
दिष्ट धारा	डी.सी. धारा	d.c.
दशमलव		Decimal
विचुंबकन		Demagnetisation
हीरा		Diamond
विवर्तन		Diffraction
अंकीय		Digital
विकृति		Distortion
प्रतिध्वनि		Echo
विद्युत	बिजली	Electricity
विद्युत लेपन		Electroplating
विद्युत चुंबकीय प्रेरण		Electromagnetic induction
इलेक्ट्रान		Electron
समकारी	इक्वेलाइजर	Equaliser
इरेजर		Eraser
फलटर		Flutter
फोकस		Focus
आवृत्ति		Frequency
ग्रामोफोन		Gramophone
खाँचा		Groove
हैड		Head
,इरेज		,Erase
,पुनरुत्पादन		,Play back
,अंकन		,Recording
हर्ट्ज		Hertz
—	बीच में खाली स्थान	Hole in the middle
नाल चुंबक		Horse shoe magnet

प्रतिबिम्ब	बिम्ब	Image
निवेश, निवेशी		Input
तीव्रता		Intensity
लेकर		Lacquer
लेड जिरकोनेट टाइटनेट		Lead zirconate titanate
लीवर		Lever
प्रकाश		Light
प्रबलता		Loudness
चुंबक		Magnet
चुंबकन		Magnetisation
माइक्रोफोन	माइक	Microphone
माडुलन		Modulation
—	मोनोफोनिक	Monophonic
मोटर		Motor
निर्गम, निर्गत		Output
अधिस्वर		Overtone
कला		Phase
फोनोग्राफ		Phonograph
प्रकाश विद्युत सेल	फोटो सेल	Photocell
—	पिकअप	Pickup
दाब विद्युत		Piezoelectric
स्तंभ		Piller
गर्त	गड्ढा	Pit
तारत्व		Pitch
शक्ति		Power
—	क्वाड्रेफोनिक	Quadraphonic

परास		Range
विरलन		Rarefaction
रील		Reel
रिकार्ड		Record
अंकन, अभिलेखन		Recording
पुनरुत्पादन		Reproduction
अनुरणन काल		Reverberation time
अवशिष्ट	शेष	Residual
रोशेल लवण		Rochelle salt
रूबी		Rubey
नीलम		Sapphire
प्रकीर्ण		Scatter
अर्धचालक		Semiconductor
परिरक्षण, शीलि्डंग		Shielding
संकेत	सिगनल	Signal
झिरी		Slit
साउंड बाक्स, नाद पेटी		Sound box
स्पीकर		Speaker
सर्पिल		Spiral
स्टेज	मंच	Stage
—	स्टेपलर	Stamper
स्टीरियो		Stereo
,छद्म		,pseudo
स्ट्रोबोस्कोप		Stroboscope
सुई		Stylus

,गाइड	,guide
,रिकार्डर	,recorder
स्वर	Tone
पथचिह्न	Track
क्षणिका	Transient
पारदर्शी	Transparent
वेग	Velocity
,कोणीय	,angular
,रेखीय, रैखिक	,linear
कंपन	Vibration
वोल्ट	Volt
वोल्टता	Votage
वाट	Watt
तरंग	Wave
तरंग रूप	Waveform
तरंग दैर्घ्य	Wavelength
कुंडलन	Winding
तार	Wire
वूफर	Woofer
वो	Wow

(g) Marketing communication has also direct link with the society. The major tools of communication - advertising, personal selling, publicity and sales promotion have significant impact on soc... , awareness, knowledge and consumption patterns of consumers.

Advertising and publicity make use of the most media and the product messages carried of the media reach not only the buyers but also other members of the society. These messages serve as a useful price of consumer and public awareness and education. They go to a large extent in changing the social values and the beliefs and attitudes of individuals.

9.3 Objections Against Marketing

Marketing is the most criticised part of business. Many of its activities attract public criticism. The major objections and criticisms against marketing can be classified under four categories.

i. criticism pertaining to prod.
ii. criticism pertaining to price
iii. criticism pertaining to distribution
iv. criticism pertaining to the promotion.

9.3.1 The Product

Some people blame marketing for supplying defective, useless and poor-quality goods. Many unscrupulous people do not maintain the appropriate standards of quality control and fail to adhere to the product safety and quality standards laid down under the appropriate legislations such as the Drugs and Cosmetics Act, 1940 and the Bureau of Indian Standards Act, 1986, and the Agricultural Produce (grading and Marketing) Act, 1937. Consequently, many drugs have adverse side effects, Products like stoves and electric gadgets lead to accidents leading to physical injury to ... , including death.

People [illegible] marketing for creating artificial differentiation and often confusing buyers with similar or deceptively similar products. Too much money is being spent by certain suppliers on product [illegible]. Product labels often do not contain complete information needed by the consumer, such as contents, unit prices, directions for care and use, etc.

Product warranties and after-sale service contracts are often not honoured.

.3.2 Price

People criticise marketing for higher prices of products and services. Among the factors responsible for price increase, three are attributed to marketing alone : high cost of distribution, high advertising, selling and [illegible] promotion costs and higher margin of profit charged by the manufacturers.

[illegible] Distribution

The criticism in respect of distributed system is that it often involves long channel and too many middlemens. Many retail outlets indulge in extravagent expenses on customer entertainment, airconditioned show-rooms, etc., which ult - mately the customer pays through his nose.

[illegible] Promotion

From the view point of social criticism, promotion is the most vulnerable area of marketing. People criticis marketing for misleading, exaggerated and often deceptiv advertising claims about certain products. Many consumer goods companies spend too much on advertising, many [illegible] are repetitive and unnecessary. Instead of spending so much on advertising and sales promotion, the company should [illegible] [illegible] benefits to the customers by way of price [illegible] and quality improvement. Many advertisement are questio[illegible]

from the ethical view point. Some advertisements are in bad taste and cross the limits of decency and morality. Certain advertisement have evil effect on young children and make indecent portrayal of women. Many people are motivated to buy things which are not needed by them. Instead of being informative, most of the advertisements are persuasive and reminding.

Personal selling too has its own share of blame and brickbats. People criticise marketing of high-pressure and aggressive selling.

However, all these evil and undesirable practices of marketing arise in the absence of the marketing philosophy, namely, the customer orientation. If a company has actually adopted the marketing concept and gives customers his due importance and considers customers satisfaction as its ultimate goal of marketing, all of the above weaknesses of the marketing system will disappear.

9.4 Consumerism

Consumerism is an organised movement of citizens and government to enhance the rights and power of buyers in relation to sellers.

John F.Kennedy, Former President of America, said that all consumers have the following four basic rights :

i) Right to safety, (i.e. the products bought must be safe and free from risk and health hazard);

ii) Right to be informed, (i.e. he should get complete and adequate information about the product and its usage) ;

iii) Right to choose, (Choice in product selection through variety of products available); and

iv) Right to be heard (i.e. he should have voice in decision making and his grievance should be duly redressed).

In India, the following rights have been considered as basic rights of the consumers :

(a) the right to be protected against the marketing of goods which are hazardous to life and property ;

(b) the right to be informed about the quality, quantity potency, purity, standard and price of goods so as to protect the consumer against unfair trade practices ;

(c) the right to be assured, wherever possible, access to a variety of goods at competitive prices ;

(d) the right to be heard and to be assured that consumers interests will receive due consideration at appropriate forums ;

(e) the right to seek redressal against unfair trade practices or unscrupulour exploitation of consumer ; and

(f) the right to consumer education.

These rights of the consumers are sought to be produced and protected through legislative measures contained in a number of enactments and by voluntary consumers organisations. In fact, consumerism stands on two legs.

i. Consumer protection through legislative measures which are enforced through the statutory enforcement machinery, and

ii. Collective and organised efforts of consumers themselves against exploitative and unscrupulous businessmen.

More over, the business also have a role to play in consumerism. If the manufacturers and sellers of goods and those providing services to consumers care for consumers, the role and importance of the two major wings of consumerism get reduced.

9.5 Role of the Government and the Law

Where the marketing people fail to discharge their social responsibility and behave in an irresponsible manner, the Government has to step in. For this purpose, certain legislative have been enacted. The major legislations in India which provide for the regulation of undesirable marketing practices and for the protection of consumer interest are as follows :

(a) The Monopolies & Restrictive Trade Practices Act, 1969 (as amended by the 1984 Act).

(b) The consumer Protection Act, 1986.

(c) The Drugs & Cosmetics Act, 1940.

(d) The Prevention of Food Adulteration Act, 1954.

(e) The standards of Weights & Measures Act, 1976.

(f) The Essential Commodities Act, 1955.

A brief introduction to the major provisions of these legislations will be given [illegible] in this chapter.

Apart from th[illegible] and their enforcement machinery, the central and state governments have executive powers to curb any such marketing practice which may be harmful to the public interest.

9.5.1 The Monopolies and Restrictive Trade Practice Act, 1969 :

The Monopolies and Restrictive Trade Practices (MRTP) 1969, is a major legislation which vitally influences the decisions and practices in the fields of production, distribution and supply of goods and provision of services in India. It serves as a major instrument of consumer protection.

The MRTP Act is intended to control monopolies and restrictive and unfair trade practices. The Act, however does not apply to public sector undertakings, government - managed private sector undertakings, financial institutions,

cooperative societies and trade unions.

A statuatory high-powered body, known as the Monopolies and Restrictive Trade Practices (MRTP) Commission, has been set up to enforce the legislative provisions of the Act. It is headed by a judge of high court or the supreme court. It has 2 to 8 other members.

The Commission conducts inquiries in matters pertaining to control of monopolistic, restrictive and unfair trade practices. For purposes of conducting any inquiry, the Commission has the same powers as are vested in a civil court. The proceedings before the Commission are deemed to be of judicial nature.

In its working, the MRTP Commission is assisted by the Director-General of Investigation and Registration (D.G.I.&R.).

He is required to conducts investigations and to maintain a register of restrictive trade agreements. He also works as an advocate of the public interest in cases coming before the MRTP Commission.

9.5.1.1 Monopolistic Trade Practices

In order to increase their profit and market power, certain business firms are tempted to charge unreasonably high prices and prevent competition in the market. They tend to lower the quality of goods supplied and to increase the prices. These business practices tend to create monopoly and often harm the public interest through the exploitation of consumers.

A monopolistic trade practice is essentially a trade practice which represents the abuse of market power in the production and marketing of goods or in the provision of services by charging unreasonably high prices, preventing

or reducing competition, limiting technical development, deteriorating product quality, or by adopting unfair or deceptive practices.

Monopolistic trade practices are sought to be regulated through appropriate orders [illegible] by the Central Government (Department of Company Affairs), which is preceded by a formal enquiry conducted by the MRTP Commission.

The Central Government has been vested with wide powers to pass any order as " it may think fit " to remedy or prevent any mischiefs which result or may result from any monopolistic trade practice. It includes the direction to party concerned to stop the said practice and not to continue it in future (" cease and desist " order). The order is legally binding on the party concerned and any non-compliance or disregard of the order amount to an offence which is punishable under the Act.

9.5.1.2 <u>Restrictive Trade Practices</u>

Marketers often indulge in certain trade practices which restrict, reduce or prevent competition in the market and thereby harm the consumer interest. Such trade practices are referred to as restrictive trade practice.(2).

The concept of restrictive trade practice is very broad and is not confined to trade only. It includes practices followed in the course of production, distribution or supply of goods and in the provision of services. A restrictive trade practice can be adopted by a manufacturer, distributor, dealer, supplier of goods, or by one who provides any service or carries on any profession or occupation.

Restrictive trade practices are sought to be regulated by three devices :

1. Registration of restrictive trade practices ;

---

(2) For the precise, defination of ' restrictive trade practices', see section 2(0) of the MRTP Act.

2. Restraining persons from indulging in restrictive trade practices by the MRTP Commission after an enquiry conducted by it ; and

3. Prohibition of minimum re-sale prices.

An agreement relating to a restrictive trade practice is required to be registered with the Director-General of Investigation and Registration. The types of restrictive trade practices, which make an agreement registrable, are listed in the MRTP Act.

The compulsory requirement of the registration of restrictive trade agreements serves as a deterrent to the sellers against resorting to restrictive trade practices.

The MRTP Commission is empowered to enquire into restrictive trade practices on any of the following four grounds:

(i) a complaint received from any trade association or from any consumer or consumers' association ;

(ii) a reference received from the Central Government or any State Government ;

(iii) an application received from the Director General of Investigation and Registration ;

(iv) the Commission's knowledge or information.

After conducting the enquiry, if the MRTP Commission is of the opinion that the practice is harmful to the public interest, it would direct the party concerned to discontinue the practice and not to repeat the same. ('cease and desist' order).

The 'effect on competition is of crucial importance in the regulation of restrictive trade practices.

While the sellers are encouraged to fix 'maximum' re-sale prices for goods, they are forbidden from fixing 'minimum' re-sale prices. No manufacturer or distributor is permitted to prescribe the minimum prices for re-sale of

goods. Exemption from the prohibition can be granted by the MRTP Commission only when the firm has satisfied the commission on any of the grounds specified in the Act for this purpose. So far only two products have been granted such exemption in India. These are safety match and newspaper.

9.5.1.3 Unfair Trade Practices

Broadly speaking, any trade practice which is considered unfair and harmful to the consumer is an unfair trade practice. However, as defined under the MRTP Act, an unfair trade practice refers to any of the five trade practices specified under the Act [3], which are adopted for the purpose of promoting the sale, use or supply of any goods or for the provision of any services, and which cause loss or injury to the consumer. Briefly stated, these practices are :

a. Misleading advertising and false representation ;
b. Advertising of bargain price (or bait advertising) and switch selling ;
c. Offering of psuedo gifts or prizes and conducting of promotional contest, lottery and games of chance or skill ;
d. Supplying of unsafe or hazardous products ; and
e. Hoarding or destroying of goods, or refusal to sell goods, resulting in a price increase.

Unfair trade practices are sought to be regulated by way of a cease-and-desist order passed by the MRTP Commission. Before passing such an order, the Commission is required to conduct a statutory enquiry into the alleged trade practice.

---

3 Section 36 A

Barring minor deviations, the procedure for conducting the enquiry into an unfair trade practice and the consequences of the enquiry similar to those pertaining to restrictive trade practices.

Thus, the MRTP Act contains effective measures for the protection of consumer interest through the control of monopolistics restrictive and unfair trade practices in India and the MRTP Commission has been assigned an important role as a consumer protection agency.

9.5.2 <u>The Consumer Protection Act, 1986</u>

The Consumer Protection Act, 1986 is the latest addition of the list of legislations for consumer protection in India.

The main objective of the Act is to make provisions for protection of the interest of consumers and to establish consumer protection councils and other authorities for the settlement of consumers' disputes.

The following types of matters are dealt with by the Consumer Protection Act :

1. Any defect in the goods bought by any person ;
2. Any deficiency in th services provide ;
3. Excessive price charged by any for any goods ;
4. Any loss or damage cause to a person as result of any unfair trade practice adopted by any trader.

9.5.2.1 <u>Defective Goods</u>

Any grievance arising out of any defect in goods can be redressed under the Act. Defect means any fault, imperfection or short coming in the quality, quantity, potency, purity or standard which is required to be maintained by or under any law, such as the Bureau of Indian Standards Act, 1986 Agricultural Produce (Grading and Marketing) Act, 1937 or the Drugs and Cosmetics Act, 1940 or as claimed by the trader in any mann-r.

9.5.2.2 Deficient Service

A service will be considered deficient when it has any fault, imperfection, shortcoming or inadequacy in the quality, nature, and manner of performance which is required to be maintained under any law or has been undertaken to be performed by the person concerned.

The scope of the term service is very wide. It covers services of all types such as banking, financing, insurance, transport, processing, supply of electrical or other energy, boarding and lodging, entertainment, amusement or the dissimation of news or other information. However, two types of services are excluded : service provided free of charge and free provided as an employee.

Thus many of those undertakings which were exempted from the regulatory measures of the MRTP Act have been included in scope of the Consumer Protection Act. These undertakings include State Electricity Boards, State Transport Corporations, Housing Boards, Railways, Telecommunication organisations, Banks, Life and General Insurance Corporations and Consumer Cooperative Stores. Now any consumer of these services can get his grievance redressed at the level of the appropriate consumer protection agency established under the Consumer Protection Act.

9.5.2.3 Excessive Pricing

Complaints of charging excessive prices for the goods are quite common in India. Consumer Protection Act has come handy for the common man. If any trader charges more than the price indicated on the label, package or any advertisement or fixed under any law, like the Essential Commodities Act, he can be made accountable and got

hauled up by the aggrieved buyer.

9.5.2.4 Unfair Trade Practices

Although some regulation of unfair trade practices is provided under the MRTP Act, but it was found that the measures there were inadequate and often ineffective because of blanket exemption granted to public sector undertakings, cooperatives societies, etc.

The meaning of unfair trade practice used in the consumer Protection Act is the same as used in the MRTP Act. The only difference in the provisions of the two acts for the regulation of unfair trade practices is that the unfair trade practices indulged in by large and dominant undertakings will continue to be governed by the MRTP Act. In other words, the unfair trade practices of undertakings other than the large and dominant undertakings can now be controlled either by the MRTP Commission or the consumer protection commissions/forums set up under the Consumer Protection Act.

Who can make a complaint ?

The complaint before the consumer protection agency concerned can be filled by any of the following :

1. any consumer ;
2. any recognised consumers' association ; and
3. the Central Government or any State Government

Enforcement Machinery

The machinery provided for the enforcement of regulatory measures of the Consumer Protection Act is a three-tier one - set up at the District, State and the National levels. These bodies are known as :

1. District Consumer Disputes Redressal Forum - (set up for each district).
2. State Consumer Disputes Redressal Commission (for each state).

3. National Consumer Disputes Redressal Commission ;
   (at the apex level).

The District Forum entertains the complaints involving claims of loss [illegible] including the price of the product and the compensation claimed.

The State Commission handles cases involving a claim of any amount between Rs.one lakh and ten lakhs.

The cases of claims exceeding Rs. Ten lakh go to the National Commission. These Commissions and Forums are statutory and high-powered bodies enjoying status of special types of courts. They work like civil courts. The orders passed by them have the backing and force like that of a court order.

If the District Forums/State Commission/National Commission is satisfied that the goods complained against suffer from the defect specified in the complaint or any of the allegations against the services are proved, it is empowered to direct the opposite party as follows :

a) to remove the defect concerned
b) to replace the goods with new goods
c) to return to the complainant the price of the product or the charges of the services
d) to pay such amount as may be awarded as compensation to the consumer for any loss or injury suffered by him.

Thus, the Consumer Protection act provides for the speedy, inexpensive and convenient redressal of consumer disputes.

9.5.3 Marketing of Drugs & Cosmetics in India

In order to protect the consumer against the unscrupulous and unethical practices of manufacturers and dealers of drugs and cosmetics, special legislative measures have been

provided in India. These provisions are contained in the Drugs and Cosmetics Act, 1940. The main objective of the Act is to prevent the supply of sub-standard drugs and cosmetics for [illegible] standards of medical and health care.

The Act lays down the standards of quality for drugs and cosmetics. The act prohibits the import of (i) any drugs or cosmetics which is not of standard quality of (ii) any misbranded, adulterated drug and cosmetics. Similarly, the standards of quality have been laid down for the manufacture, sale and distribution of drugs and cosmetics. Manufacture, sale, and distribution of sub-standard misbranded, adulterated and spurious drugs and cosmetics is prohibited.

No person is allowed to manufacture, sell, stock, exhibit or distribute any patent or proprietory medicine unless there is displayed on the cabel or container the true formula or list of active ingredients contained in it, together with their quantities. Moreover, the information relating to the date of manufacture, batch number, maximum retail selling prices and direction for storage and use and necessary warning of dangers of improper use should also be given. For specified drugs, the date of expiry of use should also be indicated.

Furthermore, a license is required to manufacture, sell, stock, exhibit or distribute any drug or cosmetics.

The Inspectors appointed by the Central Government or a State Government have been given wide powers to inspect the premises and take samples of a drug or cosmetic.

Several penalties are imposed for offence under the Act.

9.5.4 The Prevention of Food Adulteration Act, 1954

In their greed t maximiz their profits some unscrupulous and dishonest manufacturers can stoop so low as to adulterate the food articles with spurious substandard or even inedible foreign matter. Such practices are sought to be prevented and controlled through the law. The relevant legislation is preventi ... Adulteration Act (PFA) 1954.

No person is permitted to manufacture for store or distribute any adulterated food, any adulterant, or any article of food for the sale of which is prohibited by the Food Health Authority in the interest of public health. Similar restriction has been imposed on importing any adulterated food or any article of food in contravention of the provisions of the Act.

The Act also provides for the analysis of foods articles through a public analyst who is appointed by the Central Government. Food inspectors have been empowered to take samples of any food article from any seller and send it for analysis to the public analyst. He can also prohibit the sale of any food article in the interest of public health with the prior approval of the local (Health) Authority. If the Local (Health) Authority is satisfied that the food article is unfit for human consumption, it may get the same destroyed after giving due notice to the vender.

The adulterated food can be forfeited or got destroyed Moreover, the person concerned shall be prosecuted.

No manufacturer or distributor or dealer in any food article is permitted to sell such article to any vendor unless he gives a warranty in writing about the nature and quality of each article.

The violation of the provisions regarding the prevention of food adulteration is punishable with imprisonment and fine.

9.5.5 The Standards of Weights and Measures Act, 1976

The basic objective of the Standards of Weights and Measures Act, 1976 is to establish standards of weights and measures to regulate the inter-state trade or commerce in weights, measures, and other goods which are sold or distributed by weight, measure or number. The major consumer protection measures under this Act are as follows :

(i) Establishment of standards of weights and measures :

Every unit of weights and measures is to be based on the units of metric system.[1] The various base units of weights and measures have been specified, e.g., metre for length, kilogram for mass, second for time, and ampere for electric current. The use of non-standard weights and measures has been prohibited.[2]

With the introduction of the metric system of weights and measures, it has become easier even for the average consumer to understand the various units of weights and measures and to make quick calculations while having dealings with dealers/distributors and thereby saving himself from the unscrupulous traders.

(ii) Verification and stamping of the weights and measures :

All the units of weights and measures are periodically verified to conform to the standards established under the Act and are stamped by appropriate authority. This is intended to provide further protection to the interest of the consumer by curbing the activities of unscrupulous or negligent dealers, who may resort to under-weightment and short-measuring.

---

1. Section 4(1)   2. Section 21

The Director and the Inspector appointed under the Act have been empowered to enter, at any reasonable time, into any premises, and to search for inspect, and size any weight, measure or goods, subject to inter-state trade and commerce, and any relevant record, register or other document.[3]

(iii) Forfeiture of false or unverified weight and measures:

Every false or unverified weight or measure and every false package used in relation to any inter-state trade or commerce and seized under the Act is liable to be forfeited to the Government. However, such unverified weight or measure shall not be subject to forfeiture if the person concerned gets the same verified and stamped within the prescribed time.[4]

(iv) Prohibition of quotation, non-standard units of weights, and measures :

In the course of inter-state trade or commerce, the following have been prohibited, unless they are in accordance with the standard unit of weight, measure or numeration :

a) quoting or making announcement of any price or charge ;
b) issuing or displaying any price list, invoice, cash-memo or other document ;
c) preparing or publishing any advertisement, poster, or other document ;
d) indicating the contents of any package either on itself or on any label, carton or other thing ;
e) indicating the contents on any container ; and
f) expressing any quantity or dimensions.[5]

---

3. Section 29 4. Section 30 5. Section 33

The Contravention of any of the above provisions entails a punishment with fine upto [illegible] thousand rupees. In the case of the second or any subsequent offence, the punishment provided is the imprisonment for a term of upto 3 years in addition to fine.[6]

(v) <u>Conditions Governing the sale of commodities in packaged Form</u> :

a) Every manufacture, distributor or dealer of any commodity, which is sold in packaged form, is required to declare conspicuously in the prescribed manner the following particulars :

1. the identity of the commodity in the package ;
2. the net quantity, in terms of the standard unit of weight or measure, of the commodity in the package ;
3. where the commodity is packaged or sold by number, the accurate number of the commodity contained in the package ;
4. the sale price per unit of the commodity in the package; and
5. the sale price of the package.

b) Every package must bear the names of the manufacturer and the packer or distributor.

c) The statement on the package or the label regarding the net weight, measure or number of its contents, must not include any expression which tends to qualify the weight, measure or number. However, the Central Government may, by rules, specify the commodities, the weight or measure of which is likely to increase or decrease beyond the prescribed tolerance limits by reason of climatic variations. In such a case, the manufacturer can qualify the statement regarding the net content of the commodity by the use of the words " when packed".

Unless specified exemption has been granted specifically

6. Section 56

by the Central Government, no one is permitted to use the words " when packed " while indicating net weight.

d) Where the Central Government has reason to believe that ... undue proliferation ... weight, measure or number in which any commodity is being packed for sale, distribution or delivery and such undue proliferation impairs the reasonable ability of the consumer to make a comparative assessment of the prices after considering the net quantity or number of such commodity, the Government may direct the manufacturers, packers or distributors to sell or distribute or deliver the commodity in the prescribed standard quantity or number.

e) Whenever the retail price of a commodity in packaged form is stated in any advertisement, the advertisement must include a conspicuous declaration regarding the net quantity or the number of commodity contained in the package and the retail unit sale price.

f) No person is permitted to sell a package containing a commodity which is filled less than the prescribed capacity of the package except where it is proved that the package was so filled with a view to :-

a) giving protection to the contents of the package, or
b) meeting the requirements of machines used for ... the contents of such package.

g) The Central Government is empowered to specify ... variations in the net contents of the commodity in a package which may be caused by the method of packing or the ordinary exposure which may be undergone by such commodity after ... introduced in trade or Commerce. The Central Government may also exempt any class of commodities or packages from ... requirements.

The failure to comply with any of the above ... is punishable with fine, which may extend to five thousand rupees.

9.5.6 <u>Essential Commodities Act</u>

One of the major problems before consumers in India is presented by the situation of spiralling prices and continuous shortage of certain essential commodities, like edible oils, vanaspati, petrol, kerosene, sugar, tea, soaps, cement, steel and paper.

The legislative measures for overcoming the problem of shortage of essential commodities and their rising prices are contained in the Essential Commodities Act, 1955. The Act is intended to provide for the control of production, supply and distribution of, and trade and commerce in essential commodities with a view to safeguarding the interests of the general public.

The commodities which have been defined as essential commodities under section 2(a) of the Act are as follows :

1) Cattle fadder, including oilcakes and other concentrates ;
2) Coal, including coke and other derivatives ;
3) Component parts and accessories of automobiles ;
4) Cotton and Woolen textiles ;
5) Drugs (as defined under section 3(b) of the Drugs and Cosmetics Act, 1940) ;
6) Foodstuffs, including edible oilseeds and oils ;
7) Iron and steel, including manufactured products of iron and steel ;
8) Paper, including newsprint, paperboard and strawboard
9) Petroleum and petroleum products ;
10) Raw cotton, whether ginned or unginned, and cotton-seed ;
11) Raw jute ;
12) Any other class of commodity, declared by the Central Government as an essential commodity.

Under this provision, a large number of commodities have been declared as essential commodities by the Central Govt. such as drycell batteries, babyfoods, etc.

The interest of the consumer is sought to be protected under the Act by way of certain regulatory measures applicable to the production, supply and distribution of essential commodities. The major provisions relating to consumer protection are as follows :

i) Availability and equitable distribution of essential commodities (Sec 3(1) and 3(2);

ii) Fixing of Prices of essential commodities acquired by the Govt. (Sec.3(3);

iii) Regulation of Prices of foodstuffs for sale to general public (Sec.3(3A) ; and

iv) Appointment of authorised controller for undertakings producing or supplying essential commodities (Sec. 3(4) .

9.5.6 : Availability and Equitable Distribution of Essential Commodities :

If the Central Government considers it necessary for maintaining or increasing supply of any essential commodities, or or securing their equitable distribution and their availability at fair prices, it may provide for regulating or prohibiting the production, supply and distribution thereof and commerce therein.

In particular, the Government order may provide for the following :

a) Regulating by licences, permits or otherwise, the production or manufacture of any essential commodity.

b) Controlling the Price at which any essential commodity may be bought or sold.

c) Regulating by licences, permits or otherwise, the storage, transport, distribution, disposal, acquisition, use or consumption of any essential commodity ;

d) Prohibiting the with holding from sale of any essential commodity ordinarily kept for sale ;

e) Requiring any person holding in stock or engaged in the production or in the business of buying or selling of any essential commodity to sell the quantity held in stock or produced by him to the Central Govt. or a State Govt. or any other specified officer ;

f) Regulating or prohibiting any Transactions relating to food stuffs or cotton textiles, which are deterimental to the public interest ;

g) Making entry, search or examination in respect of the following :

1) Any article in respect of which there is reason to believe that a contravention of the order has been made ;

2) Any aircraft, vessel, vehicle or other conveyance etc; used in carrying such articles, it there is reason to believe that the conveyance concerned is liable to be forfeited.

This is one of the most substantive provisions of the Act and gives wide powers to the Central Government. A number of orders have been issued by the Central Govt. from time to time as also by state govts. under the authority delegated to them under the Act.

9.5.6.2 Fixing of price of Essential Commodities being acquired by the Government :

The broad principles governing the payment of prices for the commodities acquired by the Central Govt. of any State Government are spelt out under the Act. The Government concerned has the descretionary powers in the matters relating to the fixation of price of an essential commodity when it is acquired by the Government. In such cases, the seller shall be paid the price of the commodity in the following manner :

a) Agreed Price : Where the price can be agreed upon by the Government and the seller, consistantly with the controller price, if any, fixed under this section, the agreed price is to be paid.

b) Controlled Price : Where no agreement as to the price is reached ; the price calculated with reference to the controlled price is to be paid.

c) Market Price : Where there is neither an agreed price nor a controlled price, the price calculated at the prevailing market rate is to be paid.

d) Regulation of Selling Prices of Food Stuffs : The Central Government has been empowered to regulated the selling prices of foodstuffs in any locality. This can be done when the Central Government is of the opinion that it is necessary so to do for controlling the rise in prices, or preventing the hoarding, of any foodstuff in the locality. The prices shall be determined in accordance with the provisions of section 3(3A) of the Essential Commodities Act, 1955.

The basis of price fixation in this case will be the same as in the case of procurement of essential commodities by the Central Govt. except that of the market price. The

Market Price in this case shall be calculated with reference to the average market rate prevailing in the locality during the period of 3 months immediately preceding the date of the notification. Such an average market price prevailing in the locality shall be determined by an officer duly authorised in this behalf with reference to the publishing in the figures of the prevailing market rate in respect of that locality or of a neighbouring locality. The market rate so determined shall be final and cannot be questioned in any court of law.

Section 3(3B) of the Act provides for the fixation of price for foodstuffs and edible oils acquired by the Government. Similarly, the rules relating to the fixation of fair price of sugar payable to the producer have been made under section 3(3C).

The purpose behind this provision is four- fold :

i) To provide an incentive to increase the production of sugar.

ii) To encourage the expansion of the industry.

iii) To enable the cane producers to share profits of the industry through the cane prices higher than the minimum prices fixed ; and

iv) To secure distribution of reasonable quantity of sugar to customers at fiar prices.

9.5.6.3 <u>Appointment of Authorised Controller for supplying Essential commodities</u> :

Where the Government is of the opinon that it is necessary so to do for maintaining or increasing the production and supply of an essential commodity, it may authorise any person to exercise necessary functions of control in respect of any undertaking engaged in the production and supply of the commodity.

An order made by the Government is relation to the foregoing matters shall have effect notwithstanding any thing inconsistent therewith, contained in any enactment other than this Act or any instruments having effect by virtue of any enactment other than this Act. Thus, an order issued by the Government under the Essential Commodities Act shall override any other law.

Penalty

The contravention of the above mentioned Government orders is punishable with fine and imprisonment upto one year. Moreover, any property in relation to which the order has been contravened alongwith the package and the vehicle, etc., shall be forfeited to the Government.

In order to prevent repetition of contraventions of regulatory provisions, the court is empowered to direct that the person repeatedly contravening the provisions for the control of production, supply, and distribution of essential commodities shall not carry on any business in essential commodities for a period of at least six months

Penality has also been provided for making of false statements or furnishing of false information. In case of offences by a company, the person incharge of the services shall be held liable for contravention of the order concerned unless he proves that the contravention took place without his knowledge or that he took all due measures to prevent such contravention.

Offences under the Act are cognizable. The Act also provides for summary trial.

9.6 Summary

Marketing and society has close interaction. If marketing is given credit for its social benefits and at the same time it is accused of its evil affects on the society and disregard for the consumer and the society. The neglect of consumer and society has led to the growth of consumerism which is reflected in the emergence of voluntary consumer associations and a number of legislations enacted by Indian Parliament, most significant among them being the Consumer Protection Act, 1986, the MRTP Act, 1969 the Prevention of Food Adulteration Act, 1954, the standards of Weights & Measures Act, 1976 the Drugs and Cosmetics Act, 1940 and the Essential Commodities Act, 1955.

9.7 Review Questions

(a) Short-answer type questions

1. List the major criticisms against marketing.
2. Name the major central legislations which regulate marketing activities.
3. Name four consumer protection bodies set up under law.
4. Name the five types of trade practices which are termed unfair trade practices.
5. Name the four grounds (bases) on which the MRTP Commission can initiate an enquiry into a restrictive trade practice.
6. Name any five commodities, which are designated as essential commodities.

(b) Essay-type questions

1. "Marketing has profound impact on society ". Do you agree ? Discuss.
2. Explain the legislative measures for control of marketing activities in India.
3. Analyse and explain the recent consumer protection measures introduced in India.

4. Explain how the consumer is sought to be protected from unscrupulous business practices of food, drugs & cosmetics industry.

5. Explain the role of the MRTP Commission in the protection of consumers.

(c) Project Work

Carefully check a few advertisements of consumer products appearing on TV and in newspaper. Suppose after one such product you find that you have been misled or deceived by the advertiser in so far as the quality of the product was faulty and had manufacturing defect leading to accident or injury.

Write a complaint addressed to the President of the Consumer Disputes Redressal Forum of your district, stating clearly what remedy you are seeking.

Appendix I NCERT Revised Syllabus for the paper I, Class XI (First year) 'Elements of Marketing'.

COURSE CONTENT.

CLASS XI [illegible]

PAPER I [illegible] MARKETING

Unit 1 : Introduction : Nature and scope of Marketing ; Importance, Functions, Difference between Marketing and Selling ; Marketing concept (including societal approach) ; Customer orientation in the context of sales operations.

Unit 2 : Selling in the In[illegible] : [illegible] characteristics of the Indian Marketing Environment - economic, social [illegible] factors ; Consumerism, challenges of change in [illegible] environment [illegible] for demand creation [illegible] the context of emerging buyers' market situation ; Characteristics of consumer, industrial and [illegible].

Unit 3 : Marketing [illegible] ting mix, product classification [illegible] goods, convenience, shopping and speciality goods etc; Branding Packaging; Concept of Product Life Cycle; Physical Distribution - Warehousing, Transportation; Pricing - Setting prices in practice; Promotion - Importance and difference between various promotional tools.

Unit 4 : Channels of Distribution : Importance of Distribution [illegible] Meaning and Function of Channels of distribution, Channels [illegible] for consumer and industrial goods, Role of middlemen ; Types of middlemen.

Unit 5 : Marketing Information : Importance of marketing information; sources and methods of collection of data regarding sales, competitive situation, prices, promotion

4. Exercises in identifying distinguishing features of the packages (containers) of few competitive brands of consumer products followed by [illegible] discussion on their plus and minus points, [illegible] suggestions for improvement, if any.

5. Students may be required to observe important features of the sales promotion schemes (such as sales contests, free gifts, coupons, economy packs, special discounts etc.) being run for some consumer product in the market, by visiting the market/scanning the advertisements in newspapers/Radio/TV.

6. Pupils may be asked to observe different ways in which a given product (of their choice) is being promoted in the market. This may be followed by a [illegible] discussion on the subject.

7. Collection of data on prices ; customers' [illegible] (age, occupation religion, education, income, social background etc.) in respect of some of the competitive brands of specified product (say [illegible] soaps, cigarettes, tea leaves, etc.) with the help of questionnaire administered to a select number of retailers/consumers.

Appendix II

Workshop for the Development of Text Book in the area of Marketing and Salesmanship held at Udaipur, from 20-27 January, 1990.

....

List of Participants

01. Dr.R.K.Grover
50, Vaishali
Pritam Pura, Delhi.

02. Prof. R.K.Kulkarni
" Ram Prasad " Tarwale Nagar
Dindri Road, Nasik - 422 004.

03. Dr.B.P.Singh
Professor, Deptt. of Commerce
Delhi School of Economics
Delhi University, Delhi- 110 007.

04. Dr.D.P.S.Verma
Reader, Deptt. of Commerce
Delhi School of Economics
Delhi University, Delhi-110 007.

05. Mr.Ravi Shankar
Associate Professor
Indian Institute of Mass Communication
Shaheed Jeet Singh Marg
J.N.U.Campus, New Delhi- 110 067.

06. Mr.Harsh Vardhan Verma
Lecturer
Faculty of Management Studies
South Delhi Campus
University of Delhi, Delhi-110 021.

07. Dr.P.K.Srivastava
Associate Professor
Department of Business Administration
Faculty of Commerce and Management Studies
M L Sukhadia University, Udaipur, India.

08. Dr.P.K.Jain
D.A.V.College, Delhi University
Mohan Nagar, Delhi.

09. Dr.[illegible]K.[illegible]
Dean and Head
Department of Commerce and Management Studies, Sukhadia University, Udaipur
Rajasthan.

10. Dr.Davinder K. Vaid
Reader in Commerce, DVE, NCERT
New Delhi- 110 016.

Questionnaire for Collecting Opinion of Teachers, Experts and Students on the Textbook on 'ELEMENTS OF MARKETING'.

Dear Teacher/Expert,

We are happy to place Volume II of the textbook on 'Marketing and Salesmanship' at your disposal with the hope that it will help your students acquire needed [illegible] the vocation of salesmanship.

The book has been developed according to the revised NCERT syllabus of 19[illegible]. As this is an experimental edition, we intend to get your feedback on various aspects. For this purpose, two questionnaires are appended. You are requested to send your opinion for the improvement of the book by filling the first questionnaire yourself and mailing it to us at the following address. Also [illegible] is a questionnaire for the students. You are requested [illegible] student who are undergoing their training in this course. Additional sheets of paper may be used if the space provided for is insufficient.

Dr. Davinder K. [illegible]
Reader in Commerce
Department of Vocationa-
lization of Education
National Council of [illegible]
Research and Training
Sri Aurobindo Marg
New Delhi-11001[illegible]

II. Views about the book

7. (i) Do you feel the present book [illegible] useful purpose ? Yes/No.

(ii) If yes, please mention in what respect is it helpful to yourself and to the students.

(iii) a. Would you like to recommend this book to your students ? Yes/No.

b. If 'no' please give reasons.

8. What is your opinion about the language of the book? Please tick the appropriate.

(a) It is simple and easily understood.

(b) It is difficult for the students to understand themselves.

(c) It is OK but there is a scope for [illegible] (please specify).

9. Which chapter of the book do you like the most ? Please specify and give reasons.

10. Which chapter of the book do you like the least ? Please specify and give reasons.

11. Did you notice any concept/expression/ sentence which do not carry precise meaning or which needs further elaboration ? If yes, please give details.

Page No.	Expression/Sentence	Suggestion

12. Do you feel the contents of the book give adequate 'knowledge' to the students in the area of 'salesmanship'. Yes/No

If 'No', give the chapters which need modifications/ thorough revision (Please give detailed suggestions).

Chapter/Page No.	Suggestions

13. Would you like any chapter to be included in the book or excluded from it? Please specify.

14. Did you notice any inaccuracies/discrepancies in the diagrammes/illustrations given in any chapter of the book ? Please mention.

Page No.	Suggestion

15. Please give your overall opinion and suggestions about the book for its improvement.

16. i. Would you like to be associated with the improvement/modification of this book ? Yes/No

ii. If yes, please specify in what way would you like to be associated ?

(a) Revising/rewriting a chapter Yes/No

(b) Improving diagramatic presentation/illustrations (If yes, please specify the chapters). Yes/No

(c) Translation of the book in local language. Yes/No

(d) Any other way (Please specify).

4. Which chapter(s)/concept(s) explained in the book do you feel are too concise and should be described in greater details ? Please mention.

Chapter	Suggestion

5. Which other chapters do you feel need improvement ? Please specify.

Chapter	Suggestion

6. What is your opinion about the language [illegible] k in general ? Please tick the appropriate.

   i. It is simple and un[illegible] ;

   ii. It is difficult for the students to understand themselves ;

   iii. It is OK but there is a scope for improvement.